



लोक साहित्य विमर्श

डॉ० स्वर्णलता

चम्पालाल राँका एण्ड कम्पनी
किताब महल, चौडा रास्ता
जयपुर-302003

प्रकाशक

रत्न स्मृति प्रकाशन
बोकानेर

© डॉ० स्वर्णलता

वितरक

चम्पालाल राँका एण्ड कम्पनी
किताब महल, धामाली मार्केट -
चौडा रास्ता, जयपुर-3
फोन 75241

मुद्रक

राजेश कम्पोजिंग सेंटर एव स्वदेश प्रिंटर्स
बेलीपाडा, चौडा रास्ता, जयपुर-3

प्रथम संस्करण

26 जनवरी, 1979

मूल्य

बीस रुपया

अतरंग

(अ) अपनी धात—डॉ० स्वएलता	4
(ब) आमुष—डा० सत्येद्र	7
1 नाक-साहित्य और जनजीवन	9
2 नाक साहित्य और शिष्ट साहित्य	13
3 लोक-साहित्य की विधाएँ	18
4 लोक मस्कृति	24
5 नाक-कला	28
6 नाक-कथा	39
7 लोक-गीता का वर्गीकरण	43
8 राजस्थानी लोक गीता की भाँकी	48
9 राजस्थानी लोक-गीता में सगीत	64
10 धर्म परिहार सम्बन्धी राजस्थानी गीत	72
11 राजस्थानी लोक-गीता में साम्प्रतिक अभिव्यक्ति	82
12 राजस्थानी लोक गीतों में कलात्मक मूल्य	89
13 राजस्थान के लोक-नाट्य	104
14 जीविकाप्राप्त सम्बन्धी राजस्थानी लोक गीत और नृत्य	109
15 राजस्थान के लोक देवता	117
16 राजस्थान के सस्वार सम्बन्धी गीत	131
17 राजस्थान के लोक-नाट्य	147
18 लोक-साहित्य के कुछ प्रन्वयक एवं समीक्षक	153

अपनी बात

लोक-साहित्य लोक की वस्तु है। वह लोक की ही भावनाओं और चेतनाओं को लेकर प्रकट होता है। शिष्ट साहित्य की संस्कारिता से उसका सुयोग हान पर उत्तम राष्ट्रीय साहित्य तयार हो सकता है।

जब से मानव हृदय सुख दुःख की अनुभूतियाँ को शब्दों द्वारा व्यक्त करने में समय हुआ तभी से इस साहित्य की सृष्टि होती रही है—इसकी धारा अविच्छिन्न गति से प्रवाहित होती हुई सबत्र व्याप्त हो चुकी है—शिष्ट साहित्य पीछे की वस्तु है।

लोक-साहित्य महामहिम मौखिक परम्परा का प्रतीक है। इस साहित्य का समूचे रूप से अध्ययन करने पर निष्कप निकलता है कि जब मानव प्राकृतिक जीवन व्यतीत करता था अर्थात् जीवन में कृत्रिमता का प्रवेश नहीं अथवा कम हुआ था उस समय मानव जीवन में सघन काम था, नैसर्गिक प्रवाह अधिक व्यक्तिगत एवं भिन्नता के स्थान पर सामूहिक भावना और समरसता का आधिपत्य था। एक भारत नहीं विश्व के सारे देश और उनके अनेक जन-पद इस प्रकार की प्रकृतिक जीवन स्थिति के युग से गुजर चुके हैं। किसी भी देश के जीवन की पृष्ठभूमि में मौखिक परम्परा के अतीत को छूनी हुई और घटती की आस्था में बँधी हुई गाथा सुनकर हम आनन्दित होते हैं। इस गाथा में प्रत्येक व्यक्ति समूचे कुटुम्ब जाति या राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता दृष्टि आता है। अतीत में उस मानव के जीवन की शान्ति और सुख-समृद्धि के सम्मुख वर्तमान उन्नत युग का सिर भुङ्कन लगता है जबकि जीवन में अतुल्य सघन और क्लेश के बादल छाये दृष्टि होते हैं कृत्रिम साधनों से उत्पन्न जीवन-यापन की सुख-भुविधाओं के साथ असंतोष और पारस्परिक बमनस्य की भाँग से प्रेम के सम्बन्धों को क्षीण करके मानवीय भावनाएँ विलुप्त होनी लगी और आवश्यकताओं के बढ़ जान से तीव्रतर असन्तोष अभाव और भुखमरी मच रही है।

इस प्रकार आधुनिक युग की विडम्बनाओं से मुक्ति पान के लिये लोक-साहित्य के विविध रूपों का पठन पाठन चित्रण और उसमें वर्णित आस्थाओं मान्यताओं और सांस्कृतिक भावनाओं पर मन को टिकाना अनि महत्त्वपूर्ण है।

आदि मानव की अमूल्य निधि

लोक-साहित्य का अध्ययन करना मनुष्य के अन्तर्भूत की स्वाभाविक माँग है। लोक-साहित्य में लोक-संस्कृति की भाँकी मिलती है, और जनमानस की प्रकृत भावनाओं, स्वाभाविक आवेग उल्लास का यथार्थ स्वरूप हम इसी साहित्य में मिलता है। पिछले कुछ वर्षों से भारतीय मनोपी एवं विश्व के अन्य देशीय विद्वानों का ध्यान लोक-साहित्य के विविध रूपों की शोध, समीक्षा तथा शैक्षणिक प्रवर्धन की ओर विशेष आकर्षित हुआ है, जिसके फलस्वरूप यद्यत् विविध आदि मानव की इस अमूल्य निधि के निरन्तर अग्रगण्य प्रकाश में आ रहे हैं।

मैंने भी गुरु तुल्य भूषण विद्वानों की प्रेरणा से लोक-साहित्य के एक घग राजस्थान के लोक-गीता की अपनी शोध का विषय चुना जिसके अध्ययन पर राजस्थान विश्वविद्यालय ने मुझे पीएच० डी० की उपाधि प्रदान की। तत्पश्चात् मेरी लोक-साहित्य के अध्ययन की जिज्ञासा उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। शोध प्रथम में समर्पित विषयों की ओर अधिक गहराई तथा व्यापक रूप से समझने एवं लोक-साहित्य के अन्य अंगों का भी पर्यवेक्षण करने की जिज्ञासा बलवती होती गई। इस जिज्ञासा की पूर्ति हेतु लिखे हुए कतिपय निबंधों का सफल लोक-साहित्य विमर्श रूप में साहित्य प्रेमी विद्वानों की सेवा में प्रस्तुत करते हुए मुझे अति प्रसन्नता है।

इस सफल में लोक-साहित्य, लोक-संस्कृति और लोक-कलाओं सम्बन्धी सामान्य ज्ञान समर्पित करना मेरा लक्ष्य रहा है। लोक शब्द इनका विशाल और अर्थ गाम्भीर्य से पूर्ण है कि तत्परिपक्व साहित्य के विविध अंगों और उपायों का सम्यक् अध्ययन, समीक्षा एवं उन्मेष निबंधों में बाँधना अति दुर्लभ प्रयास होगा—फिर भी मैंने अपनी तुच्छ बुद्धि की पहुँच के अनुरूप इन निबंधों द्वारा मानवीय भावनाओं का विकास में लोक-साहित्य का महत्त्व शिष्ट-साहित्य से लोक-साहित्य का भेद, लोक-साहित्य के विविध रूपों का परिचय लोक-संस्कृति एवं लोक-कलाओं के स्वरूप को चित्रित करते हुए मानव जीवन को सरल, सुरम्य और सुखद बनाने में इनका योगदान आदि पक्षों का प्रकाश में लाने का दुस्साहस किया है। साथ ही विवेचक राजस्थान के लोक-गीता, लोक-नाट्य, संगीत में प्रयुक्त वाद्य यंत्रों तथा लोक देवी-देवताओं पर निबंध लिखकर भारत के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा यहाँ के लोक-साहित्य की विधाओं और लोक-संगीत आदि की विशिष्टता प्रतिपादित की है। लोक-संगीत में प्रयुक्त वाद्य यंत्रों के संक्षिप्त वर्णन में लोक-कलाओं की स्वाभाविकता और आडम्बर-विहीनता का परिचय मिलता है।

लोक-साहित्य लोक-संस्कृति एवं लोक-कलाओं की दृष्टि से भारत विश्व भर में अपना अनुपम स्थान रखता है और भारत में राजस्थान विशिष्ट है—राजस्थान का लोक-जीवन में निराला, रंगीला भक्तीतापन तथा महा के जन-मानस का अद्भुत

उत्साह व उत्सास पाया जाता है और मरा अध्ययन भी बिनापकर राजस्थानी लोक-साहित्य पर रहा। अनएव इस प्रवेश व लाव गीता एव कलाभा व संगीत भाषि पणा पर भी निबन्ध समर्पित विय गय है। राजस्थान के जन-जीवन म व्याप्त दवी-वताभा का प्रमुख स्थान है अत यहाँ के लान दवी-वताभा का सामाय परिचय उन पर रच हुए लाव गीता सहित दना भी उचित समभा गया।

लाव साहित्य के धनवर्ती परम श्रद्धेय डॉ० सत्यद्व न इन निबन्धा को लिखने म जिस गुरुत्व स्नह स मुझे निवेशन प्रदान विया और अपन अनन्त ज्ञान पूरा भाशीवचन स इन तुच्छ पुस्तक को महत्वपूरा बनाया इसके लिय मैं अतमन स गुरु भक्ति रूप म उनका नमन करती हूँ।

भारतीय लोक-कला मण्डल स प्रकाशित जिन भाषा एव पत्र-पत्रिकाभा से लाभाचित हाकर मेरे इन निबन्धा की पूर्ति हुई तदनिमित्त मण्डल व अधिष्ठाता लाव-कला ममज्ञ डॉ० देवीलाल सामर के प्रति आभार प्रकट करना मेरा पुनीत कर्त्तव्य है। साथ ही उन विद्वान् सखका व प्रति भी अनुगृहीत हूँ जिनके प्रय भयवा पत्र-पत्रिकाभा म प्रकाशित विचार सामग्री स मैं लाभ उठाया।

मरी अल्पजनावश रह अभावा और घुटिया के लिय क्षमा याचना करती हुई इस भाशा स अपने इस तुच्छ प्रयास का गुरु तुल्य विद्वज्जना को समर्पित करती हूँ कि इन निबन्धा के अध्ययन से प्राप्त विषय का सामाय ज्ञान साहित्य प्रमी युवा पीढ़ी को प्ररित करके लोक-साहित्य के विविध पणा के अधिक गम्भीर अध्ययन, चिन्तन और मनन के लिय भाग प्रशस्त करेगा।

कार्तिक सुनी पूर्णिमा
सन् 2035

—स्वएलता

आमुख

डॉ० श्रीमती स्वर्णलता अग्रवान राजस्थान की जानी-मानी शिक्षा जगत की एक हस्ती हैं। उन्होंने अपना पूरा जीवन शिक्षा क्षेत्र और समाज-सेवा के लिये समर्पित कर दिया है। ये शिक्षा शास्त्री हैं, अभी कुछ वर्ष पूर्व ही बीकानेर के राजकीय महाविद्यालय के प्राचार्या के पद से अवकाश ग्रहण किया है। ये शिक्षा शास्त्री ही नहीं, सुनारिका भी हैं। इनकी कई पुस्तकें प्रकाश में आ चुकी हैं। 'लोक-साहित्य की तो ये विष्णुपत्नी हैं इन्होंने बहुत-बहुत ही राजस्थानी लोक गीतों पर अनुसंधान करके पीएच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। इनका यह शोध प्रबंध दो भागों में राजस्थान साहित्य अकादमी उत्तरपुर से प्रकाशित हो चुका है। इस प्रकार इन्होंने लोक-साहित्य के अनुसंधान क्षेत्र में यश प्राप्त किया है। अपने यश को बनाए रखने के लिये ये निरंतर ही प्रयत्नशील रहती हैं। उसी का सुन्दर फल आज इस पुस्तक के रूप में हमारे हाथ में है।

इस पुस्तक का नाम है 'लोक साहित्य विमर्श'—यह लोक-साहित्य सम्बन्धी विविध पन्ना पर डॉ० स्वर्णलता के विचारपूर्ण निबंधों का संग्रह है। उसमें इनके अपने पहले लोक साहित्य विषयक अनुसंधान में आगे के चिन्तन का प्रतिफल है। 'लोक-साहित्य और जन जीवन' में आपने सिद्ध किया है कि लोक-साहित्य का जन-जीवन में शाश्वत सम्बन्ध है। 'लोक-साहित्य और शिल्प-साहित्य' शीघ्र निबंध में ये पक्षियाँ प्रकटित करती हैं—अनेक प्रकार से लोक-साहित्य और शिल्प-साहित्य में भेद हान हुए भी दोनों में आदान प्रदान रहता है।

एक अध्याय 'लोक-साहित्य की विधाएँ' विषयक भी है। इस छोट से निबंध में ये लोक साहित्य की समस्त विधाओं का सामिक परिचय करा सकी हैं। 'लोक-संस्कृति' में और गहर उतर कर इन्होंने यह स्तर प्रदान किया है

"ऐसी स्थिति में लोक-संस्कृति के अभ्युदय के परिप्रेक्ष्य के लिये हम नैतिक मोक्ष धारणाओं को ही अपनाता होगा, जिसमें नवीन संस्कृति लोक-संस्कृति के धरातल में विलग होकर सूरजमुखी का रूप में धारण करले।" क्योंकि संस्कृति का विभाण राजनीतिक अथवा व्यक्तिगत आकांक्षाओं के आधार पर नहीं किया जा सकता, लोकतन्त्र की भावना से किया जाता है।"

निश्चय ही ऐसे कथन इनके स्वस्थ विचारा और मायता का ही परिणाम हैं। प्रत्येक निबंध में तद्विषयक स्वरूप को स्पष्ट करता हुए और अन्य विद्वानों के प्रमाण से पुष्ट करते हुए इनके गभीर विचार यम्य हैं जो पाठक का भी चिंतन करने के लिये विवश कर देते हैं।

यही सीजियेन, लाव-कला' निबंध का य शब्द कितन नय-तुन किंतु कितन मामिक— लाव-कला की प्रवृत्ति सदा से नारी रूपा रही है। नम से शिख तक नारी के जीवन का सम्पूर्ण ताना-बाना सोव-कला के विविध रूपा—मह्नी, भाइणा, गोदनो, पहनावा आभूषणा, गीता, नृत्यो तथा नाना प्रकार की सांस्कृतिक परिक्ल्पनाया से युता गया है। तभी नारी का सारी कलाया की उपजीव्य माना गया है।”

इस पुस्तक में इनके केवल लाव जीवन और लाव-साहित्य के विविध पनीय सम्बन्धा की सद्धान्तिक चर्चा ही नहीं है राजस्थान के लाव-गीता के भी कितन ही मामिक पन्ना का उद्घाटन इन्होंने किया है। यह उद्घाटन सोलाहरण है अनुसंधान युक्त है और वज्ञानिक दृष्टि से है।

य सभी निबंध लाव-साहित्य के प्रेमियों अनुसंधानकर्त्ताया और अध्येताया के लिये उपयोगी हैं ही, इसमें सदेह नहीं। पर ये उन लोगो को भी पसन्दा आयेंगे जो अच्छी पुस्तका के पढने में रचि रखते हैं। इसमें ललित शली के साथ बहुत सी जानने योग्य बातें भी समाविष्ट हैं जिससे सामान्य ज्ञान भी बढ़ता है। ललिका की शली इसे अत्यन्त रोचक बना देती है, साथ ही बहुत-सी विचार करने योग्य सामग्री भी जुटा देती है। ऐसी पुस्तक प्रदान कर स्वणलताजी ने हिंदी साहित्य का समृद्ध किया है। अतः मैं आशा करता हूँ कि इस पुस्तक का हिंदी में हार्दिक स्वागत किया जायेगा।

लोक साहित्य और जनजीवन

लोक साहित्य के चक्रवर्ती डॉ० मल्लेन्द्र ने लोक साहित्य की परिभाषा करते हुए लोक शब्द के विभिन्न अर्थों पर प्रकाश डाला है। उनके कथनानुसार 'लोक' शब्द का अभिप्राय मनुष्य समाज के उस वर्ग से है जो अभिजात्य सत्कार, शास्त्रीयता और पाठित्य की चेतना अथवा अहंकार में शून्य है और जो एक परम्परा के प्रवाह में जीवित रहता है। ऐसी लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते हैं वे लोक तत्व कहलाते हैं।¹

लोक साहित्य का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। अत्यन्त प्राचीन, जगदी अभिव्यक्तियों में लंका शिष्ट साहित्य की सीमा पर पहुँचने वाली समस्त अभिव्यक्ति लोक साहित्य के अन्तर्गत आती है।

वस्तुतः जीवन की विविध अवस्थाओं का अनुभव या चित्रण साहित्य में होता है। लोक साहित्य इस काम के प्रतिपादन में सर्वश्रेष्ठ स्थान पर आसीन होता है क्योंकि लोक साहित्य में मानव हृदय का यथार्थ चित्र हमारे समक्ष उपस्थित हो जाता है। जीवन के निश्चल और स्वाभाविक रूप का दर्शन हमें लोक साहित्य में ही होता है। शिष्ट साहित्य में चित्रण प्रायः काल्पनिक एवं अतिरजित पाया जाता है। उमम विशाल मानव समाज के बहुत छोटे से व्यक्तियों के जीवन की विशिष्टता एवं भावों में मिल सकती है परन्तु लोक साहित्य अधिकधिक जन समाज की भावनाओं का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता है। जन-साधारण के जीवन में प्राप्त देश एवं भाषा की दीवार अधिक सम्बन्धी दृष्टि नहीं आती। साधारण से जालीदार परदे के पीछे समस्त देश के जन-जीवन का स्वाभाविक स्वर एक जैसा बहता प्रतीत होता है। अतः अल्पकाल मानव समाज की एकता का परिचय जितना सुन्दर हमें लोक साहित्य में मिलता है उतना अन्यत्र सम्भव नहीं। इसमें ऐसा प्रतीत होता है कि विश्व भर में सबके मानव का एक जैसा हृदय बोल रहा है। अतः यह साहित्य मानवी स्वर की एकता का द्योतक है। जातीय जीवन में हमारे इस साहित्य का अत्यधिक मूल्य है। डॉ० रवीन्द्रनाथ टागोर ने लिखा है कि जिस प्रकार गिण्टु पद्धति की सृष्टि है किन्तु

1 'साहित्य मन्त्र' जून, 56 में प्रकाशित लेख 'लोक साहित्य की परिभाषा

वयस्क मानव बहुतेकर स्वयं अपनी रचना है, इसी प्रकार लोक साहित्य भी शिशु साहित्य है मानव मन में उसका स्वन जन्म हुआ है।

डॉ० सरथद्र के शब्दों में "लोक साहित्य का मूल्य केवल साहित्य की दृष्टि से उतना नहीं जितना उन परम्पराओं की दृष्टि से होता है जो नविज्ञान व किसी पहलू पर प्रकाश डालती हैं। इस साहित्य को आदि मानव की आदि प्रवृत्तियों का वाप कह सकते हैं।"¹

आदिमानव के हृदय की भावनाओं का भण्डार लोक साहित्य अपनी सजीवनी शक्ति व बल पर अब तक जीवित है और एक कण्ठ से दूसरे कण्ठ में एक हृदय से दूसरे हृदय में प्रतिध्वनि करता हुआ चला जा रहा है। सुमस्तुत साहित्य से यह साहित्य अधिक विस्तृत और विदग्ध है। इसमें कालिदास और भवभूति तुलसी और जायसी मीरा और रसमान के भावों की मूल अनुभूति मिलती है। जीवन का कोई अंग नहीं जो इसमें अछूता रहा हो हृदय का कोई काना नहीं जिसका चित्र इस साहित्य में महदयता के साथ न खोया गया हो। जनता व मानस में लोक साहित्य का जन्म होता है। अतएव किसी भी देश में लोक साहित्य का विधिवत मग्न करने में वहाँ के निवासियों की अंतर्गत से लेकर अब तक की बौद्धिक नैतिक एवं सामाजिक अवस्था का एक सम्पूर्ण चित्र हमारे समक्ष उपस्थित हो जायगा। लोक साहित्य के अंतर्गत वह ममता आचार विचार की सम्पत्ति आ जाती है जिसमें मानव का प्राकृतिक रूप प्रत्यक्ष ही उठता है।

जन को समझने के लिये लोक साहित्य का ज्ञान परम आवश्यक है। बिना उसके जन की मानवी आवश्यकताओं को ठीक ठीक नहीं समझा जा सकता। साधारण जन की समस्याएँ सामाजिक निर्माण से घनिष्ठ सम्बंध रखती हैं। यहाँ नहीं समाज का मूल तत्त्वा का ऐतिहासिक मूल्यांकन लोक साहित्य के अध्ययन बिना असम्भव है। सामाजिक संविधान और रीति रिवाजों की रूपरेखा का स्पष्टीकरण इसी में हो सकता है। समाज का आन्तरिक विधान जिन तीनों पर बना है उसकी मौलिक 'यादों' लोक साहित्य के पास ही है जिसके द्वारा विविध सम्प्रदायों, मस्त्वृतियों और समाज निर्माण के धरातलों का निष्पत्ति हो सकता है।

लोक साहित्य में लोक मानस जितनी शुद्ध अवस्था में प्रतिबिम्बित होता है और सुरक्षित रहता है उतना वह किसी दूसरे माध्यम में नहीं रहता। इसमें मानस के प्राचीन रूप के अवशेष प्रकट होते हैं। फलतः लोक साहित्य में जो सामग्री मिलती है वह मानव की उस अवस्था के मानस अवशेषों की है जब वह सम्प्रदाय में बहुत दूर था। लोक साहित्य में उपलब्ध सामग्री में जो अन्तर्स्थिति प्रकट होती है उसका आधार पर यह निश्चय हो सकता है कि इसमें जातीय तत्व होते हैं। इसी आधार पर विद्वानों ने इस साहित्य को जाति विधान का सहायक माना है।

विदेशों में लोक साहित्य का नशास्त्र समाज शास्त्र, भाषा शास्त्र, इतिहास, मनाविज्ञान और पुरातत्व में घनिष्ठ सम्बन्ध माना जाता है। यूरोप के प्रत्येक छोटे बड़े राष्ट्र की अपनी लोक साहित्य परिपक्व है। अनेक अल्पकाली और विद्वानों ने इस दिशा में महान् कार्य किया है।¹

वद व्यास ने महाभारत में बड़े उदार शक्ति में कहा है —

गुह्य ब्रह्मिद ब्रवीमि,
नहि मानुषाच्छ्रेष्ठतरमिहकिंचित ।

अप्य — रहस्य ज्ञान की एक कुंजी तुम्हें बताता हूँ कि इस लोक में मनुष्य से बढ़कर और कुछ नहीं है।

इस मूल में लोक जीवन और सभी तरह के ज्ञान का मूल बोध दिया गया है। भारत जिस देश में जहाँ लोक साहित्य और लोक जीवन बहुत ही शान्तिपूर्ण सत्याग और निर्विरोध आदान प्रदान के द्वारा फूला फला है लोक साहित्य की अथाह निधि है। कौन सा विश्वास वहाँ में बीज रूप में जन्म लेकर उत्पन्न हुआ है मस्तिष्क और मन का कौन सा भाव बट-वृक्ष की भाँति चारा और की भूमि का दबा बटा है—इन सबका विश्लेषण लोक साहित्य में अति महत्वपूर्ण है।

प्रकृति से दूर होने होने मानव में कृत्रिमता आने लगती है। उत्तरात्तर स्वभाव का ह्याम हाता जाता है और फिर वह यश्रवत अपना जीवन चलाने लगता है। प्राण शक्ति का ह्यास हान में विद्युत् यापति नहीं रहती और लडखडाता हुआ वह अथा मुक्त हो जाता है। यही उसके ह्याम का मूल कारण है। ह्यास विकास की उपमा करते हुए भी यदि उसका अन्तर अपनी प्राण शक्ति के रस में डूबा रह तब कल्याणमयी मुक्ति गगनी में स्पन्दित उसके प्राणों की कारण मधुर वशी गूँजती रहती है आनन्द उपमित नहीं होता। इसके विपरीत यदि मानव ममभक्ति व्यापक वृत्तियों का कुचल कर उनका निरस्कार कर दे केवल ग्राह्य विक्रित भावना के सहार उपनि की दीड में वह अपने आपका नष्ट कर दे ता समस्त कलायें, परिप्लुत भावनाय और ह्यय की गुण हिनारा रूपी सरसता ही मूल जायगी। हमारा बाह्य जगत जितना रूपारमक है अन्तर जगत उनना ही गूँज है। गूँज रहस्या में जीवन के चिरशाश्वत सत्य उलझे रहने हैं। दार्शनिक भाषा में वह और भी उनभने हैं। आभीणा की भाषा में सरसता में ममके जा सकत हैं। यही लोक साहित्य की विशेषता है। जगत के गूँज तथ्य साकार शक्ति रूप ग्रहण कर इसी साहित्य में स्पष्ट हान हैं। जितने गूँज और रजनकारी भाव ज्ञान साहित्य में प्रस्पृष्टि हुए हैं उनमें साधारण साहित्य में नहीं। जितने विभिन्न रहस्यमय तथ्य वहाँ मून हैं हृदय का जितना प्रसार धार अभिव्यजन वहाँ हुआ है

उतना अयत्न नहीं। इसका कारण है लोक साहित्य का जन जीवन में गहन सामीप्य तथा लोक मानस की विशेषण-अभिव्यजन शक्ती। मानव के प्राणों में विद्युत् संचार करने वाली शक्ति का प्रस्फुटन जितना लोक साहित्य में हुआ है उतना अयत्न नहीं। जितना भावन और चवण साहित्य करा सके वही उत्कृष्ट साहित्य है। हमारी आत्मा को प्रकृत पुरातन आनन्द लोक में पहुँचाने की सबसे अधिक शक्ति लोक साहित्य में ही है। अतएव लोक साहित्य का जन-जीवन से शाश्वत सम्बन्ध है। जनवाणी के पीछे जन जीवन होता है।

वर्तमान भौतिकता प्रधान युग में जन जीवन में उस प्राण शक्ति प्रणयिनी लोकनिधि की उपेक्षा कर मानव बाह्य जगत् में सुख साधना की खाज में रत हो गया है। यही कारण है कि हमारे जीवन से भावात्मक सम्बन्ध का नाप होकर अशान्ति की वृद्धि हो रही है। अंतरजगत् की समृद्धि को चाकर मानव कल्पि सच्च सुख और शान्ति का भागी नहीं बन सकता।

लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य

जन जीवन के आचार विचार, रहन-सहन, नीति धर्म एवं जीवन दर्शन की चर्चा जिसे साहित्य में होती है वह लोक साहित्य कहलाता है। प्रत्येक देश और समाज की संस्कृति की आधारशिला वहीं का लोक-समाज होता है। डॉ० सत्यद्वय ने लोक साहित्य की परिभाषा करते हुए बताया है कि इस जन साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त भाषागत अभिव्यक्ति आती है जिसमें आदिम मानव के अवशेष उपलब्ध हैं। लोक-जीवन में प्राचीन संस्कृति अपने मौलिक रूप में पाई जाती है जबकि शिष्ट समाज में इसका परिष्कृत रूप सभ्यता का आवरण धारण करने प्रवृत्त होता है। लोक साहित्य में इस गुण स्वरूप लोक-संस्कृति के दर्शन होते हैं क्योंकि इसमें लोक मानस जितनी गुण अवस्था में प्रतिबिम्बित होता है और सुरक्षित रहता है उतना वह और किसी माध्यम में नहीं रहता। फलतः लोक-साहित्य से जो सामग्री मिलती है वह मानव की आदिम अवस्था के मानस अवशेषों की है जब वह सभ्यता के रंग में नहीं रंगा था। उसके प्राचीन काल के यह अवशेष अब तक चले आये हैं और वर्तमान सभ्यता की तरह में छिपे पड़े हैं।

इसके विपरीत शिष्ट साहित्य सभ्यता के विकसित हुए मानस वान प्रगुण मानव के हृदयगत भावों की परिमार्जित भाषा एवं कलात्मक शैली में अभिव्यक्ति है। साहित्य जीवन के सत्य, सौन्दर्य और श्रेष्ठता को रमणीय रूप में प्रस्तुत करता है जब कि लोक साहित्य मानव की इस अनुभूति का लोक भाषा में ही प्रकाशन मात्र है। हिन्दी जगत की श्रेष्ठ कर्वायत्री महादेवीजी ने कहा है, "कवि का वैज्ञानिक ज्ञान जब अनुभूति से रूप कल्पना से रंग और भाव जगत् से सौन्दर्य पाकर साकार होता है तब उमरे सत्य में जीवन का स्पन्दन रहगा बुद्धि की तब शृंगार नहीं।" लोक साहित्य में बुद्धि की तब श्रुतता से विहीन प्रकृत जावन का यह स्वरूप अपने मूल रूप में विद्यमान होता है, जबकि शिष्ट साहित्य में वाक्य का मर्यादित भाव जगत् से सौन्दर्य पाकर भी बुद्धि प्रदान मानस की उपज होना के कारण जन जीवन की प्रकृत अभिव्यक्ति से दूर परिमार्जित और परिष्कृत भाषा का आवरण पाकर ही अभिव्यक्त होता है।

साहित्य जीवन का प्रतिबिम्ब है। साहित्य में जीवन की विविध अवस्थाओं एवं अनुभवों का मनुष्य की भाषा में चित्रण होता है। लोक साहित्य में वाक्य का

यथाथ चित्र प्रस्तुत होना है। जीवन का निरखन और स्वाभाविक दशन लोक साहित्य है। शिष्ट साहित्य में चित्रण प्रायः काल्पनिक एवं अतिरञ्जित होना है जिसमें विशाल मानव ममता के छोड़े से 'पत्थिया की जीवन भाँकी मिलती है। लोक साहित्य में अधिकतर जन मानस की भावनायाँ एवं व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व रहता है।

लोक समाज और शिष्ट समाज एक लोक सभृति और शिष्ट सभृति अथवा सभ्यता में जा भेद है वही लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में है। ममता के इन दो विभागों का प्राण और शरीर के रूप में देखा जा सकता है—लोक जीवन है प्राण का स्वरूप और साहित्यिक जीवन है शरीर का स्वरूप। लोक जीवन का आधार हाँस है श्रद्धा और विश्वास जब कि शिष्ट जीवन बुद्धि पर आधारित है। लोक साहित्य में भी लोक गीत सर्वाधिक रसमय और भावातिरेक से पूर्ण होते हैं—इनकी प्राण प्रतिष्ठा हाँसी है बबल रस और भावा की प्रबलता से परन्तु साहित्यिक कविता में कवि की चेतना रहती है कविता के कलापक्ष में—भाषा छान और अलंकार के सम्बन्ध में। गुणा के आधार पर लोक गीतों में साहित्यिक कविता में शब्द विषयक अथ विषयक और शली सम्बन्धी सभी प्रकार के भ्रम दृष्टिमान हैं।

लोक गीत अशिक्षित जन मानस की विभूति हान के कारण उनमें जन जीवन में सम्बन्धित साध-साध ग्रामीण शब्दों का प्रयोग होता है। जबकि साहित्यिक कविता पढ़े लिखे शिक्षित विद्वानों की पूँजी है उसमें सुन्दर परिष्कृत एवं उच्च श्रेणी के साहित्यिक भाषा के शब्द प्रयोग का भी ध्यान रखा जाता है। आदिम काल में बोलने का भाषा हाँ लिखने की भाषा थी किन्तु साहित्यिक क्षेत्र में भाषा की उत्पत्ति और विकास में प्रकट है कि ममता के विकास के साथ-साथ शब्द अथ और ध्वनि सभी कुछ प्रभावित हान से भाषा के स्वरूप में परिवर्तन हुआ गया है, परन्तु लोक गीत और कथाएँ आदि मौखिक परम्परा में प्राप्त होती हैं इसलिये लिखित साहित्य में हुए रस परिवर्तन से लोक गीतों एवं लोक साहित्य की अथ विधाओं के भी शब्द सदब मुक्त रहें। इसी प्रकार शिष्ट साहित्य की लिखित भाषा में प्रयुक्त हुए शब्दों की ध्वनि और अर्थ में भी अन्य भाषाओं के ध्वनि सम्पत्तियों में आने एवं लक्षकों द्वारा भूल से शब्दों का अनुद्ध रूप में प्रयुक्त करते रहने में परिवर्तन हुआ है। कुछ रूपकों और प्रतीक प्रयोगों के कारण तथा कुछ प्रसंगानुद्ध एक एक शब्द के अनेक अर्थ हान के कारण शिष्ट साहित्य में प्रयुक्त शब्द अथ और ध्वनि सम्बन्धी परिवर्तन में प्रभावित, अत्यन्त परिष्कृत और परिवर्तित रूप बान बन कर अनेक भाषाओं को व्यञ्जित करने वाले बनते गये जबकि लोक गीतों के शब्द ध्वनि और अर्थ आदिमानव की प्रारम्भिक भाषा के अधिक समीप हैं।

जगत के गूढ से गूढ तथ्य साकार होकर रूप ग्रहण कर ग्रामीणों की भाषा में सरलता से समझे जा सकते हैं जबकि साहित्यिक भाषा में वे अर्थ भी उलभ जाते हैं—यही लोक साहित्य की विशेषता है। जितने गूढ और रजनकारी भाव

लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य

लोक साहित्य में प्रस्तुत हुए हैं उनमें शिष्ट साहित्य में नहीं। जितने विभिन्न रहस्यमय तथ्य वहाँ लुप्त हैं हृदय का जितना प्रसार और अभिव्यक्ति जितना भावना और चवण लोक साहित्य में हुआ है, उनका अभाव नहीं। हमारी आत्मा का प्रकृत पुरातन आनन्दलोक में पहुँचाने की सर्वाधिक शक्ति लोक साहित्य में ही है। भाषा के प्रारम्भिक बनावट वाले टर्मिनस नहीं थे—वे जीत जागृत स्त्री और पुरुष थे जो शब्द ध्वनि और अर्थ की परवाह न करके अपने भावा की अभिव्यक्ति विभिन्न वाली के रूप में माना शब्दों का प्रकट करने और आनन्द मनाते थे।¹

लोक साहित्य और साहित्यिक कविता में शब्द और अर्थ विषयक मुख्य भेद यह है कि लोक साहित्य में शब्द अर्थ के नियम पदाहाना है और शब्द के रूप के अनुसार ही मीमांसा अर्थ लिया जाता है परन्तु साहित्यिक कविता में शब्द से अर्थ निकाले जाते हैं, अर्थात् सीधे अर्थ रूप में शब्द प्रयोग न करके अभिधा लक्षणा और व्यञ्जना शब्द शक्तियों के बल से एक शब्द में अनेक अर्थ निबालन की चेष्टा कलाकार का गुण माना जाता है। यद्यपि स्वाभाविक रूप में प्रयुक्त शब्दों में लोक साहित्य में भी वही-वही लक्षणा व्यञ्जना शक्तियों के गुण उत्पन्न हो जाते हैं परन्तु लोक कवि की उद्देश्य सिद्धि निमित्त एक शब्द का एक ही अर्थ असीमा होता है।

लोक साहित्य मूल रूपनामा के आधार पर ही चित्रित होता है परन्तु साहित्यिक कविता में अमूल रूपनामा को विशेष स्थान प्राप्त है। लोक साहित्य में सहज अभिव्यक्ति होने के कारण लोक कलाकार का ध्यान उक्ति कल्पना की ओर जाता ही नहीं। उसे अभिव्यक्ति की प्रेरणा जीवन के स्पन्दना में मिलती है उसमें उपस्थापिता अनुपयोगिता का कोई विचार ही नहीं। इस अभिव्यक्ति से उक्त उक्तवा की मर्यादा प्रतिष्ठित होती है और जन मानस रचि और शली को अपनी उसी सहज मर्यादा में निश्चिन करके प्रकट कर देता है।²

विषयगत भेद—शिष्ट साहित्य में रचना का विषय उमक उद्देश्य में निर्धारित होता है। दार्शनिक, सामाजिक आध्यात्मिक सांस्कृतिक विचार धारा का जन समूह तक पहुँचाने हेतु साहित्य की रचना होती है। अतएव अपनी रच्यनुकूल क्षेत्र में विचारात्मक करके साहित्यकार जनहित राष्ट्रहित अथवा स्वाधत्ताम की दृष्टि

1 द फुट फ्रेमम ऑफ़ स्पीच वर नोट टर्मिनस बोर्डर, बट लिक्ली मैन् एण्ड वीमन विबलिंग एण्ड निर्गम मैरिनी और फोर द मीयर प्लजर ऑफ़ प्राइडू ज़िग साउथ्स विं और विन्डेट मीनिंग एण्ड एन इन्स्ट्रूमेंट ऑफ़ एक्स्प्रेसिंग थिंग्स।

संभव एण्ड रीपॉजिटो—अरबन

मे साहित्य का रचना करता है और तदनुसार विषय चुनता है अथवा चिन्तन के क्षणों में अथवा जीवन व्यवहार में आकस्मिक रूप से स्फुरित विचार को ही विषय बना कर कविता, कहानी, लक्ष, नाटक आदि लिखन बंध जाता है। इस प्रकार उस कवि विषय का चुनाव सादृश्य होता है। परन्तु लोक साहित्य की रचना का कोई उद्देश्य नहीं होता न तो लोक साहित्य की रचना किसी का प्रसन्न करने के लिये होती है¹ न ही लोक कलाकार क व्यक्तित्व का उभारने हेतु यह रचना होती है। लोक कलाकार तो तुलसीदास क स्वान्त मुख्या की भाँति आत्म-सुष्टि के लिये भावाभिव्यक्ति करता है। वह तो व्यक्तित्व रहित एव आत्म चेतना विहीन प्राणी है—वह अपनी चेतना और अपनी भावनाओं का जनता की भावना से तादात्म्य करता है—सबकी भावना उसकी भावना है व्यक्ति नहीं उसकी आवाज जन की आवाज है।² फिर विषय उसका अपना बस ही सकता है। लोक कवि का विषय साहित्यकार से विलक्षण विपरीत उद्देश्य रहित और अपना नहीं जनता का है। परन्तु कोई निर्धारित विषय न होते हुए भी लोक साहित्य की विधा लोक गीता में तो मारे ही विषय आ जाते हैं—लोक गीता का अज्ञान कवि निरुद्देश्य कविता में स्वाभाविक जीवन में घटने वाली घटना अथवा जन मानस में उठने वाले आवाज से प्रभावित होकर आलापन लगता है—अतः घर परिवार उत्सव त्योहार धर्म प्रकृति, जादू-टाना, पशु पक्षी भाव्यपदाय वस्त्राभूषण राजनीति इतिहास आदि कोई विषय नहीं बचा जिस पर लोक गीत न बन सके। लोक गीतों के विषयों की कोई सीमा ही नहीं—जबकि शिष्ट साहित्य के विषय सादृश्य एव व्यक्तिगत होने के कारण सीमित सख्या में ही मिलेंगे। लोककवि का विषय—विविध अत्यन्त विशाल और विस्तृत है।

शलीगत भेद—लोक साहित्य क रचयिता अथवा उत्पत्ति काल का पता नहीं रहता—परम्परा से प्राप्त इस अभिव्यक्ति क स्रष्टा का कोई महत्त्व नहीं अज्ञात कवि की इस रचना की कोई शली निर्धारित नहीं की जा सकती। पारचात्य विद्वान जेम्स ग्रिम ने एक सिद्धान्त निकाला है कि लोक गीत जन समूह की रचना होने के कारण इसे कम्पूनल कम्पोजीशन माना जाना चाहिये। साहित्यिक कविता की भाँति लोक गीत एक व्यक्ति की रचना नहीं—उत्पत्ति काल एव रचयिता क अभाव में लोक गीता की शली निर्धारित करना सम्भव नहीं।

शिष्ट साहित्य में प्रत्येक साहित्यकार के व्यक्तित्व की छाप उसकी रचनाओं में स्पष्ट होती है परन्तु लोक साहित्य क स्रष्टा का पता नहीं होने के कारण निर्माता क व्यक्तित्व की कोई छाप नहीं होती। उसकी शली सावजनिक क्षेत्र में ढली हुई

1 जैसे रीतिकाल में कला विलासी राजाओं का प्रसन्न करने के लिये राज दरबार में कवि लोग रहते थे।

2 प्रो० क्विटरज—इंट्रोडक्शन टु इंग्लिश एण्ड स्कॉटिश फोल्कडस।

वन पद की एक सरल, स्वाभाविक और स्वच्छ शली है, जिसे न काव्य के नियमों का प्रतिपादन है और न शास्त्रीय लक्षणों का बचन।¹

एक बात लोक गीत और लोक कथाओं आदि के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि इनकी कोई निश्चिन्ता शैली होती भी तो वह एक रूप नहीं सकती थी। मौखिक परम्परा से चले आते रहने से इनमें निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। कुछ शब्द टूट जाते हैं कुछ बदल जाते हैं कुछ नये जुड़ जाते हैं—तदनुसार स्वरूप में उच्चारण और ध्वनि में भी अन्तर पड़ता रहने से शैली बदलती रहती है।

प० राम नरेश त्रिपाठी ने इस प्रकार लोक गीत और साहित्यिक कविता का भेद स्पष्ट किया है "मिथुन कविता की कविता उस कवयित्री की भाँति है जिसके पीछे कबी से कतर कर ठीक हाते हैं और जो ग्वास तरह की रचि से प्रेरित हो कर सजाइ जानी है पर ग्राम गीत प्रकृति का वह उद्यान है जो जगला में पहाड़ा पर नदी तटा पर भवतत्र रूप में विकसित हुआ है—वह अश्रुमिथुन है। उमकी समता बगला में नगा हुआ कदी फूल नहीं कर सका।"

अनेक प्रकार से लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में भेद होते हुए भी दोनों में आदान प्रदान रहता है। लौकिक साहित्य न वैदिक काल में अब तक साहित्य को प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य लौकिक साहित्य का अत्यन्त ऋणी है क्योंकि हिन्दी भाषा प्रारम्भ से लौकिक भाषा रही है।

साहित्यिक कविता की भाँति लोक साहित्य भी जातीय साहित्य में सामग्री प्रदान कर रहा है। साहित्यिक गीतों का उत्पन्न भी लोक गीतों से ही हुआ है। प० रामचन्द्र गुजल ने तो यहाँ तक कहा है कि गास्वामी तुलसीदास अपने विनय के पदा में भी लोक का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस प्रकार लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में आदान प्रदान होता ही रहता है।

कई लोक विधाएँ शास्त्रीय कला विधाओं की आरंभ करती हैं। धार्मिक विश्वास एक ग्रामस्थाओं की दीवारों पर टूटती है तो उन पर आधारित कला विधाएँ भी कमजोर पड़ने लगती हैं।

राजस्थान के लोक कला सम्राट डॉ० देवी लाल सामर के अनुसार कथकलि नृत्य नाच्य आज शास्त्रीय बन गया है।

लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में कम दूरी होने पर वे एक दूसरे से प्रेरणा लेते हैं।

1 'राजस्थानी लोक गीत'—पृष्ठ 12 (शोध प्रथम)

लोक साहित्य की विधाएँ

लोक साहित्य जीवन दायिनी दब गंगा के समान है इसका क्षेत्र बड़ा विशाल है। अत्यन्त आन्तम जगली जातियाँ की अभिव्यक्तियाँ स लेकर शिष्ट साहित्य की सीमाओं तक पहुँचन वाली सारी अभिव्यक्ति लोक साहित्य के अंतर्गत आती है। अपनी स्वाभाविकता और मरसता के कारण लोक साहित्य सर्वाधिक लोकप्रिय बना हुआ है और वह लोक जीवन का मुख्य अंग माना जाता है। स्वाभाविकता से पूर्ण आदि मानव की अभिव्यक्ति सभी लोक साहित्य व्यक्ति विनोद की रचना न होकर जन मानस के सामूहिक भावाँ की व्यञ्जना है। लोक साहित्य के अष्टाव भाव समाज के भावाँ स एकाकार होकर प्रकट होते हैं।

डॉ० श्याम परमार न भालवी लोक साहित्य में दस लोकवाणी के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए वना है व्यक्तित्व से रहित समान रूप में समाज की आत्मा का व्यक्त करने वाली मौखिक अभिव्यक्तियाँ लोक साहित्य की श्रेणी में आती हैं।¹ परम्पराओं की दृष्टि से लोक साहित्य के महत्त्व पर बल देते हुए डॉ० सत्येंद्र न लोक साहित्य की आन्तम मानव की आदिम प्रवृत्तियाँ का कोष कहा है।²

लोक साहित्य का नशास्त्र समाज शास्त्र भाषा शास्त्र भौगोलिक ज्ञान ऐतिहासिक खोज और सांस्कृतिक अध्ययन—सभी दृष्टियों स परम महत्त्व में। साधारण जन का समझने के लिये लोक साहित्य का ज्ञान अत्यावश्यक है। जन साधारण की समस्याएँ सामाजिक निर्माण स घनिष्ठ सम्बन्ध रखती हैं—आर समाज के मूल तत्त्व का ऐतिहासिक मूल्यांकन लोक साहित्य के अध्ययन स हाँ भनी प्रकार हो सकता है।

समाज का आन्तरिक विधान जिन तीलियों पर बना है उसकी मौखिक व्याख्या लोक साहित्य में ही उपलब्ध है जिसके द्वारा विविध सभ्यताओं स कृतियाँ और समाज निर्माण के घटानला का निणय हाँ सकता है।

लोक जीवन एक समष्टि जीवन है—उमके साथ घम विश्वास और आस्थाएँ जुड़ी हुई हैं। लोक जीवन की आत्म्याओं विश्वासाँ और भाव लहरियाँ की अभिव्यक्ति

1 भारतीय लोक साहित्य पृ० 22

2 व्रज लोक साहित्य का अध्ययन पृ० 5

लोक साहित्य की विधाएँ

एक लोक साहित्य जन जीवन का साहित्य है उसे कोई भी अवरुद्ध नहीं कर सकता। इस लोक साहित्य रूप जनवाणी का प्रस्फुटन कई प्रकार से होता है। इस जन साहित्य की मूल्य म कई प्रकार की धाराएँ प्रवाहित होती हैं—प्रत्येक का अपना अलग-अलग महत्व है। जनवाणी का कोई भी अंश रमहीन नहीं होता, क्योंकि उसके पीछे जन जीवन रहता है। लोक साहित्य की मामूली को लोक कलाकार विभिन्न रूप में प्रस्तुत करता है जिनमें मुख्य रूप निम्नलिखित हैं —

- 1 लोक कथाएँ
- 2 लोक गीत
- 3 लोक नाट्य
- 4 लोकाति साहित्य

प्रतिक्रिया कृतियों और प्रवाद आदि इन सबमें लोक गीत सर्वाधिक प्रचलित, लोकप्रिय और विशिष्ट माने जाते हैं। एक पारश्चात्य विद्वान ने कहा है— द आर मथ नीयरर टु लाइफ दन आर फॉर टल्म ।¹

1 लोक कथाएँ—हमारे ज्ञातय जीवन में लोक कथाओं का बड़ा महत्व है। वही बड़ी स्त्रियाँ शताब्दियों से वच्चा और प्रीता का ये कथाएँ सुनाती आई हैं—उन कथाओं में अनेक प्रतिभाओं का प्रकाश निहित रहता है क्योंकि ये पीढ़ी दर पीढ़ी कण्ठ से कण्ठ में हाँपी हुई आती हैं। वहन जाने की आत्मानुभूति के प्रभाव से इन कथाओं में निम्न आता रहता है उमके अपन भाव सम्मिलित हो जाते हैं और उत्तरोत्तर नई नई उत्पन्नाएँ एक भावनाएँ कथाओं में सम्मिलित हो जाती हैं। पत्रस्वरूप कथा का बलवर प्रायः बट जाता है। शब्द और मुहावरों में भी निम्न आ जाता है। इस प्रकार निरंतर अक्षरण से कथाओं में प्राप्ता आती रहती है और यत्तिगत दायर में प्रसारित हुई कथाएँ सामाजिक घरातल पर उतर कर लोक-कथाओं का रूप धारण कर लेती हैं। उनका दायरा बट जाता है।

इन लोक-कथाओं में मनोरंजन के साथ जीवन के नियम अथवा कल्याणकारी निर्देश निहित रहते हैं— बालकों के चरित्र निर्माण हेतु उन दाती-नानी द्वारा सुनाई रहानिया का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रीतजनों का भी विश्वास और आस्था के बल पर इन कथाओं में अनेक प्रेरक तत्व मिलते हैं। विशेषकर स्त्रियों विशिष्ट पक्षों, त्योहारों और वना के अक्षर पर इन परम्परागत कथाओं का बड़ी-बूढ़ियों से सुनना अपना पावन और नविक कस्तन्य मानती है। तीज, बरवा चौय, हाई अष्टमी सवट चौय, गीतना भाता दशा भाता और पूणिमा अत आदि की कथाएँ सोमागवनी मूल्यों का ये नियम सामाजिक भावनाओं की प्रेरक बनी धाराधना का अंग बन जाती है। कति

1 इ ट्राइवशन फॉर सोम आफ माइया हिन्म

2 रगायन—मई 70 में प्रकाशित लख डॉ० मट्टर भानावत

मास में तुलसी व्रत की कथाएँ भी भारतीय घरों में यत्र तत्र सबत्र नहीं सुना जाती हैं।

आधुनिक युग की शिक्षित नारियाँ भी प्रायः इन धार्मिक अनुष्ठानों के प्रति आस्था नहीं रखीं फिर भी लोक-कथाओं के वृत्तांत से उनके मन में अमंगल की आशंका उन्हें व्रत व अनुष्ठानों को मानने में विवश करती है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश में करवा चौथ के व्रत की कथा प्रचलित है—प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्री कितनी ही छोटी अवस्था की हो करवा चौथ के चंद्रदशम के बाद कहानी सुनकर, बायना मास में व्रत पारण करती है। कथा है—एक राजा के 7 लड़के और एक लड़की थी। लड़की के विवाह के पश्चात् पहनी करवा चौथ आई—लाडली राजकुमारी को भूख रहने का अभ्यास नहीं था—दोपहर के बाद ही भूख से कुम्हान लगी। उसके भाइयों का मन उस देख-देख कर व्याकुल होने लगा—व सब चंद्रदशम का उपाय माँव लगे—बाई घास पूँस लाया, बाई चूनी और कोई नियासवाई। सबन मिलकर अग्नि प्रज्वलित करके चलनी के भीतर में चंद्रमा दिखा दिया—बहिन उस बनावटी चंद्रमा का अन्न देकर भाजन करन बठी। फिर क्या हाता है—पहले आस में बाल निकला दूसरे में मक्खी—तीसरा आस तोड़त ही नाई आ पुकारा कि 'राजकुमारी के पति का स्वर्गवास हो गया।' वह तुरन्त भाजन छोड़ कर पति गृह के लिये रवाना हो गई। वहाँ जाकर पति के शव को भस्म नहीं होने देकर सुरक्षित रखवा दिया।

दूसरे वष करवा चौथ का त्योहार आया—सभी भावज बायना ल ले कर आई बाली—भइयो प्यारी बायना ल अन्न विचखानी बायना ले आदि आदि। नन्द उत्तर देती है 'मैं तुम्हारा बायना तब लूँगी जब तुम मेरा सुहाग वापिस दिलाओगा।' इस पर प्रत्येक भावज यह कहकर पीछा छोड़कर चली गई कि मुझे छोड़ दो दूसरी जिनाएंगी। इस प्रकार छ भावजें चली गई—सबसे छोटी भावज का बसकर पल्ला पकड़ लिया जाने नहीं दिया—वह बाली कि 'मैं कहीं से हाड नाऊँ कहीं से मास लाऊँ—कम तरा सुहाग बहाड सक्ती हूँ।' इस पर नन्द उम पति के सुरक्षित शव को पाम ले गई और भावज ने अपनी कनकी उंगली मुँह में निचाड दी। नन्द का पति हर हर करता उठ बठा। तब से राजा ने नगर में ढढारा पिटवा दिया कि कोई विवाहित स्त्री करवा चौथ का बिना व्रत न रहे—पाँच वष की हो या पचास वष की।

इस प्रकार की कथाओं का सुनकर प्रत्येक सौभाग्यवती स्त्री इन व्रतों को करना अपना धर्म मानने लगती है।

2 लोक गीत लोक साहित्य की दूसरी विधा है लोक-गीत—य जन मानस की भाव लहरियाँ सम्पूर्ण जीवन में व्याप्त हैं। या तो समस्त लोक साहित्य अरथा दायक और मानस में नवीन आलाप का सजक होता है परंतु लोक साहित्य की अन्य

1 प्राचीनकाल में यह प्रथा थी कि मृत्यु का समाचार नाई के द्वारा भेजा जाता था।

विधाया स भी अधिक मवलाक प्रियता का बरदान लोक-गीता को मिला ह। वरकि उनम शत्रु के माय मगीन भी हाना है। शत्रु और स्वर स इह जीवन रम प्राप्त हाता है। जिम प्रकार गीता के रूप मे हुई भावाभिव्यक्ति हृदय को बशीभून करन की विनेप सामध्य रखती है उसी प्रकार भावावश से अत्यधिक विभार हुआ हृदय गीत के रूप मे ही अधिक फूटता है। यही कारण है कि मुख दु ख जम विवाह मन्वार मेले त्योहार, दब पूजन उत्सव मनाना आदि जन जीवन म काई अवसर ऐसा नहीं जिम पर लाकवाणी गीता के रूप म प्रम्फुटित न हुइ हा। कई जगह मृत्यु तक के अवसर पर स्त्रियाँ प्राय गा गा कर रन करती हैं। जब जब मानव हृदय प्रबल भावावेग से परिप्लावित हाकर अत्यधिक ह्य अथवा शाक अनुभव करता है तब तब उसके मानस म गीता की स्वर लहरियाँ फूट पडती हैं। तदनिमित्त उसे स्वर राग, लय और छन्द आदि के शास्त्रीय नियम का जान प्रान नहीं करना पडता। जन मानस के स्वत स्फुरित रस के स्रोत हाने क कारण लोक गीत सर्वाधिक नाकप्रिय बन हुए हैं। लाक कथा और कहावता आदि की अपेसा लाक गीता म कही अधिक भावोत्कप और रजन शक्ति है। डॉ० वामुन्वशरण न निखा है शिष्टता स दूर प' हुए मानव के हृदय म स्वर लहरियाँ स्वय ही छनछनाने लगती हैं, जिसका प्रान शिष्ट कहलान वाला मानव भी लेता है।¹

कंठ दर कंठ आय हुए मौखिक परम्परा से प्राप्त इन गीता द्वारा विभिन्न स्थाना और विभिन्न काला की बालिया सामाजिक और सांस्कृतिक स्थिति तथा एतिहासिक और राजनतिक पहलुआ का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। प्रत्यक विषय का अध्ययन करन समय लाक गीता स हम माग दशन मिलता है। अनक भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वाना न लाक गीता के महत्त्व पर अनेक रूपा म प्रकाश डाला है। महात्मा गांधी न लाक गीता को मम्भृति क पहरार कहा है। लाला लाजपतराय न इह हमार विकास के इतिहास की अमूल्य निधि² बताया ह। श्री बु जविहारीलाल न लाक गाना का बुद्धि ज्ञान घम और दशन का शास्त्र³ हा मान दिया है। एसाइवनापेनिया ऑफ ब्रिटनिका के लेखक न लाक गीता का 'मनुष्य की उत्पत्ति विकास और रीति रिवाजा का विद्या बनाया ह।

जान क भण्डार हमारे य नाक गीत राष्ट्रीय सतुलन बनाय रखन और विश्व कथुत्व की भावना स्थापित करन क भी परम माधन हैं। लाक-गीता म आत्म तत्व की प्रधानता हान के कारण इनम आत्म विकास की पूरण सामध्य ह आत्मा का विकास ही वास्तव म विश्व मानव म एकता की भावनाएँ विकसित करन का प्ररक तत्व है। इसालिय लाक गीता म व्यक्तिगत भावा की व्यजना हाती है।

आत्मा भूनक तत्र के अभाव म मानवीय भावनाया का विकास सम्भव नहीं और उनम बिना विश्व कथुत्व की स्थापना कल्पनातीन हागी। विज्ञान क द्वारा

1. वामुन्व-पीर बहा मंगा।

हुई भातिक समृद्धि विश्व वधुत्व की स्थापना में कदापि सहायक नहीं हो सकती। आत्मभाव व प्रेम ही विश्व प्रेम स्थापित हो सकता है और हमारे ये लोक गीत इस आत्म भाव के खाते हैं जो मानव हृदय समान होने के कारण विश्व भर में व्याप्त हैं।

लोक-गात विशेषकर नारी व हृदय का गान है। सयाग में वियोग में शृंगार-रस की गीत लहरिया प्रवाहित होती है ता तीज और गौर के त्योहारों पर गौरी पूजन तथा पीयर मासरे लहरिया और चुंदरी के रस भीने गोता से वातावरण गुंजारता है। पुत्र जन्म एवं विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर गाये जाने वाले गीतों का ना और छंद नहीं। मानाओं में जब वात्मल्य का वेग आलाडित होने लगता है तो व यशोला कौशल्या की भाँति स्वतः गान लगती है। जब हमारे घर के आँगना में साहर आदि लोक गीतों की मृष्टि होती है तो हमारा मन प्राण पुनर्कित हो भ्रमन लगता है।

बुद्ध अवसरों पर पुरुष और बालक भी लोक गीत गाते हैं परंतु स्त्रियों की तुलना में उनके प्रकार और संख्या अति न्यून है। दबी देवताओं के गीत—हरजस भजन आदि व्यवसाय सम्बन्धी लोक गीत और श्रम परिहार हेतु गाय जाने वाले मुग्धत पुष्टपा के लोक गीत हात हैं। गद खलन के गुडियों के गौरी पूजन और साभी आदि भ्रमवर्धन लोक गीत बालक बालिकाओं के हात हैं।

3 लोक-नाट्य—मानव स्वभावतः मनोरंजन प्रिय प्राणी है। मन के उद्घाटन का गीत और नृत्य के रूप में प्रकट करता तो उसमें नित्य स्वाभाविक ही जीवन में घटित होने वाली घटनाओं और पौराणिक कथा कहानियों का लेकर प्रायः अभिनयात्मक रूप में भी अभिव्यक्त करने की स्वतः प्रवृत्ति कदा जन जीवन में पाई जाती है। भारतीय लोक नृत्य एवं लोक-नाट्य एवं त्योहार और नवी देवता मना विश्वास तथा मनातिया से जुड़े हैं। रामायण महाभारत तथा अथ धर्म ग्रन्थों की कथाओं पर अनेक लोक-नाट्य और लोक नृत्य प्रचलित हैं। प्राचीनकाल में भारत में विभिन्न प्रदेशों में माहल्ल माहल्ल में राम मंडलिया नौटकी की चोट पर लोक-नाट्य प्रदर्शन करता आ रहा है। चित्र-पट्ट के प्रचार से इन लोक-नाट्यों का प्रचलन कम-बढ़ा नगण्य सा हो चला है परंतु राजस्थान में लोक-नाट्य और लोक-नृत्यों का महत्त्व अब भी अतना प्रकाश में आ रहा है कि अन्तर्राष्ट्रीय रंगमंच पर उनका अभिनय भारत की लोक-नाट्य कला का ग्यानि प्रदान कर रहा है।

राजस्थान के पहाड़ी प्रदेशों में विष्णुपकर भील मीणा और बजारा आदि निवासियों के कारण ये प्रदेश सामुदायिक मनोरंजन में बड़े सम्पन्न हैं। डा० देवीलाल सामर ने राजस्थान की इस कला के विकास में स्तुत्य उपलब्धियाँ की हैं।

हाली आदि व अवसरों पर लोक-नाट्यों की विष्णु धूम मचती है।

4 लोक-साहित्य का अध्ययन जन मस्कृति तथा जन मानस का समझने के लिए परम सहायक है। लोक-साहित्य के माध्यम से मावभूमि मानस की अवस्थिति

लोक सस्कृति

जीवन के दो पक्ष हैं—भौतिक (आवश्यकता पूर्ति) तथा भावात्मक एवं संस्कार पक्ष जो हम भौतिक सुखा से ऊपर उठा कर विश्वासा और ध्यान-द का अनुभव कराता है। यह सांस्कारिक पक्ष परम्परागत आस्थाओं और विश्वासा से बनता है वह धरोहर है जो बाल्यकाल से ही पारिवारिक एवं सामाजिक संस्कारों के रूप में भावनाओं की नाना परतों से लिपट कर अचेतन मन की गहराइयों में रुढ़ हो जाती है। आस्था और विश्वासों से परिप्लावित अचेतन मन साधारणतः किन्हीं बाह्य परिस्थितियों से प्रभावित नहीं होता। इन आस्थाओं का रूपान्तर तो सम्भव है परन्तु इनका जीवन की मूल धारा से विच्छेद सम्भव नहीं।

वस्तुतः लोक सस्कृति ही वस्तु सस्कृति है अथवा या कह सकत हैं कि शास्त्रीय संस्कृति लोक सस्कृति है। लोक सस्कृति से एक ऐसे अध्यात्म सौंदर्य का वाद्य होता है जो भारतीय संस्कृति के सभी तत्त्वों को आत्मसात करके एक अनुपम सावर्भौमिक स्वरूप प्रस्तुत करती है। वेद पुराण और उपनिषदा में वर्णित व्यवस्था या सामाजिक आचरण व्यवहार की विभिन्न पद्धतियाँ—वास्तव में सब लोक सस्कृति के ही अलग अलग रूप हैं। सामयिक परिस्थितियों का भिन्नता से उन के विभिन्न रूप बन गये हैं परन्तु उनके मूल में एक ही संस्कृति है जिसे लोक सस्कृति कहते हैं। बृहत्तत्त्वा में भेद हान पर भी लोक सस्कृति में सब वैश्व-वैश्व-वैश्व-वैश्व व्याप्त है। वृत्त की अनेक शाखाओं की भाँति और समुद्र में गिरने वाली अनेक नदियों की भाँति एक ही संस्कृति विभिन्न रूप धारण करि आधुनिक संस्कृति पुरातन संस्कृति आदि नामों में अभिहित हो गई। यथायत्न लोक कलाओं के उन्नायक डा० देवी लाल सामर के शब्दों में पूरा रूपण वसुधा की संस्कृति लोक संस्कृति ही है। किसी भी राष्ट्र की मातृत्वगत समाजगत कला गत, धर्मगत एवं विज्ञान गत आचरण प्रक्रिया में एक स्वाभाविक मानवीय साम्य मिलता है—यही साम्य लोक संस्कृति का मूल तत्त्व है।

लोक संस्कृति में यही मूल तत्त्व है जो सभी भारतीय भ्रमणों का अर्थ में आत्म-मातृ कर अलौकिक सावर्भौम प्रायना का अर्थ में किये है। लोक संस्कृति का यही सावर्भौमिक स्वरूप हम वस्तु प्रायना में अर्थ में है—

य शवा समुपासते गिव इति ब्रह्मेति वेदातिना
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटव कर्तति नयायिका,

अह्नियत्र त्यय जन शासन रता कर्मेति भीमासवा,
 वो सोय विदधात याद्वित फल त्रलोक्य नायोहरि ॥

आधुनिक सस्कृति, पुरातन सस्कृति नामा मे अभिहित विभाजन माने जाने पर भी भारतीय मस्कृति का मूल स्वर समाज ही है। भूत और भविष्य की सारी प्रक्रियाएँ मूलत एव ही लोक स्वरूप को अभिव्यक्त करती हैं और सभी आगत उदभावनाएँ विगत की मूल अभीप्साया तथा मनोभावनाया के स्वरा स प्रतिबद्ध हैं। वस्तुत मानव मात्र के प्रवृत्त हृदगत भावा, अनुभूतिया और स्फुरणाया पर दश और काल की परिस्थित्तिया का कोई प्रभाव नहीं पडता, अतर आता है मानव के आचार व्यवहार और बाह्य वेश भूषा तथा खान पान मे जिनम समय के फेर से देश और काल के अनुरूप परिवर्तन व हर फेर होना रहता है। परतु ये सब सम्भता के आवरण मात्र है—मानव हृदय की भावना से सम्बद्ध मस्कृति के तत्त्व सदव परम्परा से बद्ध रहते हैं।

डा० देवीलाल सामर ने भारतीय लोक मस्कृति को सावभौम लोक सूत्र के रूप म स्थापित करने का स्तुत्य प्रयाम किया है जिसके फलस्वरूप भारतीय लोक मस्कृति के कई नय और मनात आयाम प्रकाश म आ रहे हैं।

डॉ० सत्येन्द्र व शर्मा ने राजस्थान लोक साहित्य और लोक मस्कृति का परम निधान है। यहाँ उनके एम विवरण मिलते हैं जिनसे सिद्ध हाता है कि राजस्थान की भूमि म व तत्त्व विद्यमान है जिनके दशन म लोक मानस म स्फूर्तिया उत्पन्न हानी हैं।¹ कनल टॉड ने अपनी पुस्तक एनलस एण्ड एण्टीक्विटीज म उनके एस वणन दिय है जिनमे यहाँ की लोक मस्कृति का सम्यक परिचय मिलता है। त्योहार मेले देवी देवताया की भायता आदि म उनके चित्रण मनभाहक मस्कृति की अभिप्रति करते हैं।

राजस्थान के खान पान वेश भूषा आदि म भी लोक मस्कृति के दशन हाते हैं—तीज त्योहार के अवसर पर सानू चूरमा रावडी आदि विशिष्ट भोज्य पण्य यहाँ की विशिष्ट मस्कृति के परिचायक ह। जमाइ या जनदोई का भाजन कराते समय भात और धी चीनी परोसना उमका विशिष्ट आतिथ्य एव मागलिक शकुन माना जाता है। इसी प्रकार सोभा यवती स्त्रिया एव कुंवारी कन्याया की केसर कमुम्बल पाशाकेँ गाटे और सलमे मितार स भिन्नमिलाती हुई राजस्थानी महिला की मागनिक भावनाया की प्रतीक हैं—फिर विवाह और पुत्र जम आदि के अवसरा पर चून्डी और पीलिया जा पाहर म आता है वह ता मस्कृति के मुँह बालते प्रतीक हैं—इसी प्रकार तीज के त्योहार पर न्त्रियाँ रग बिरगा नहरिया आड़नी हैं जा उनके भावुक हृदय व कला प्रेम का धानक है। पुष्पा की पगडो और टुणाला भी इसी प्रकार की विशिष्ट मस्कृति का परिचायक है।

1. मावषाता की पगडण्डियाँ

राजस्थान के लाक गीता म यहाँ के पारिवारिक प्रेम के सजीव चित्र मिलन हैं जा लाक सस्कृति के परिचायक हैं। सम्मिलित परिवार म इतनी सुव्यवस्था और पारिवारिकजना के पारस्परिक सम्बन्ध का माधुय यहाँ की लाक सस्कृति का दानक है। इम प्रकार के गीता के कुछ नमूने लिय जात हैं—

होली के अवसर पर गाया जान वाला पारिवारिक मुख क चित्रण का एक प्रतिनिधि गीत सहेल्याँ आम्बो मोरियो” अत्यंत लोकप्रिय है।

म्हे तो बारयाँ, ए बहूजी, धारा बोल न,
लडायो म्हारो स परवार, सहेल्याँ ए आंबो मोरियो,
म्हे तो धारयाँ जी सामू जी धारो कू ख न,
धे तो जाया अरजुन भीम, सहेल्याँ आंबो मोरियो, ॥

यह खिला दृष्या आम का पेड और रस पूण फला की कामना स परिपूर्ण वृक्ष मुम्बी कुटुम्ब का प्रतीक है।

सम्मिलित परिवार म पारस्परिक स्नेह की अभिव्यक्ति के एम अनका लाक गीत है जिनमे साम्प्रतिक भावा की व्यजना होती है।

इसी प्रकार उत्तर प्रदेश महाराष्ट्र गुजरात और बंगाल बिहार आदि के लाक गीता म भी लाक सस्कृति के चित्र मिलन हैं जिन मे पारस्परिक स्नेह मंगल कामना और आस्था एव धार्मिक विश्वासा म पूण साम्प्रतिक भावना की अभिव्यक्ति हानी है।

भारतीय सस्कृति म पितृ पूजा और अतिथि सत्कार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विभिन्न प्रदेश म व्याप्त लाक गीता और लोक कथाआ से यहाँ क धर्म प्रिय जनपदा की प्राचान सस्कृति का भली प्रकार जान हाता है।

उत्तर भागत म और गुजरात महाराष्ट्र आदि प्रदेशा म भी विवाह आदि मागलिक अवसरा तथा तीज त्यौहारो पर घरा म छल्पना तथा दीवारा पर थाप चित्रित किय जाते हैं और दानक दानिकाए सांझी भाँभी और टेसू के गीत गात हैं दारारा पर सांझी चित्रित करते है—इस सारी चित्रकारी को माडना कहत है—य सभी आचार विचार मूलक मांडन मानव मन की मांगलिक भावनाआ की अभिव्यक्ति और लाक बला सस्कृति के सूचक है।

लाक सस्कृति की प्रवृत्ति और प्रकृति सदा स नारी रूपा रही है। नाग न जहाँ अपन मनागत उद्याह दुख सुख के उत्पारा की भाव नहरिया लोक गीता की गगा म प्रवाहित की है वहा मैहन्गे माँना गाना थाप और सांझी चित्रित कर कर क लोक कथाओ की प्रस्थापना की है—वस्त्राभूषणा की माज सज्जा न भी नारी क कला प्रेम का अभिव्यक्त किया है। त्यौहार उत्सव आदि मनाने की पद्धतियाँ नारी क ही मना भावा की प्रतीक है। नारी मन ने लोक सस्कृति की इस थानी की गीता क रूप म प्रवाहित करके भारतीय सस्कृति की सजीवनी शक्ति प्रदान की है।

अनन्त काल से नारी का बूट गीता का माधुय दता आ रहा है। स्त्रीधारा व व्रनोत्सवा म, नृत्य गीता म विवाह आदि सम्बारा म जम से मरण तक हजारा प्राम्गिक मस्कारा पर गाये जाने वाले नारी के गीत एव कलात्मक मागलिक रूप हमारी नाक मस्कृति के परिचायक हैं।

कलात्मक वस्त्राभूषणा, गीता नृत्या तथा नाना प्रकार की लाक कला और लोक सास्कृति क संरक्षण म नारी का योग श्री गणेशाय नम तुल्य माना है जिसके बिना ऋद्धि सिद्धि समृद्धि वा कोई अर्थ नहीं।¹

भारतीय जीवन म प्राचीन मस्कृति के उत्थान वा अति महत्त्व है। विभिन्न रूपा म लाक मस्कृति का अध्ययन मानवीय भावनाआ को विकसित करके साम्स्कृतिक पुनरात्थान म परम महायक होगा। लाक साहित्य क अध्ययन मे हमारी मूल मस्कृति वा प्रकाश म लाया जा सकता है।

परिम्यतिया के परिवतन मे सम सामयिक मस्कृति के मूल्या म कुछ भेद उत्पन्न होने पर भी लोक मस्कृति के शाश्वत मूल्या को नहीं नकारा जा सकता। लाक मस्कृति और सम सामयिक मस्कृति के अलग अलग नायर बनाने मे शाश्वत मूल्या की उपेक्षा करके व्यक्तिगत मूल्या वा म्थापित करन की चेष्टा मात्र की जा रही। वस्तुत लाक मस्कृति और सम-सामयिक मस्कृति के आदशों म भेद नहीं है। राम रावण और कौरव पाण्डव का थम युद्ध अनक अथम मगतिया के साथ हुआ उसी प्रकार आज भी मर्याणा की म्थापना हेतु अमर्याणा के साथ युद्ध हाता ह। कवेयी की स्वाधीयता के कारण राम वा 14 वष वन म रहना पडा था, आज भी सम-सामयिक हिता के नाम पर किन्न ही राम लिंगम्बर और वीटनिक बने घूम रहे हैं।² युद्ध पहले भी हाता था अब भी हाता है भेद बिभेद पहन भी ये अब भी हैं—इस सब के उत्तर म चाह जितन तक प्रस्तुत किय जायें नाकात्मा प्रभावित नहीं हा सकती।

लाक मस्कृति को सम-सामयिक बनान के बहान विवृत किया हुआ रूप किमी भी मन्थ म नाक का प्रतिनिधित्व नहा करता वह कवल विचारवाणी है आचरणवाणी नहीं। जिस प्रकार शरीर की चमटी का मांग और हृदिया से अलग नहीं किया जा सकता उसी प्रकार लाक मूल्या वा मस्कृति की मूल धारा मे अलग नहीं कर सकन। मस्कृति का निर्माण राजनतिक अथवा व्यक्तिगत आकांक्षा के आधार पर नहा किया जा सकता नाकादय की भावना म किया जाता है। ऐसी स्थिति म लाक मस्कृति के अम्युन्य क परिप्रेक्ष्य क निय ह्म नतिक लाक धारणाआ का ही अणनाना हागा जिसम नवीन मस्कृति लाक मस्कृति क धरातल से विलग हो कर मृगज मुम्बी का रूप न धारण कर ले।

1 रगापन पत्रिका लिंगम्बर-76

2 रगापन पत्रिका म प्रकाशित तब से

लोक कला

लोक साहित्य के साथ ही लोक कलाओं का दशन होता है। लोक जीवन में प्रचलित विभिन्न कलाएँ लोक साहित्य में समाहित हैं—लोक जीवन का प्रस्फुटन अनेक रूपा में होता है। लोक साहित्य और लोक कला साथ-साथ चलते हैं “जहाँ धुन है वही शब्द है और वही नाटक व रगमच है। जहाँ रगमच है वही स्थापत्य और चित्राकन है जहाँ चित्राकन स्थापत्य है उस के साथ लोक गायी जुड़ी रहती है एवं लोक गायी के साथ लोक संगीत जुड़ा हुआ है और लोक संगीत ही लोक साहित्य की निष्पात्ति होती है।¹

पुराने लोक गीतों में प्राचीन लोक चित्रकला का इतिहास है। माहिनजोड़ों और हड़प्पा काल के अवशेषों से राजस्थान में प्रागैतिहासिक सभ्यता की सत्ता वैदिक काल से पूर्व की जाना सिद्ध होता है।

प्राचीनतम काल में सभ्यताओं के अवशेषों में बालकों के खिलौने पाए जाते हैं। चरक संहिता में नाना प्रकार के सुन्दर बजने वाले खिलौनों का वर्णन है।² मोहनजोदड़ो हड़प्पा आदि स्थानों पर खुदाई करने पर प्राचीन सभ्यता के अवशेषों में मिट्टे हुए खिलौनों में भी नृत्य की मूर्ति रखवाड़ी पहिय और प्राणियों की मूर्तियाँ मिली हैं जिनसे हमारी प्राचीन लोक कलाओं का भान होता है। इन कलाओं में मानसिक मनोरंजन के साथ-साथ शारीरिक और मानसिक व्यायाम भी जाना है और नयी नयी बात सीखने का अवसर मिलता है।

सदा से मनुष्य अपने हृदय के भावों का रग और रेखाओं में विविध रूपों में अभिव्यक्त करता रहा है—मानव कभी भी कला शून्य नहीं रहा। लोक कलाएँ जन मानस में गहरी बँधी हुई हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी विरासत में प्राप्त होती रहती हैं। इन कलाओं का सीखने के लिये न गुरु की आवश्यकता है न पुस्तक और पाठशालाओं की।

लोक साहित्य की भाँति लोक कला की भी विशेषता है नामहीनता। कौन सा कला किसने रची कब उसकी सजना हुई यह किसी को पता नहीं। काल हीन होना ही इस के चमत्कार और आकर्षण को अक्षुण्ण बनाएँ हुए है। लोक कला जन मानस

1 रगायन पत्रिका—अगस्त-77 में प्रकाशित लेख में

2 य अथ आप और उपनिषद्वालीन है

लोक कला

की चेतना पर पड़ी छाप को कल्पना और अभिव्यक्ति के स्तर पर प्रतिबिम्बित करती है इसी कारण इस जन जीवन में इतना विस्तार मिला है। लोक जीवन में इस कलात्मक अभिव्यक्ति के कई रूप दृशनीय हैं।

शास्त्रीय दृष्टि से कला के 5 भेद हैं—वास्तुकला, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत कला और साहित्य कला परन्तु लोक कलाकार न शास्त्रीय कला से कही जाये वरन् कला के अनेक रूपा की सजना कर ली। ये हैं—वास्तुकला, मूर्तिकला, नृत्य एवं नाट्य कला, चित्रकला, माँडना, छापना, गोदना, आदि विविध कलाएँ।

शास्त्रों की दुनिया और व्यवहारिक दुनिया अलग अलग चीजे हैं पर अवसर अनुसूचक लोक मायता की ही स्वीकार करना पड़ता है जबकि शास्त्र मायता पुस्तक तक ही सीमित रह जाती है। शिष्ट साहित्य की भाँति शास्त्रीय कलाएँ तो थोड़े से प्रतिभा सम्पन्न लोगों के अधिकार की होती हैं—अब जन उन कलाओं को देख और सुन कर आनन्दित हो लेंते हैं और सभी मनुष्यों में कला के प्रति रूचि भी नहीं जाती—'विभिन्न रच्यो/हलोका सूत्र सुप्रसिद्ध है जो कला के सम्बन्ध में भी लागू होता है। परन्तु लोक कला मानव हृदय की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। यहाँ रूचि का प्रश्न ही नहीं उठता अलग अलग परिस्थितियों में तीज और त्योहारों पर मार्गलिक अवसरों पर मन में भावानुरेक की स्थिति में मानव हृदय गीत, धुन, नाद, ताल, नृत्य और रंग रखाया वा रूप धारण करने स्वतः ही अभिव्यक्त होने लगता है। व स्वर तान और रखाएँ कभी ही क्या न हों—उनके लिये कला कौशल चातुर्य और शास्त्रीय गान की क्विबल अपेक्षा नहीं—वान्तर में पीढ़ी दर पीढ़ी परम्परागत आई हुई इन कलाओं में अनेक व्यक्तियों की बुद्धि, समझ और प्रवृत्त कौशल का समावेश होने से परिष्कार होता रहा है और आज व हमारे सामने अत्यन्त निम्नरे हुए परिमार्जित मनमोहक रूप में प्रस्तुत हान लगी हैं—अभिव्यक्ति में और भी अधिक मौनपूर्ण बनजाने की सम्भावना है। परन्तु इन लोक कलाओं में हान वाला परिवर्तन लोक जीवन को तथा माय हागा जब कि उनका मूल शाश्वत तत्व जो लोक मानस को सावभौम साम्यता का प्रतीक है वह बना रहें। परिवर्तन करने के प्रयास में लोक कलाओं के क्रियान्वयन में माय माय उनमें विश्वास और आस्था में पूर्ण पक्व उत्सव और सामूहिक आयोजन व स्थान पर आनन्द उल्लास के तत्त्व आदि केवल मनोरंजन हेतु माँड दिए हुए प्रतीक हो रहे हैं। औद्योगिकरण के द्वारा हस्त में जा लोक गीतों में परिवर्तन हुआ है वैसे ही कुछ अनुकरण की प्रवृत्ति भारत एवं अन्य देशों में भी दृष्टि आ रही है। इस प्रकार की कविता व नृत्य आदि भावना की अपेक्षा तब की अधिक पूना है। वह लोक कला तब कलाएँगी जब वह समष्टि का हृदयगम करने सब माय बन जाय।

यही स्थिति मूर्ति कला, चित्र कला आदि माय कलाओं की है। लोक मानस में उन्मादित कला आन्तरिक भावा एवं संस्कारों में पूर्ण तथा स्वतः प्रतिरि होती है जो जन जीवन में स्वभावतः विभिन्न रूपों में व्याप्त है।

लोक जीवन ममष्टि जीवन है उसका माथ धर्म, विश्वास और आस्थाएँ म्निगन हाकर जुड़ी हुई हैं—उनके बिना न लोकगीत लोकगीत रहगे न लोकनृत्य लोकनृत्य ।

वास्तु कला—लोक जीवन म सामान्य जन के मराना एव मन्दिरा आदि म वास्तु कला का स्वरूप दशनीय है । यद्यपि भवन निर्माण विलंबुस सरल सीधा गर्मी, सर्पि और वर्षा से बचाव की मुविधाया मात्र का ध्यान म रख/कर हाता है । चाह वह मिट्टी गारे और गावर स ही क्या न बनाय जाय फिर भी उनम मानव हृदय की कलात्मक अभिव्यक्ति कुछ अगा म पाई जाती है । राजस्थान म य मवान अधिकतर जान मिट्टी स पुत टूए हाते हैं पर उपर स धार्मिक आस्था क फलस्वरूप दवी देवताया के चित्र यभ यभणी की गाया का कोई श्य अथवा लोक देवताया के शीय का प्रत्यन रूप घोड हाथिया पर सवार हुए चित्रित हात हैं । घरा क मुख्य द्वार पर तारण (ध्वजा) फहरा रही है वही रग विरगा पून पत्तियाँ चित्रित हैं । घर आंगन के बडे-बड दानाना के लम्भा पर भी इसा प्रकार विविध चित्र खुदे हुए रहत हैं—मन्दिरा के बाहर की धार भी राम कृष्ण दुर्गा काी माई और लोक देवी-देवताया क चित्र अनेक रूपा म चित्रित पाय जाते हैं । मन्दिरा की छता क ऊपर गुम्बजा की बनावट भी लोक मानस क कला प्रम की छानक हाती है । वास्तव म आभिजात्य वास्तु कला का मूल हम रमी लोक कला म मिलता है । जन जीवन की सांस्कृतिक भावनाया ने घर मन्दिर तथा अन्य प्रकार क भवना क निर्माण म जिस कला प्रम का परिचय लिया वही विकसित हात-होन आज श्रित मानव की बुद्धि क बल स परिष्कृत हाकर उन उँचाइया पर पहुँच गई कि नित्य नई उन्भावनाएँ वास्तु कला मे हात लयी । मुस्लिम शासन के समय इस कला का स्तर शाहजहाँ द्वारा मुमताज बगम की स्मृति म निमित ताजमहल म दशनीय है ।

आधुनिक मन्दिरा म देवालय के बाहर की धार धार्मिक प्रवा - गीता रामायण गुरु वाली और जन शास्त्रा—क स्तात्र आदि चित्रित किय जाते है जिस स मन्दिर म प्रवेश के साथ हा भक्तो का मानसिक वातावरण भक्ति भाव म पूरा हो जाय । लोक जावन म शिष्या के मस्कारा का स्पश न हाते हुए भी वही भाव मृष्टि ऊपर बणित देवी देवताया के सामान्य चित्राकन द्वारा की जाती थी ।

राजस्थान म जहाँ-तहाँ मन्दिरा म लोक देवतायो भरव रामन्वा तजाजी आदि क शीय एव उनकी अलौकिक शक्ति के परिचायक चित्र अंकित हैं जो दशनाथ आने वाल जन समह क हृदय म इन लोक देवा के प्रति आस्था का और भी अधिक प्रगाह बनाने म योग देते हैं । इस प्रकार लोक जीवन म वास्तु कला का भी सांस्कृतिक भावनाया को विकसित करन की शक्ति से महत्वपूर्ण स्थान है ।

मूर्ति कला—लोक जीवन म मूर्ति कला कई रूपा म पाई जाती है—
1. व्रतानुष्ठान क लिय घरा म स्त्रियाँ मिट्टी की मूर्तियाँ—मालगराम गारो गणेश,

बनानी तथा लाल दूरी देवनामा की—बना कर पूजा करती और बन बना-बहानी कर्तनी सुनती हैं। मागनिक भवसर विवाहादि के अवसर पर भी सर्व प्रथम गणेशजी अववा विनायक पूजा एभी ही मिट्टी की मूर्ति बना कर की जाती है।

2 सुदर-सुदर रंग म रंग कर मिट्टी के विविध विलीन बनत हैं। मानवीय आकार स्त्री पुरुष व बालका के भी बनते हैं पर विशेष कर पशु पक्षिया के विभिन्न रूप—गाम बकरी कुत्ता बिल्ली सिंह चीता लामडी, सारस बबूतरा वी जोड़ी तोना मैना और कई प्रकार की चिटिया बनाने हैं और घर घर में बालका को इनमें खेलते देखा जाता है।

3 गाँवा म मिट्टी के देवी-देवता पूजा के लिय बना लते हैं जो जन मानस की मन्य धार्मिक आस्था का प्रतीक है। मंदिर देवालय दूर पडते हैं, नित्य प्रति जाना सुविधाजनक नहीं हाता बन मृण्मूर्तियाँ बनाकर ही दैनिक भयवा विधि तपोहरादि अवसरा पर गृहस्थ जन उपासना कर लते हैं।

4 मूर्ति बना का यह स्वरूप भी धार्मिक आस्था म ही सम्बन्धित है—विधि पूजा के अवसरा पर गणेशजी भयवा गौरी की मूर्तियाँ बनाकर 5 दिन पूजा उपासना की अवधि पूरा हान पर उह ननी या तालाव म विसर्जन किया जाता है।

इम प्रकार विचार करन में विनिहाना है कि जन जीवन में सदा म मूर्ति बना का बीज बपित हुआ है और आज आधुनिक युग म भी उसका कोई न काई हर दृष्टि आना है।

नृत्य एव नाट्य कला—प्रभिजात्य नृत्य एव नाच्य कलाका की शानि तक जीवन म भी लोक नृत्य और लोक नाच्य लोक कला की मुह बोलती विधा हैं जो यन तत्र सबत लोक प्रिय बनी हुई है। आदिम काल म जन मानस म स्फुरित हिनारें गीत और नृत्य रूप म उच्छ्वमित हाकर जन जीवन म आनंद की सृष्टि करला हुई मनोरंजन का साधन बनी आ रही है। स्वत प्ररित भाव तहरी और नृत्य तथा जन जीवन म व्याप्त बना बहानिया म जाड कर लोक नाच्य का रूप धारण करके रंग मंच पर उतर आरी है। इन कलाका का विस्मृत बरण ता मनन ही एक भाष का विषय हागा, यहाँ मनेन रूप म इनका परिचय दिया जाता है।

दश के विभिन्न जन पना नगरा और गौदा म राम-कृष्ण और लोक देवी देवनामा का गाथाका पर राम तोला रामचोला नाटकी पर नृत्य के माप हान रह है। विधि कर उत्तर प्रंश म मधुरा वृत्तान और अथाथा आदि म्थाना म नाच्य मण्डलियाँ वय के निविकन महीना म अथ प्राजा म भी कला प्रशसन हू जाना रहता थी। दशरथ द्वारा स्वच्छा म न्यि पुम्बवार के अनिरित आयोगक वग मन्चय करक उह व्यय पूनि के त्रिग मेट मने थ त्रिमम य तक कलाकार धरनी जाविका भा बसा लने थे। विद्वान्त आदि के प्रचार म लोक रजन के य साधन लुप्तजाय हा गय—परन्तु अब भी किरी म्थ म लोक नृत्य धार लोक नाट्यो का प्रचलन है।

होली आदि त्योहारों पर गावा में और छोटे नगरों में भी इस प्रकार की नाटक मण्डलियाँ अथवा बहुरूपिया वेप बनाये टोलियाँ नाचती गाती मस्ती में घूमती पाई जाती है जिससे जन समूह पूरा उरसाह से आदासित हुआ आनन्द विभोर होता है।

भारतीय लोक नृत्य और लोक नाट्य मूलतः एक त्योहार देवी-देवता, आस्था और नीतियों से जुड़े होते हैं। राजस्थान का घूमर और गवरी नृत्य व नाट्य इसी प्रकार के धार्मिक आस्था पूरा अनुष्ठान हैं। इनके अतिरिक्त देवी देवताओं के चरित्र चित्रित करके विभिन्न स्थानों पर धार्मिक आस्थावान भोप^१ नृत्य रूप में प्रदर्शन करते हैं। पाबू की फड^२ इस लोक कला का अत्यन्त लोकप्रिय नमूना है। नवरात्र आदि के अवसरों पर आयोजित रातिजगा में विशेष कर पाबू जी का फड पर चित्रित उनकी जीवन घटनाओं के अनुसार गीत गा गा कर उन्हीं भावों का नृत्य एक अभिनय में प्रदर्शन करने का प्रचलन है। पाबूजी की रहस्यमय शक्ति में आस्था रखने वाला जन समूह अपने परिवार से दुष्प्रभाव का दूर करने हेतु इन भाषा को आमंत्रित करता है।

रगमच—नाट्य कला के रगमच रूले मदाना में होते हैं—गाँवा में कहीं चौड़े मदाना में चबूतरे पर या तखत बिछा कर रगमच तयार हा जाता है कोई मूल्यवान साज-सज्जा या पर्दों आदि की आवश्यकता नहीं। राजस्थान में लोक नाटकों का ख्याल कहते हैं। इन ख्यालों के अभिनय में नगाड़ा ढालक और सारंगी आदि वाद्य यंत्रों का प्रयोग होता है। नाट्य कला की विनयता अभिनय में समाई है—इनके अभिनय में लोक मानस की तरंग और मस्ती का छोटक, नाचना बूझना अधिक रहता है—आधुनिक नाटकों के गम्भीरता पूरा हाव भाव नहीं। ख्याला में अभिनय के साथ कथोक्तयन भी गेय होना है—अभिनेत्रियाँ व गान का और वाद्य यंत्रों के बजान का ढंग भी इनका अपना ही हाता है—डंके की चाट मुन-मुन कर आस-पास के गाँवों के लोग भी आकर इकट्ठे होने जाते हैं।

लोक नाटक दशक तथा अभिनेताओं के लिये एक सम्मिलित प्रणाली है यह आचलिक संस्कृति का पापक^३ है। इन नृत्यों में उन्मुक्तता व सहिष्णुता होनी है। अभिनेता का दशक व साथ स्वाभाविक अपनत्व रहता है अतः हृदय पर अधिक प्रभाव डालते हैं। लोक नाट्यों में लोक रचि लोक भावना और लोक कल्याण की प्रमुखता रहती है। साहित्यिक नाटकों लोक नाट्यों की अनौपचारिकता से प्रेरणा ले सकते हैं।

१ राजस्थान में लोक देवताओं के पुजारी को भाषा कहते हैं

२ पाबूजी राजस्थान में एक महान् लोक देवता हुए हैं—उनकी प्रणामा में रचे हुए वीर रस के गीत रावण हत्य (वाद्य विनय) का बजा बजा कर गाने हैं।

राजस्थान एव कई अन्य स्थानों में भी सामन्ती युग मनुष्य निम्न श्रेणी के लोगों की नृत्य आदि कलाओं का उद्देश्य राजाओं और सामन्त, जमींदार, ठाकुर, पटल, जाति के भ्रमों का मनोरंजन करने के घन भजन हो गया—इससे कला की स्वाभाविकता क्षीण होकर स्तर भी निम्न बनने लगा था। इस प्रकार का गाना बजाना साधारण जन स्तर पर सामूहिक आनन्द का साधन न रह कर व्यक्तिगत एव वर्गीय मनोरंजन का रूप धारण करने लगा। पञ्चस्वरूप उच्च स्तर का प्रदर्शन होते हुए भी कलाकारों का दर्जा उसमें हल्का माना जान लगा जिनका वह मनोरंजन करते थे—मनोरंजन प्राप्त करने वाला गायक गायिकाओं का पुरस्कार देकर अपना बड़प्पन स्थापित करता था। इस स्थिति में यहाँ तक गिरावट आई कि ये मनोरंजन प्रदान करने वाले लोग की जातियाँ ही भ्रमण बन गईं जो याचकों की गिनती में आने लगीं। इनकी मनावृत्ति भी ऐसी बन गई। वे लोग प्रयत्न में रहते थे कि पुरस्कार दाताओं का खुश करने के लिये जितनी अच्छी कला दिलायेंगे उतना अधिक इनाम मिलेगा। यह स्वाध परक अथ प्राप्त का उद्देश्य बन जाने से कला का स्वतः प्रेरित प्रकृत रूप नष्ट होन लगा।

सामन्ती युग की समाप्ति पर धीरे धीरे लोक कला न फिर से अपना रूप संहाला लोक कला प्रेम जनता का ध्यान इन्हें अपना ही ओर गया और लोग प्राचीन गीतों नृत्यों एव अथ कलाओं की खोज में प्रवृत्त होन लगे। राजस्थान में पिछले दो दशकों में इन कलाओं के विकास पर विशेष काय हुआ है। लोक कलाओं के उन्मादक डा० देवी लाल सामर द्वारा प्रस्थापित लोक कला मण्डल उदयपुर ने लोक एव नाट्य कला को अंतर्राष्ट्रीय मंच तक पहुँचा कर इन लोक कलाओं की शक्ति-मत्ता का सुन्दर परिचय दिया है। इनके भवाई नृत्य गौरी नृत्य और कठपुतलियाँ आदि यहाँ की उत्कृष्ट लोक कला के विशेष नमूने हैं।

चित्रकारी—लोक-कला का सम्बन्ध त्योहारों से बधा हुआ है। भारत भर में त्योहारों के अवसर पर अनक रूपों में लोक कलाओं के दर्शन होते हैं। मानवा, निमाड गुजरात, राजस्थान और उत्तर प्रदेश आदि स्थानों के त्योहारों की आत्मा मूलतः लोक कला से जुड़ी हुई है। दीवारों पर चित्र चोष गणेश चोष हाई अष्टमी, धारणी एव कई त्योहारों पर घर के आँगन तथा दीवारों पर पूजा के लिये विभिन्न चित्र बनाने पर जो अपना के रूप में रंगों से चित्रकारी करना फूल पत्तियों में घर के द्वारा का सजाना आदि परम्परागत लोक-कला की अभिव्यक्ति गहन दर्शनीय है। इन चित्रकारियों एव कलात्मक सजावट में धार्मिक आस्था और विश्वास का आधार पर लोक मानव का कला प्रेम और कला को अभिव्यक्त करने की क्षमता प्रकट होती है। इन कलाओं में विशेष योगदान नारी का रहता है।

वस्तुतः नारी के भावुक हृदय में आस्था और विश्वास का वेग पुष्प की पंखा अथिब प्रबल है। और वह गह्वामिनी है उमका क्षेत्र प्रधानतः घर ही है

अतः त्यौहारों का अन्वय पर उसे अपन हृदयगत भावों का कला के रूप में व्यक्त करने की सहज प्रेरणा होती है। प्रारम्भ में कल्पित यह कला टेढ़ी-मेढ़ी रखाया ही चित्रित हुई है परन्तु परम्परा से आये हुए उन चित्रों में अनेक स्त्रियों की प्रकृत प्रतिभा का योग से विकास होने-हात सुन्दर चित्रकारी का रूप खिंच आता लगा।

सावन भांग के मुहावरों हरियाले वातावरण में जन मानस आनन्दित हो उठता है। वर्षा ऋतु की समाप्ति और शरद ऋतु की आगवानी रूप आश्विन महान के सुन्दर मन भावन वातावरण में विशारिया के मन का उल्लास साभा या सभ्या त्यौहार के रूप में प्रकट होता है। इस अवसर पर विशारी बालिकाएँ दावारा पर गावरी या गेरू से साँझी चित्रित करके फूँट पतियाँ से सजाती हैं। पश्चिम दिशा में सभ्या की चालिमा छा जाती है और साँझी फूँटी का विविध रंग दीपकों की ज्योति में नवरंग बिखेरते हैं। साथ ही बालिकाओं का सुरीले गठों में साभा के गीत प्रस्तुतित हान गगने है।

साभा फूँटी के भित्ति चित्रों के ये नये कलाकार पूरे श्रद्धा भक्ति में साँझी की आरती उतारते हैं—टोली बना-बना कर गीत गाते हैं—

सजा रहे नडी, बाजार में खेले,
बाजार में रमे या कोन जो की बेटी
या चाँदजी की बेटी खाय खाजा रोटी
मेरे माणक मोती ठकुराणी चाल चले
निमाडी बोलो बोलो।¹

वाल्मीकाल से ही यह धार्मिक आस्था जन जीवन में मस्कार डालनी आती है, जिसके फल स्वरूप मानवीय भावनाएँ विकसित होकर पारिवारिक और सामाजिक जीवन का उल्लसित करने में सहायक होती है। लोक जीवन में आस्था और विश्वास के बल में जो मास्वृतिक भावनाएँ बनी हुई थी और भौतिकवादी युग में जो बुद्धि और तर्क में उलझे हुए मानस में लुप्त जाती जा रही है उन्हें पुनः विकसित करके स्वस्थ समाज की स्थापना हेतु साहित्य रचना और गीतों आदि धर्म प्रथा का प्रचार का साथ साथ लोक कलाओं का यथाथ रूप में पुनः स्थापना से सहज ही लक्ष्य पूर्ण होगी।

घर आँगन से आरम्भ हुई लाक कलाएँ बालातर में पूजा गद्दा भित्ति चित्रों, कक्षाकारों नक्काशी और वण भूषण तक भी पहुँच गईं। मंदिरों के द्वारों पर भीता पर वृत्तों पर और सरोवरों के तटों पर चित्रों के रूप में लोक मानस का कला कोशण चित्रित होने लगा। ये चित्र विष्णु पर देवी-देवताओं की आकृति के और चन्द्र सूर्य नक्षत्र आदि दीपकों आदि पूजन सामग्री फूल पत्तों चड़ पोपल आदि

1 साँझी के गीतों का साँझी फूँटी कहते हैं।

2 रगायन पत्रिका—मिर्माचर 76

प्रकृत पदायों तथा लोक देवी देवताओं के होते हैं। जन मानस की कल्पना शक्ति जो रूप और आकार अपनी भावनाओं को दे सकती है वही तब य लोक कला अनेक रूप धारण कर तीज त्यौहारों और विवाहादि विविध मागलिक अवसरों पर अभिव्यक्त होती रही। य कलाएँ हमारी संस्कृति की धरोहर हैं।

आधुनिक भौतिक एवं मानविक तनाव के युग में भी य लोक रजनी कलाएँ मन का आत्म लुप्टि और जीवनी शक्ति प्रदान करती हुई जीवन प्रवाह को शाश्वत बनाये रखने वाली हैं।

इन कलाओं के सज्जन की सामग्री मिट्टी से बन रंगीन द्रव्या—गेहूँ आदि में प्राप्त हो जाता है। गहरे और लाल पीले काले, हरे प्रचलित रंगों में रंगी मिट्टी आदि का प्रयोग अधिक होता है। चित्रकारी के रंग कला कृतियों के गुणों के साथ साथ मानव चरित्र के भी परिचायक होते हैं। विविध भावनाओं, आकांक्षा तथा प्रतीकात्मक संकेतों का भाव दल रंगों में हो सकता है। कला विगोपन रंगों की परख में कुशल होते हैं।

मागलिक अवसरों व त्यौहारों पर भित्ति पर धापे रखना भी लोक कला का एक प्रकार है। छान्नी वादिकाएँ हाथ सम्हालते-सम्हालते धापा बनाना, चौक पूरना, अलपना माँडना पुजापा तयार करना भीय जाती हैं और इन लोक-कलाओं में विपुल विशारियाँ पूजा करके प्रदर्शित होती हैं। इन कलाओं में जहाँ नारी जीवन की साम्प्रदायिक सम्पन्नता मिलती है वहाँ पीढ़ी दर पीढ़ी परम्पराओं की श्रुतता बढ़ियाँ जुड़ती चलती हैं। य धापे आदि की कलाएँ जाति वर्ण धर्म सम्प्रदाय आदि सीमाओं में पर असीम निस्सीम होती हैं।¹

माँडना—लोक जीवन में माँडना कला का कई रूप दृष्टि आते हैं। महती माँडना अल्पना, घण्टा आदि पर कई रंगों में मागलिक चित्र माँडना और पैरों में मन्थर माँडना आदि में नारी के मानस का कला प्रेम और मातृवृत्तिक भावा की अभिव्यक्ति होती है। माँडना शब्द राजस्थानी भाषा का है। य मंगल सूचक, आचार विचार मूलक मानव मन की अभिव्यक्ति होते हैं।

मागलिक अवसरों पर पूजन के लिये नवग्रहों के प्रतीक रूप बनाये जाने वाले धाटा हल्दी कुसकुम एवं रंगों में जो चित्राणि बनाये जाते हैं व भी माँडना का ही रूप है—शब्दों, दोहाओं आदि साम्प्रदायिक पदों पर इन्हें बड़ा रूप दे लिया जाता है।

महती माँडना में लोक कला का सूक्ष्म मौल्य परिलक्षित होता है। मौसाम्प्रदायिक स्थितियों और कुँवारी कथाएँ भारत के दक्षिण सभी प्रांतों में तीज, मनगौर कथा चौबे और दोहावली आदि त्यौहारों पर एवं विवाहात्मक में सतिजगता आदि विगोपन अनुष्ठानों में अति महती मंगली हैं। यद्यपि य लोक कलाएँ प्राचीन

काल में दूल्हा के हाथ पाँव में भी महती लगाई जाती थी—घब भी जो प्राधुनिक विचारा के शिथिल लड़के महदी लगवाना पसन्द नहीं करने मागलिक प्रतीक रूप में उनकी भी माता शकुन रूप में महदी अवश्य स्पर्श करा देती हैं। राजस्थान में महती मौन की कमा अत्यन्त विकसित रूप में पाई जाती है—सूती मेंहनी घाल कर उसमें इनना बारीक तार उठा कर अपनी उँगली के पोरक से सुन्दर चित्रकारी करती हैं जो चित्रकला के विनायक ब्रुश और वृन्निम रंगा से किसी प्रकार कम नहीं है। बल्कि यह चित्रकारी नारी के स्वतः प्रगित मनोभावा से स्फुरित होने के कारण वहीं अधिक मनभावनी, आनन्ददायिनी एवं मंगल की विधायक हाती है और इसमें उन निरक्षर नारी वगैरे की प्रकृत प्रतिभा का परिचय मिलता है जिस किसी पाठशाला में जाकर न पढ़ने निखने का सुभवसर मिला न चित्रकारी आदि कलितकलाओं को सीखने का।

महावर माँडना—मागलिक अवसरों पर पाँवा में दाल गुनाबी और बगनी रंगा से महावर लगाने हैं जो सांस्कृतिक भावनाओं की प्रतीक रूप सौभाग्यवती स्त्रियाँ के शृंगार का एक अंग माना जाने के साथ-साथ पुत्र जन्म और विवाह आदि अवसरों पर मागलिक प्रतीक रूप में प्रचलित है। पुत्र जन्म पर और नव बधू के शुभागमन पर घर की नायन आकर प्रथम जच्चा और नवागता बधू के महावर चित्रित करती है। साथ ही परिवार की अन्य उपस्थित सौभाग्यवती स्त्रियाँ के पाँवा पर स्वास्तिका विह्वान्कित महावर माँड कर वह नामन दक्षिणा प्राप्त करती है। जच्चा-अच्चा और नवविवाहिता बधू के लिये सभी सौभाग्यवती बहिनो के हृदय जुड़ाव हुए उनके लिये व्यापक रूप से मंगल कामनाएँ प्राप्त करने तथा सांस्कृतिक भावनाओं का विकास में हमारी ये लोक कलाएँ कितना योगदान देती हैं।

इसी प्रकार स्वस्तिका लोक-कला की एक सुन्दर कृति है। स्वस्तिका को कई नामों में अभिहित किया जाता है—सामान्यतः इसमें सतिया कहते हैं पर शुद्ध रूप सानिया स्वस्तिका और सात्या हैं। इसका अर्थ है शुभ सुख कल्याण, मंगल अथवा उत्कथ। ऋग्वेद की ऋचा में स्वस्तिका को मूल का प्रतीक माना है—चारों भुजाएँ चारा निशाएँ हैं जा शक्ति प्रगति प्रेरणा और शान्ति की प्रतीक है। चार युग—(सतयुग त्रेतायुग द्वापर और कलियुग) चार वरुण—(ब्राह्मण क्षत्रिय वश्य और शूद्र) एक चार आश्रम—(ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ और सन्यास) स्वस्तिक का ही प्रतीक है।¹

स्वस्तिका का विष्णु भगवान् का मुद्रा चक्र भी कहते हैं—जब बौद्ध सिक्ख सभी इस मंगल चिह्न रूप में अपनाते हैं। त्यौहारों और विवाहादि के अवसरों पर चाक पूजन समय चाक पर देटी की विदा के समय देहली पूजन में बटे को उत्तराधिकार मित्रने समय उम की पगड़ी में रोली से स्वस्तिका बनाई जाती है। पानी

के कला पर अथवा नया घडा निकालने पर धी के सतिया की प्रया अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है—गाँवा म अथ भी यह मागनिक भावनाएँ स्थानीय है। व्यापारी वर्ग दशहरे अथवा दोसावती पर नई बहियाँ धारम्भ करते हैं उनम भी मंगल भावना का प्रतीक सतिया बनाया जाता है जिसम वय भर व्यापार सुख समृद्धि का दाता बना रह। उस प्रकार स्वस्तिका हमारे परिवार समाज और राष्ट्र का मागनिक प्रतीक ही नहीं बल्कि समग्र मानव चेतना के ज्यरति जयति और मंगल का प्रतीक रूप मला जाता है।

मंगल भाव के परिचायक आचार विचार मलक मानव मन की अभिव्यक्ति हान के कारण विवाहादि मागलिक अवसरा पर नवग्रहा के प्रतीक रूप बनन वान धागा, हल्दी और रगा मे बन हुए चक्र स्वस्तिवा आदि भी मीडिया की ही भावति हैं।

अपना—स्योहार) पर एव नव वधू के के स्वागतार्थ घर के अंगन से प्रवेश द्वार तक भूमि को गेहू म पोन कर चावल हल्दी से तैयार किये पीने ऐनक स पाँवडे बनाए जाते थ। अथ बडे नगरा के शिगिल अना मे उसे चित्रकारी का परिष्कृत रूप मे दिया है जा अलरना कहनाता है। मागलिक अवसरा पर कई घट रने जाते हैं उन पर भी मीडिया की सुन्दर कला की अभिव्यक्ति हानी है। वस्तुतः मीडिन भी उन जीवन म प्रचलित चित्रकारी क ही रूप हैं।

छापना—वस्त्रा पर छपाई का प्रचलन चिर काल मे चलता आ रहा है। आइने पोमके लहंगा के कपडे और साडियाँ आदि पर देश म सभी जगह विविध रंगा म छपाई हानी है, परन्तु राजस्थान के विभिन्न स्थाना की छपाई का अणन्य विगिष्ट महत्त्व है। जोधपुरी बबज की छपाई जयपुरिया बूँदगी और सींगानरी माहियाँ क पात्रके अलग अलग तरह की छापना लिय हानि हैं। विवाह के अवसर पर बहिन के निचे घान में भाई छोरी हुई कुँदरी नकर आता है और नव वधू का भी कुँदगी उगाई जाती है—शिशु जन्म पर नाम कारण संस्कार क समय जन्वा अपन पोपर म धावी पीनिया आइनी है उममें भी पीन आइन पर लान रंग की छपाई हाता है। यही प्रयाएँ उत्तर प्रन्थ आदि अय प्राता म भी पाई जातो हैं।

गोइना—विभिन्न जनपना—विगप कर भादिवामी क्षेत्रा म नारी जगल म गान्न की कला प्रचलित है। हाथ-नाथ के सिद्धन भाग और बाँहा पर म्त्रियो नीन हरे रग के गान्न शृंगार क रूप म चित्रित करती हैं। इस कला का जन्म सामील सतिमाया म अयन भी हाता है। नाक संरहति म गान्ना का सीमाय मूचक माना जाता है। जन जानिया म इस आभुषण की भाति प्रिय मानत हैं जिसम रंगा का सुन्दर कानन की भावना निहित है अिन प्रकार राजस्थान आदि म महदी रंग प्रतापन विगप है इसी प्रकार नैराज नगाई की जन जानिया म गान्ना माना जाता है। गान्ना क कई रूप प्रचलित हैं जा जानाय परम्परा एव धारणा आदि पर आधारित हाता है।

समस्त लोक साहित्य की भाँति कथाएँ भी बड़ी गहरी जड़ रखती हैं। साहित्य रचना में वेद प्राचीन ग्रंथ मान जाते हैं परंतु लोक कथाएँ उन सभी से पुरानी हैं। साहित्यिक रचना तो मानव सभ्यता के साथ साथ विकसित हुई परंतु कथाएँ इसके विपरीत सभ्यता से पूर्व की वस्तु हैं जो मौखिक परम्परा से आती हैं। लिपिबद्ध होने के कारण आज सभ्यता के युग में भी उपलब्ध हो सकी।

डा० सत्येन्द्र न लोक-कथा के उदभव पर प्रकाश डालते हुए बताया है कि आदि मानव ने प्रकृति के विविध व्यापारों से मिलने वाली शिभाओं का ग्रहण करके कल्पना के तत्त्व से इन प्रकृत व्यापारों का कथा का रूप दे दिया जिनमें मनोरंजन अथवा नैतिक शिक्षा की प्रधानता रही। ये कथाएँ विविध मानव समूहों द्वारा विविध भौगोलिक प्रदेशों में ले जाई गईं और अपने मूल रूप से धीरे-धीरे साधारण नैतिक कहानियों के रूप में जन-मनुष्यों में प्रवाहित हो गईं। उन्हीं के समान ढाँचे पर नित्य प्रति के व्यावहारिक विषयों पर लौकिक कहानियाँ भी रच ली गईं।¹

प्राचीनकाल में जो कोई भी व्यक्ति या घटना असाधारण प्रतीत होनी थी उसी पर लोक-कथा या गीत रच लिया जाता था। पर आज हमारा मानस इतना शिष्ट और संस्कृत बन गया है कि लेखनी के बिना कथा ही नहीं बनती साहित्य-रचना कृत्य कुछ प्रतिभाशाली व्यक्तियों का रह गया। ऐसी साहित्यिक रचना सामान्य लोक की समझ और पहुँच से दूर की वस्तु है। फलस्वरूप राष्ट्र और समाज के अत्यंत उज्ज्वल चरित्रों की कथा सर्वसाधारण की सीमा के बाहर रह जाती है। यही कारण है कि नवीन युग में देनीयमान नक्षत्र रूप श्रेष्ठ आत्माओं का जीवन चरित्र शिक्षण सत्याग्रहों में अवश्य पढ़ाया जाता है पर उनकी जीवन-गाथा पर लोक-कथाएँ व गीत नहीं रचे जा सके न ही उनकी चारित्रिक विशेषताओं से लोक जीवन साभावित होकर राष्ट्र के चरित्र गठन में योग दे पाया। केवल घटनाएँ और कथा विधान ही ऐसा रह जाता है जो मूल कथा से सम्बन्धित था।

लोक साहित्य के अवपक विद्वान् विद्वान् क्रिटिज न लिखा है कि परम्परागत गीत कहानियाँ और अंधविश्वासों में सर्वसाधारण की रूचि हाना आधुनिक दुनिया की नवीनता नहीं है। लोक जीवन के रीति रिवाजों की ओर अठारहवीं शताब्दी तक के लोगों का ध्यान उनकी सन्तानों में कम आकर्षित नहीं हुआ।²

वैश्वंश में यज्ञ विधि और अनुष्ठान सम्बन्धी कहानियाँ हैं। विविध देवताओं के कृत्य ही इनके विषय थे। रामायण और महाभारत से आई हुई विभिन्न कहानियाँ भी लोक-कथाओं से विकसित हुई हैं। वेदा की बीज रूप कहानियाँ पुराणों में पल्लवित और पुष्पित हुई पाई जाती हैं।

1 अज लोक साहित्य का अध्ययन पृष्ठ 13-14

2 इट्रेस्ट इन द ट्रेडीशन ऑफ बनेडम स्टारीज एण्ड सुपरस्टीशस ऑफ कामन फोक इज ना नाविल्टी ऑफ रिसेट एज। द कम्पन्स ऑफ द फोक ना लय देन देयर सन्स एट्रेक्ट द एट्रेजन्स ऑफ द एनीय सन्तुरी।

लोक-कथाओं का जन्म उस समय हुआ था जबकि मनुष्य कल्पना, कथा और इतिहास में अन्तर नहीं कर सकता था। स्मृति पटल पर जीवित रहने योग्य घटनाएँ जन जीवन में व्याप्त होकर लोक-कथाओं अथवा गीतों के रूप में अमर हो जाती थीं उन्हें चाहे कल्पना कहिये, कथा कहकर सम्बोधन करिये अथवा इतिहास के पत्रों में बाधिये। एसाइक्लोपेडिया ऑफ ब्रिटेनिका ने उसे विशुद्धलिखित इतिहास कहा है। मैक्समूलर तथा अन्य विद्वानों का मत है कि इन बर्दिक दबी दबताओं की कहानियाँ वेगो से भी पुरानी हैं। वेद में कितने ही वृत्त कहानी के रूप में हैं। वेद में बर्दिक और लोक कहानियों के विशद भाग का मूलाधार है। लोक कथाओं के नितान्त बदले हुए रूप में पाया जाना भी उनकी प्राचीनता का प्रमाण है। मौखिक परम्परा से अनेक कारण अनेक लोक-कथाएँ विकसित होते होते प्रायः विलुप्त परिवर्तित रूप में मिलती हैं। न' उनके उदगम स्थान का पता है न वास्तविक स्वरूप का। पाश के नाम तक लुप्त हो गये हैं। विभिन्न भौगोलिक प्रदेशों में विभिन्न नाम रख लिये गये हैं।

लोक-कथाओं में कहानी तत्व की प्रधानता होती है और कल्पना तत्व को शिष्ट मानव तत्व कहना उपयुक्त होगा। यह तत्व कथा के निर्माण निमित्त न होकर सबदना की सृष्टि करता है।

प्राधुनिक कहानी की भाँति इन कथाओं में सप्रयास चित्रित चरित्र चित्रण और मनावज्ञानिक विश्लेषण न होने हुए भी कथा में ब्रह्मिण चरित्र मीन प्ररक एवं मनावज्ञानिक उपदेष्टा का काम करते हैं।

प्रकृत साहित्य में प्रकृति भी मानव की सहचरी के रूप में चित्रित हुई है। प्राचीन एवं प्राधुनिक साहित्य में प्रकृति चित्रण आलम्बन, उद्दीपन रहस्यात्मक एवं प्रतीकात्मक रूप में हुआ है पर लोक वाणी रूप इस साहित्य में प्रकृति मानव के जीवन में घुली मिली दृष्टि प्राणी है। प्रकृति के सुरम्य प्राणण वनवाटिका घेत, खलिहान, नदी तट और घाटी चट्टानों में विचरण करता हुआ मानव नदी नाना पथत समुद्र और आकाश आदि प्रकृति के विभिन्न रूपों में निबट सम्पक में जीवन यापन करता है। वृषा और लताएँ धूप पानी में उसकी रक्षा करती हैं। पशु-पक्षी उममें बानालाप करते दुख में बानर और कठिनाई के समय मनुष्य का हाथ बँटाते पाय जान हैं। इस प्रकार लोक-कथाओं में पशु-पक्षियों का ससार भी मानव जगत में एकाकार हुआ प्राणीत होता है। कालिदास की भाँति लोक गाथाकार का भी प्रकृति का बर्दिक कहें तो प्रत्युक्ति न होगी।

लोक-कथाओं के प्रकार अनेक हैं जमें धन और त्यौहार सम्बन्धी धारण्यक भूत प्रत, जादू-टान आदि की मनोरंजक कथाएँ प्रम गाथाएँ और वीर गाथाएँ आदि किन्तु कौटुम्बिक कथाएँ अपना विशेष स्थान रखती हैं जिनका प्रधान स्वर है उपदेश वृत्ति और मनोरंजन। पीढ़ी दर पीढ़ी बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ ये कहानियाँ बालक-बालिकाओं और बहू-बहिनियों को सुनाती खली आई हैं। ये कथाएँ जीवन के साथ सम्कारवत जुड़ी हुई हैं—उनमें अनेक व्यक्तियों की प्रतिभा का प्रकाश निहित है—जिससे भावी समाज

का माग दर्शन मिलता है। ये लोक-कथाएँ तीज त्यौहारा पर बही जाती हैं— धार्मिक क्रान्ति के साथ इनका गठ-बंधन है, ये भूल भटका को रास्ता दिखाती हैं सतप्त हृदय का ताप मिटाने में सहायक हाती हैं विरहियों का सार्वना देती और दुबल जनों में प्राणा का मंचार करती हैं।

इन कथाओं में वर्णित मानव की शारीरिक और मानसिक शुद्धि उसकी सकल शक्ति और चित्त की एकाग्रता का दर्शन होता है जिससे प्रेरणा लेकर आज का बुद्धिवाणी विकसित मानव भी आत्म-बल और चरित्र-बल प्राप्त कर सकता है। निश्चल पारिवारिक प्रेम के जीते जागते चित्र उनमें मिलते हैं। पति परमेश्वर और पत्नी को गृह लक्ष्मी मानने वाले जनपद ने दाम्पत्य प्रेम लोक में आध्यात्मिकता का समावेश करके उस परम उज्ज्वल स्वरूप प्रदान किया है। अनेक कहानियाँ में अतिथि सेवा परोपकार एवं धर्म्य और पुरुषार्थ आपदघम और अदम्य उत्साह प्रदर्शन के चित्र प्रस्तुत हुए हैं। राजभक्ति और देशभक्ति के ज्वलत उदाहरण भी इन कथाओं में मिलते हैं राज पुत्रा का सतपथ गामी बनाने वाली हितोपदेश और पंच तंत्र की कहानियाँ भी इन्हीं लोक कथाओं का विकसित साहित्यिक रूप है।

नीति शास्त्र विशारद चारुणक ने इन लोक-कथाओं का उपयोग करके पथ भ्रष्ट राजपुत्रों को भी नीति निपुण बना दिया था।

लाड बेकन ने कहा है कि कथा से मनुष्य वह प्रमाणित करता है जिससे इतिहास वंचित रहता है। तभी छाया रूप नीरस ऐतिहासिक गाथाओं की अपेक्षा स्वाभाविक मानव जीवन के यथातथ्य सरस चित्र मानव को नतिकता का पाठ पढ़ाने में अधिक साध्यक हुए हैं।

साम्प्रतिक दृष्टि से भी लोक-कथा साहित्य का स्तुत्य महत्त्व है। प्राचीन रीति रिवाज और मान्यताओं की अभिव्यक्ति तत्कालीन संस्कृति को पुनः प्रकाश में लाने में योग्य द सकती है।

लोक-कथाओं में आधुनिक कथा साहित्य की भाँति सामाजिक वपम्प शापण और राजनतिक उथल-पुथल व क्रान्तिकारी चित्रण के स्थान पर सुखी समाज और स्निग्ध एवं शान्त वातावरण उपलब्ध होता है जिसमें जीवन की स्वाभाविकता से अनुप्राणित दिव्य शान्ति की छाया झलकती है।

य कथाएँ अविवाश सुखान हाती हैं उनमें निराशावाद के लिये स्थान नहीं और साम्यवाद का बोलबाला है। उनमें ऊँच-नीच का भेद दृष्टि नहीं आता।

इस साहित्य में तत्कालीन समाज के प्रेम और सौजन्यता शान्तिपूर्ण एवं सुरम्य वातावरण के दर्शन होने के साथ साथ कुछ अनान जनित अंधविश्वासों और सामाजिक विडम्बनाओं का भी आभास मिलता है परन्तु इस प्रकार के सामाजिक चित्रण से लोक कथा का महत्त्व किंचित्मात्र भी कम नहीं होता। उसमें चित्रित समाज के ज्ञान से लेकर नये युग के प्रकाश में जीवन के उन स्वाभाविक तथ्यों को स्वीकार करते हुए हम लोक-कथाओं का जीवन सृष्टिपत्नी शक्ति का रूप दे सकते हैं जो जीवन-दर्शन को प्रस्तुत करके आधुनिक मानव का प्रकाशमान करने में समर्थ है। ●●

लोक-गीतों का वर्गीकरण

लोक गीत जन मानस से प्रवाहित स्रोत हैं जिनके विषयों की सख्या नहीं और प्रकारों का अन्त नहीं। ऐसी असंख्य राशियों का वर्गीकरण करना एक दुःसाध्य कृत्य है। जन-मानस की स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक भाव भूमि में साम्य होने के कारण विभिन्न क्षेत्रीय प्रादेशिक एवं जातिगत गीतों में भी भाव साम्य होता है—बल्कि विश्व भर के अलग अलग देशों में भी समान परिस्थितियों में लोक-मानस से समान भाव सहरी फूटती पाई जाती है—ही विभिन्न क्षेत्रों की बोलियों की भिन्नता एवं व्यवसायों तथा जीवन के स्वरूप भेद से कुछ भेद उपस्थित हो जाता है—और जातिगत गीतों में रीति रिवाजों तथा भावना भेद से यत्किंचित् अन्तर दृष्टि आता है, अथवा कोई तात्त्विक भेद नहीं। अतएव इन दृष्टियों से लोक गीतों का वर्गीकरण सम्यक् रूपेण नहीं हो सकता, न उपादेय ही है।

भारती की दृष्टि से अथवा गायकों की दृष्टि से लोक-गीतों का वर्गीकरण होगा क्रमशः सामूहिक, एकाकी नृत्य गीत, नाट्य गीत और लोक-काव्य आदि तथा पुरुष गीत, नारी गीत और बालकों के गीत। परन्तु इन दोनों विधियों से लोक-गीतों का वैज्ञानिक वर्गीकरण सम्भव नहीं। उनके एक एक प्रकार में दूसरे सम्मिलित हो जाते हैं।

भारतीय एवं पश्चात्य विद्वानों ने लोक-गीतों के वर्गीकरण विभिन्न दृष्टिकोणों से किये हैं।

भारतीय विद्वानों में डॉ० सत्यद्वय ने भाव के उद्देश्य की दृष्टि से समस्त गीतों को अनुष्ठान सम्बन्धी और मनोरंजन सम्बन्धी—दो भागों में बाँटकर फिर गान के अक्षरों के अनुसार उनका विभाजन किया है।¹ श्याम परमार ने मुक्तक और प्रबन्ध दो श्रेणियों में गीतों को बाँटकर फिर छह प्रकार बनाये हैं।² श्री कृष्ण देव उपाध्याय ने सत्कारों का मित्रता की अवसरानुकूल भाव प्रणियों में उत्तरप्रद हुए भाषुर्प और मंगीतों को तथा ऋतु परिवर्तन द्वारा उत्पन्न हुए गीतों के भेदों की दृष्टि से उत्तरप्रद भाजपुरी लोक-गीतों का वर्गीकरण किया है।³ तथा डॉ० रामसिंह इत्यादि ने

1 दक्षिण अजनाक साहित्य का अध्ययन (डॉ० सत्यद्वय) पृ० 118

2 भारतीय लोक साहित्य (श्याम परमार) पृ० 64, 65, 66

3 भाजपुरी लोक-गीत (कृष्ण देव उपाध्याय) पृ० 20, 21

सार लोक गीता को गायका की दृष्टि से पुरुष गीत नारी गीत और बालक-बालिकाओं का गीता में विभाजित करके फिर विषयानुसार उनके भेद-उपभेद बताय हैं।¹ गायका की दृष्टि में किया हुआ विभाजन तो पीछे लिये अनुमार दापयुक्त और अपूरण है ही, श्याम परमार और कृष्णदेव उपाध्याय के वर्गीकरण किसी भी सम्पूर्ण दृष्टिकोण को लेकर किय नहीं प्रतीत होते—गीता की सूची के खण्ड मात्र से प्रतीत होते हैं। इन सबमें डा० सत्यद्व का वर्गीकरण ही सर्वश्रेष्ठ माना जा सकता है क्योंकि यह एक ठोस दृष्टिकोण से किया गया है। विभिन्न अवसरों पर विभिन्न गीत गाय जाते हैं—दमलिय इस रूप के वर्गीकरण में समस्त गीता की विधाओं का समावेश हो जाना चाहिये।

सारे गीता का मरिया लीच न दो नाम लिय हैं—फक्शनल एण्ड एस्थटिक। वास्तव में यह विभाजन भी शुद्ध नहीं है क्योंकि गीता के फक्शनल और एस्थटिक तत्वों को नितान्त अलग नहीं किया जा सकता। फक्शनल गीता में भी एस्थटिक तत्व रहता ही है।

सब दाया और अभावा का परिहार करत हुए लोक-गीता के विषय बहिष्य का विशिष्टता को दृष्टि में रखकर विषयानुसार वर्गीकरण करना समीचीन प्रतीत होता है।

जन्म और विवाहदि सम्कारों के गीत तो भारत के लगभग सभी प्रांता में विविध पाये जाते हैं और व्यवसाय सम्बन्धी गीत जो श्रमपरिहार निमित्त व्यवसाय करत समय गाय जाते हैं भारत में एक पाश्चात्य देशों में भी समान रूप से उपलब्ध हैं। परन्तु इनके अनिरीक्त भले-ब्योहारा के गीत देवी-देवताओं, सिद्ध पुरुषों, एतिहासिक व्यक्तियों सतिया और बाप्या एव पितर पितरालिया आदि के गीता के भारत के लगभग सभी प्रदेशों में समान प्रकार मिलते हैं। अतः विषयानुसार वर्गीकरण सर्वश्रेष्ठ प्रतीत होता है। इस दृष्टि से लोक-गीता का चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है —

- (1) सम्कार सम्बन्धी गीत,
- (2) व्यावसायिक गीत
- (3) आचरितिक गीत तथा
- (4) बलासिक अथवा मनोरञ्जन सम्बन्धी गीत।

इन चार भेदों में लोक गीता के लगभग समस्त प्रकार सम्मिलित हो जायेंगे। चाहे किसी भी दृष्टिकोण से परमन पर गीतों का कोई प्रकार नहीं छूट पायगा न ही एक प्रकार के गीत दूसरे प्रकार के अलगत समावेश कर पायेंगे।

1. सम्कार सम्बन्धी गीत —

हिन्दू शास्त्रों के अनुसार मनुष्य के जन्म से मृत्यु तक जो विभिन्न सम्कार किये जाते हैं उनसे सम्बन्धित गीत सम्कार विषयक हान हैं। कुल 16 सम्कारों में

1, राजस्थान के लोक-गीत पूर्वार्ध व उत्तरार्ध (डा० रामसिंह श्री नरोत्तमदास स्वामी तथा स्व० श्री सूर्यकरण पारीक द्वारा सम्पादित)

लोक गीतों का वर्गीकरण

गीतों में सम्बन्धित प्रमुख सस्वार चार होते हैं—जम, उपनयन, विवाह और मृत्यु । इन चार संस्कारों के विभिन्न गीत संग्रह हैं उनके अनुसार सस्वार विषयक समस्त गीतों के आठ भेद हुए अब प्रत्येक भेद में भी कुछ के कई प्रकार के गीत होते हैं ।

(क) जम सम्बन्धी संस्कारों के गीत —

1—सीम-नोनयन के गीत,

2—प्रसव सम्बन्धी गीत, तथा

3—नामकरण, अन्नप्राण, जहूले तथा कण्ठोत्पन्न व गीत ।

(ख) उपनयन तथा विद्यारम्भ संस्कारों के गीत ।

(ग) विवाह संस्कारों के गीत —

1—सामाय गीत,

2—ब्या पक्ष के गीत, तथा

3—वर पक्ष के गीत ।

(घ) मृत्यु सम्बन्धी गीत ।

2. व्यवसाय सम्बन्धी गीत —

व्यवसायिक गीत दो प्रकार के होते हैं जीविका सम्बन्धी और व्यवसाय करते समय श्रम परिहार निमित्त गाने व गीत । जिन गीतों को गाकर लोग जीविकाप्राप्त करते हैं वे प्रथम श्रेणी के गीत हैं और खेती, ऊँट चालना, बुँआ चलाना चक्की या चरखा चलाना धपवा धपव कोई भी व्यवसाय करते समय गाये जाने वाले गीत दूसरी श्रेणी में आते हैं । इन दोनों के निम्नलिखित प्रकार हैं¹ —

(क) जीविका सम्बन्धी गीत —

1—नात्य तथा नात्य गीत,

2—रानिजग ब्यागीत पौराणिक गीत भजन और हरजस प्रादि, तथा

3—विविध ।

(ख) व्यवसाय करते समय श्रम परिहार निमित्त गाने व गीत —

1—तृपि सम्बन्धी ऊँट चालने के चन्वाहा के,

2—बुँआ चलाने व चरखी गाने कुँएँ पर पानी भरने वालिया व गीत

3—चक्की और चरखे के गीत तथा

4—धपव व्यवसाय मजदूरी आदि करने वालों के गीत ।

3. धावसरिक गीत —

धूमर विंग पर गाये जाने वाले गीतों का धावसरिक गीत भी मन्त्र है । साम्ब म वैलायिक गीतों व अनिर्दिष्ट सभी धूमर विंग पर गाये जाने हैं ।

1. इनमें मृत्यु गीत, नात्य गीत एवं रानिजग के विभिन्न गीत बेवचन मन्त्रार्थ भी गाये जाते हैं, जिनमें जीविका का ध्येय नहीं होता, इसलिए दोनों श्रेणियों में हैं ।

अतः इस श्रेणी के अन्तर्गत सस्वार सम्बन्धी और ध्यावसायिक भी लाय जा सकते थे, परन्तु गीता के वविध्य की कठिनाई का सुलभाने और अधिक स्पष्ट रूप भेद करने के लिये सस्वार सम्बन्धी और व्यवसाय सम्बन्धी गीता की अलग अलग श्रेणियाँ कर दी गई हैं। इस प्रकार भावसरिक गीतों का तात्पर्य यहाँ वष क विभिन्न अवसरों पर गाय जाने वाले गीता से समझना चाहिए। भावसरिक गीतों के निम्नलिखित प्रकार हैं —

(क) देवी देवताओं के गीत —

- 1—देव चरित तथा देवी चरित,
- 2—पौराणिक और सिद्ध पुरुषों तथा
- 3—सतिया और पितर पितराणियों के गीत।

(ख) मेला त्यौहारों और अतः सम्बन्धी गीत —

- 1—हाली के गवर के धुडल के तथा तीज के,
- 2—अथ त्यौहारों मेला और अतः क गीत।

(ग) आस्था और भजन आदि के गीत —

- 1—भजन हरजस सबद सतवाणी सतगुरु और
- 2—तीर्थ यात्रा सम्बन्धी गीत।

4 बलासिक गीत —

जा गीत सस्वार त्यौहार अथवा व्यवसाय आदि किसी अवसर विशेष से सम्बन्धित नहीं हैं और केवल मनोरंजन के लिये गाय जाते हैं—व बलासिक गीत हैं। त्यौहार उत्सव या अथ भागलिक अवसरों पर व्यावसायिक गायक स मनोरंजनाथ गीत गवाय जाय वे भी इसी श्रेणी में आ सकते हैं, परन्तु गायक का उद्देश्य जीविको पाजन हान के कारण हमने उन्हें इसमें सम्मिलित नहीं किया। जो गीत समय-समय पर बिना किसी आशय के परस्पर भावाभिव्यक्ति निमित्त गाय जाते हैं वही इस श्रेणी में आयेंगे। इन बलासिक गीतों के निम्नलिखित प्रकार हैं —

(क) ऋगार रस के गीत —

- 1—रूप बरण
- 2—सयोग पक्ष तथा
- 3—वियोग पक्ष।

(ख) नृत्य गीत।

(ग) नाट्य गीत।

(घ) ऋतु सम्बन्धी गीत—जाड़ा, बसन्त गर्मी चैमासा और वारह मासा।

(ङ) पारिवारिक व्यक्तियों से सम्बन्धित सुखी गृहस्थी के गीत।

(च) भाज्य पदार्थों के गीत।

इन सब प्रकार के गीतों में निम्नलिखित गीत पुरुषों द्वारा गाय जाने वाले हैं एवं कुछ गीत बाल्य जीवन से सम्बन्धित हैं जो अधिकतर बालिकाओं द्वारा गाय जाते

हैं। गप मभी गीत नारी के हृदय की मधुर ध्वनि हैं। पुरुषों द्वारा गाय जाने वाले गीत हैं —

- (1) व्यावसायिक गीत प्रायः सभी पुरुषों के हैं।
- (2) धार्मिक गीतों में से देवी देवताओं के कुछ गीत तीर्थ यात्रा के, रात्रिजमा पर गान के और होनी की घमालों पुरुषों द्वारा गाय जाने हैं।
- (3) बलासिक गीतों में नृत्य गीत अधिकतर पुरुषों के हैं।

बाल्य जीवन से सम्बन्धित गीत निम्नलिखित हैं, जो अधिकतर बालिकाओं द्वारा गाय जाते हैं और साधारणतया उनमें इन्हीं के जीवन चित्र रहते हैं। हैं कुछ गीतों में बालिका के गेंद आदि खेलने और ननिहाल जान आदि के वर्णन हैं —

- (1) सस्वार सम्बन्धी गीत।
- (2) व्यावसायिक गीतों में—सेती की चरार्द्ध आदि प्रकृत जीवन के गीत।
- (3) धार्मिक गीतों में —

(क) राजस्थान में गणपौर और घुमले के गीत,

(ख) राजस्थान व उत्तर प्रदेश एवं कुछ दक्षिणी प्रदेशों में सभा व भाभी टैमू व गीत कुँवारी ब्याभा तथा बुमार बालिका द्वारा गाय जाते हैं।

(ग) तीर्थ के गीत जिनके अन्तर्गत भूले, वर्षा एवं समुराल के दुःख व्यक्त और समुराल जाने आदि के गीत होते हैं।

(4) बलासिक गीतों में —

(क) घूमर और लूर आदि नृत्यों के गीत राजस्थान में प्रायः बालिकाएँ गाती हैं।

(ख) मानुष्य के गीत-लारियाँ और गेंद आदि खेल के तथा ननिहाल जान के।

(ग) विवाह के बाल के गीत—पति और समुराल का वर्णन करने वाले सभी-सहलिया के गीत प्रायः भारत के विभिन्न प्रांतों में पाये जाते हैं।

इन गीतों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण लारियाँ हैं पर बालिकाओं के जीवन में प्रारम्भ से ही हृदय की भावुकता का परिचय मिलता है। बाल्य जीवन से ही व घुमला घुमला नानरा गोरी पूजन और सहलिया आदि विषयों पर अनेक गीत गाने पानी पानी हैं। विशाखावस्था के समीप पहुँचने पर तो एक नया जीवन का रूप गायन भावना लगता है जिसकी सुमधुर एवं विषम रूप वाली कल्पनाओं में उनके हृदय में हाहाकार भस्कर गीतों का मागर उमड़ पड़ता है।

राजस्थानी लोक गीतों की झाँकी

लोक-साहित्य के विविध रूपों में लोक गीत अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। लोक कथा और कहावता आदि विधाओं की अपेक्षा लोक गीतों में कहीं अधिक भावात्मक और रजन शक्ति है। जब-जब मानव हृदय प्रबल भावावेग में आप्लावित होकर अत्यधिक हृष या शोक अनुभव करता है तब-तब उसके मानस से स्वर लहरियाँ फूट पड़ती हैं। मौखिक परम्परा में प्राप्त इन गीतों द्वारा विभिन्न कालों और स्थानों की बानियाँ सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति और एतिहासिक व राजनतिक पहलुओं का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। प्रत्येक विषय का अध्ययन करने हेतु लोक गीत हमारे लिये साधन उपस्थित करते हैं।

विदेशी विद्वानों ने भी लोक गीतों के सामाजिक महत्त्व पर बल दिया है। ए.साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका के अनुसार तो लोक गीतों को मनुष्य की उत्पत्ति, विलास और रीति रिवाजों की विद्या ही बना दिया गया है।¹ वास्तव में लोक गीतों में व्यक्त आचार विचार रहन-सहन खान-पान रीति रिवाज, धर्म विश्वास और मायताओं के आचार पर मनुष्य के सामाजिक इतिहास का अध्ययन श्रेष्ठ होता है।

स्काटलैण्ड के देशभक्त प्लेचर ने कहा था— किसी भी जाति के लोक गीतों उसके विधान से अधिक महत्त्वपूर्ण हाँ हैं। हमारे ये लोक गीत राष्ट्रीय सन्तुलन बनाए रखने और विश्व-बन्धुत्व की भावना स्थापित करने के परम साधन हैं। लोक गीतों में आत्म-भक्ति की प्रधानता एवं प्रबलता होने के कारण आत्मा के विकास की पूर्ण सामर्थ्य है। आत्मा का विकास ही वस्तुतः विश्व-बन्धुत्व की ओर प्रेरित करता है। इसीलिये लोक गीतों में व्यक्तिगत भावों की व्यञ्जना के स्थान पर सामूहिक भावों की अभिव्यक्ति हाती है। यह आत्म-तत्त्व अव्यक्त होने के कारण आधुनिक विज्ञान के बाहर की वस्तु है—इसी से विज्ञान के द्वारा केवल भौतिक समृद्धि बन रही है परन्तु आत्मिक विकास के अभाव में मानवीय भावनाओं का विकास सम्भव नहीं फिर विश्व-बन्धुत्व की स्थापना कल्पनातीत ही होगी। आत्मभाव के प्रसार से ही विश्व प्रेम जागृत हो सकता है और लोक गीत इस आत्मतत्त्व के स्रोत हैं।

1 No sharp boundary is drawn by English practice between the folk lore and that of Social Anthropology

प० रामनरन त्रिपाठी ने साह गीता का 'प्रकृति व उत्पत्ति' और महारमा गौधी ने 'ममूची ममृति व पहरेदार' बताया है। परा के अनुसार 'राज गीत प्राणि मानव का उत्पत्तिमय संगीत है।'

राजस्थानी लोकगीता में यह उल्लास, उछाह उमग और भावानिरव विषय भर व साहगीता में तुलना करने पर भी सर्वाधिक पाया जायगा। जब लोक मानव मानव म गगन हा उछाह है या वेरना का सात प्रवाहित हान लगना है ता स्वत प्ररित भाव लहरियां लोक मानव म प्रवाहित हान लगनी हैं—यही लहरियां लोक गीत नाम म अभिहित हानी हैं—इनकी रचना का कोई स्वरूप है न नियमावली। न लोक गीता के मूल रचयिता का पता है,¹ न रचना काल का। कौन गीत कब किस कठ में निकला या इस विषय की याज्ञ का कोई मापन नग। जन जीवन व विविध प्रसंगा में जन मानव में जो भी भाव उमग बन कर फूट निकल वही गीत का रूप धारण कर लेता है—गीतों की पीढ़ी गीतिका परम्परा में प्राप्त ये गीत आदिमानव काल में लोक जीवन में ध्याप्त है। समय के प्रवाह में गीता की बुद्ध बर्णियां दृष्ट जाती हैं बुद्ध नद जुग जाती हैं और बुद्ध समाज व परिस्थिति के अनुरूप भावा व भावना में नई प्रकृति हा जाती हैं—इस प्रकार राजस्थान में विविध अवसरों पर गाय जान वान गीता की भाँधी प्रस्तुत की जाती है।

लोकगीता का जीवन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। इनमें हमारा समाज और देश व प्राचीन गीतक और आत्मा की उच्च भावनाओं प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त होती हैं। एक एक गाल में निजना उच्च भाव भरा हुआ है यह इन गीता व आयन से विनि हा गवता है। राजस्थान का गारवपूर्ण इतिहास, यहाँ की सामूहिक परम्परायें, लोक दबी दवताया व प्रति आस्था, मने-नशोहार तथा पुन जन्म विवासादि उत्सवों पर उच्छ्रित भावावग और विवापनर स्थिया की चटकीली मडकीली पाशाक व आभूषणा की भनवार सभी न लोकगीता का जन्म दन में विशिष्टता उत्पन्न वा है।

विदेशी आभ्यागत 'बनल टाट न अपन एनल्स एण्ड एण्टिक्विटीज ग्रथ में इनका ऐसे वर्णन किया है जिससे राजस्थान व प्राकृतिक बभल और बविध्य का दिग्दर्शन मिलता है जिसमें यह भूमि लोक मानव की उबरता का निय सर्वोत्तम नैत्र बन गई। इसी कारण यहाँ लोक साहित्य और लोक कालों का एक अक्षर भण्डार मिलता है।² बनल टाट न इस विषय में लोक बभल का अछा भरी दृष्टि में दर्श कर राजस्थान व लोक जीवन का अध्ययन करके उचित परिणाम में अपन उपयुक्त ग्रथ में प्रस्तुत किया है। टाट न यहाँ के गौर व मल घामिल भावताओं और रग विरगा वक्ष भूषा आदि का ऐसा मनाहारी सजीव चित्रण किया है जिसमें लोकगीता की स्वररहरियां प्रवाहित हाना स्वन सिद्ध है।

1 लोक काल की पण्डितियां पृष्ठ 160

2 लोक काल की पण्डितियां

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल न लोक गीता के रसोद्भेद का उल्लेख करते हुए लिखा है 'लोक के माय सम्पर्क में रह कर हमारे जीवन में रचे हुए स्रोत फूट कर बहने लगते और रस ग्रहण करके टूटे हुए तंतु फिर अपने तार से जुड़ सकेंगे।'² क्या ही ममस्पर्शी तथ्य है जो लोक गीता का सामाजिक महत्त्व प्रतिपादित करता है। राजस्थान के लोक गीता में भावा का यह अंग भण्डार प्रचुरता से दशनीय है। धरण धरण के भाव उनमें बंध गये हैं। भावा की गहनता और व्यापकता उनमें कलात्मक एवं आश्चर्यजनक ढंग से घुलमिल गई है। इस प्रकार का एक बंधाव का गीत है जिसमें सासू बहू का वार्तालाप कितना भावाभिव्यजक एवं मनोहारी है—एक आदर्श गृहस्थ के पारस्परिक स्नेहपूर्ण सम्बन्ध का अभिव्यजक—

बहू रिमभिम महलां से ऊतरी ।

बहू कर सोलह सिंगार आज म्हारी भामली फलियोजी टेक ।

म्हारा सासू जी पूछे ए बहू यारा गहना रो अथ बताए ।

सासू गहना जी गहना के करो—सासू गहना म्हारी से परवारा

म्हारी सुसरो गढारां राजवी, सासूजी म्हारा अथ भण्डार ॥

म्हारा जेठ बाजूबद बाकडा, जीठानी म्हारी बाजूबदरी लूम ।

म्हारा देवर चुडला दांत को, दोरानी म्हारी चूडलारी टीप ॥

म्हारी ननद कसूमल काचली, नएदोई गज मोतिणा रो हार ।

म्हारा कवर जी कुल का दीवला, म्हारी बहू म्हारे दिवला रो जोत ॥

म्हारी धीयल कलौय अनार की, म्हारा जेवाई चपल्यारा फूल ।

म्हारा साहिबा सिर का सेवरा, साहिबाणी म्हारी सिबरारी लूम ॥

आज म्हारी भामली फलियोजी ॥

सासूजी क उदगार है—

म्हे तो वारा जी बहूजी थारी जीव न ।

लडायो म्हारी सो परिवार ।

म्हे तो वारां जी सासूजी थारी कोल न ।

थे तो जाया अजु न बीर ।

म्हे तो वारा जी बाईजी थारी गोद न ।

खिलाया थे तो अजु न भीम ॥ आज म्हारी भामली०

अनक आक्षेप वणुना से यह सिद्ध होता है कि राजस्थान की भूमि में व तत्त्व विद्यमान हैं जिनके दशन से मानव में लोक मानस से स्फूर्तियाँ उत्पन्न होती हैं— व स्फूर्तियाँ अचेतन के स्तर का बाधकर चेतन में फ्रीडा करने लगती हैं, जिससे लोक गीत स्फुरित होने हैं। ये गीत निम्नलिखित प्रकार के विविध अवसरों पर गाय जाते हैं—

- 1 सस्वार सम्बन्धी गीत ।
- 2 पर्वोत्सवा के गीत ।
- 3 वैवाहिक अथवा मनोरंजन सम्बन्धी गीत ।
- 4 व्यवसाय सम्बन्धी गीत ।

इन भेदा में लोक गीतों का प्रायः सब प्रकार का आता है—उनमें से यहाँ कुछ विशिष्ट विधाओं का अत्यन्त लोकप्रिय गीतों का संग्रहण चित्रण किया जाता है ।

1 सस्वार सम्बन्धी गीत—हिन्दू शास्त्रों में वर्णित मनुष्य का जन्म से मृत्यु पश्चात् 16 सस्वारा में से चार प्रमुख माने गये हैं—जन्म, उपनयन, विवाह और मृत्यु । इन सभी अवसरों पर गाय जाने वाले गीतों में जन्म और विवाह सम्बन्धी गीत अत्यधिक महत्त्वा में मिलते हैं और विशिष्ट महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं ।

(क) जन्म सम्बन्धी गीतों में राजस्थान में पुत्र जन्म के अवसर पर हालत या साहस गाई जाती है और नाना काटने के गीत, पीननी, भूँटणा पगल्पा, पालना, पीनिधा चिलुटिया घूँघरी तथा जलवा पूजन आदि के गीत अत्यन्त हृदयग्राही होते हैं । वानक के जन्म के अवसर पर आरम्भ में जो-जो भाव हृदय में उठते हैं उन्हीं के अनुसार स्त्रियाँ गीत गढ़ लेती हैं । सारे गीत इसी भाव जगन की सूत्र बद्ध कड़ियाँ हैं । कुछ नमून देखिये—

शिशु जन्म में पूव प्रमत्त पीर में विद्वान् जच्चा की मनास्थिति का व्यञ्जक 'साहर' गीत—

‘सुसरा सा ने बेग बुलाय हतार्या सूँ,
सूँ म्हारे घाले कमर में पीड अथ नहीं जोऊँगी ।
म्हारा सामुजी न बेग बुलाय रसोइयाँ सूँ,
सूँ म्हारे घाले कमर में पीड, अथ नहीं जोऊँगी ॥”

पुत्र को जन्म देने वाली जच्चा के महत्त्व की अभिव्यक्ति में गीत का वाक्य है—

जच्चा ए धारे माये ने ममद ल्याया ।
महल में धायवा जो जच्चा ए, धारे जाना व कु डल ल्याया ॥
महल में धायवा जो, नखराली महल में धायवा जो ॥”

राजस्थान में अर्थात् रूप जच्चा का पीयर का 'पगल्पा' भोजन की प्रथा है ।
इस भाव का दानक गीत है—

- 1) मरने का पड़े के चारों कान पीर रंग कर बीच में दानक के पीवा का चित्र मीन कर भाग-भाग स्वस्तिवा बना दत है । गुड बाँध कर नाइ के माय पीयर भोजन है ।

जच्चा राणो ने जम्या है पूत, पगल्या तो भेजोजी,
 कँवर सा म्हारे म्हारे बाप क ।
 बाबोसा म्हारा कहीजे दातार,
 थाने नेवगी जी, देसीजी हस्ती भूमती,
 माऊजी म्हारी कहीज दातार,
 थान देसी नेवगी गला का बाडला ॥

जच्चा को जो जा मसाले मवा शिगु जम पर लिय जात है सभी पर गाता की रच्चा हुई है—गूद सूठ जीरो अजवाइन आदि । पीपली इनम प्रतिनिधि लाकगीत है इसम जाप की सम्पूर्ण विधि पर प्रकाश टालन के अनिश्चित जच्चा के लाड चाव का भी उल्लेख है—

“हे म्हारे उत्तर दिखणरी ए जच्चा पीपली ।
 हे म्हारे पूरव नमि नमि डाल रे ।
 हे म्हाने घणी ए मुहाव, जच्चा पीपली
 ह थारे गीगो¹ ए जलमियो आधी रात ए,
 हे थारे गुड बटेगो परभात ।
 हे म्हाने घणी ए मुहावे जच्चा पीपली ॥

आगे गान म जापे की सारी प्रथामा का वरण है । शिगु जम क दमव त्तिन दसाठन सस्कार हाता है उमे माया धाणा भी कहते है—अन जच्चा का स्नान करान का भी गीत है—

“खाटडले सू ऊतरी, पाटल हेट पग धारिया ॥ पाटल०
 पग धरती सूरज को मुख देख्यो ।
 मला सूरज को मुख देखता साँई को मुख देखियो ॥’

बुझा थालक क लिय कपडे लहर आती है वस्त्राभूषणा क नाम न-ल कर गाय जान बाल न गीता की बघावा कहन है । भाइ-बहन क सात्विक प्रेम का उज्ज्वल रूप इन गीता म भलकता है । बघावे क गीता म साम्कृतिक भावा का सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है ।

हरियल डान आर गुन नारियन आदि मांगलिक अनुष्ठाना के साम्कृतिक प्रतीक रूप हैं ।

छठी बाहर क त्तिन मूय पूजा हानी ह—राजस्थान म मूय पूजा के समय जच्चा पीयर म आया हुआ पीलिया बड चाव स पहनना ह—पीनय क गान भी बड भावगर्भित हात है—

1 गीगो=जच्चा ।

2 दक्खि पूरा गीत राजस्थानी नाम गान पूवाड—गीत सख्या १२२ ।

राजस्थानी लोक गीतों की भाँकी

१ "हाँ य जच्चा माया ने मेंमद लावजो ए जच्चा रणडी रतन जडाय,
सिखदार जच्चाए उमराय जच्चाए थे तो महीन बंधन रो घोनो आठो ।"²
नामकरण मन्कार के दिन 'जलवा' पूजन होता है, उसी दिन गैरू की धूधरी
वांग जाता है—म प्रमग का गीत बड़ा मनोरंजक है। इन गीता म ननद भाजार्द
व मनमुटाव की यज्ञना मिलनी है—जच्चा कहती है नाई म कि इधर उधर सब
जगह धूधरी बाँट घाना पर नएद बाई व घर मन दना—आदि आदि।

शिशु वस्त्रा है उमक लाट चाव म वारियाँ गाँ जानी हैं, जिनम टापी
उडान बाँटना पहनान और दूध पिनाने आदि सारी क्रियाया पर प्रकाश पन्ता है।

जम म पूव गभवता श्री के मन की साधे पूगे करन व गीत भी हाने है।
खान पीन की एक-एक चीज पर गीत रच गय है—गारी का तिवुडिया पर मन जाय
गारी रा लापस्या पर मन जाय²—आदि आदि।

(ख) विवाह सम्बन्धी गीत तीन प्रकार के होते हैं—क्या पप के द्वारा
गाय जान वान वर पप द्वारा गाय जान वाल और मामा प विनायक म्यापना
उगन व गीत महदी लगन व धारना, उबटन, पोडी व तल के गीत नोन व गीत
और मापर के गीत दाना पक्षा म समात हाने हैं। मम मवाधिक ममस्पर्शी भाव
व्यक्तता वान मापर (भान) व गीत है जिनम भाई बहिन के उत्कृष्ट प्रेम व
प्रताहर चित्र मिलने हैं। भान भरना भाई का कितना महत्वपूर्ण वतव्य है यह भान
व गीत म विनि हाता है। विवाह-पूव बहिन अपनी सात ननद जिठानी आदि का
गाय कर पीहर वाना वा निमन्त्रण देन जाती है—इन भान वानना कहत है।
म मधमर का गान गिननी पवित्र भावनाया का व्यजन है—

"धान सुपारी धानरो बिडलो, में तन रे बीरा नूतण भाई।

राजन साधीया वान भाई नूनण भाई ॥"

इसी प्रकार योने हूण भाई की वाट जाहनी हई बहिन व भावागार गीत म
प्रकट हूण है—

"उड वापदडा म्हारा पीवर जा नूत पिपरे भातवी ज,

मस यूनो रे म्हारा काह बवर सा बीर, भलां भनीजा भावजो न ।"

भारत बीरा, भावज न उड़ाव, म्हाने घणा मोला रो चूँनडी ज।

मुमराजी न बारा, बिरमो उड़ाव, सामूजो न साडी सापड ज।

म्हारे जेठा न बीरा सास दुसाल, बेधरा न पिलग मोलाय ज।

म्हारी मणदो न दिवशी बीर, देराण्या जेठाय्या न पीता पोमचा ज।

उड वापदडा०

1 पूरा गीत मिय राजस्थानी लोक गान सङ्घ 2 गान मय्या 32।

2 म मियन व कई गान राजस्थानी लोक गीत सङ्घ 2 म मिय हूण है—गीत
मय्या 38-48 तक।

भाई द्वारा उगाई जाने वाली बूनडी का गीत है—

“भायो छ माँ को जायो घोर, हीरा जड ल्यायो
भोडू तो हीरा रे बीरा भड पडे,
मेलू तो तरसे बाई रो जीय, हीरा जड ल्यायो ॥”

गृहस्थ जीवन की अनेक उलभना के मध्य भी भाई बहिन व उज्ज्वल पुनीत प्रेम की ज्योति धिपी रहती है जा अक्सर पाकर इन भात के गीता मे प्रकाशित होती है जिसकी मधुर स्मृति सासारिक जीवन के कटु अनुभवा का सुखद रूप दन म समय हाती है । रातजगे म देवी-देवताआ व गीत और भजन आदि गाय जाते हैं । राजस्थान म विवाह व अक्सर पर रोडी पूजने की प्रथा है—इस गीत म वर कया व भावी जीवन म सुख समृद्धि की कामना की जाती है—

अणी रोडी पूजनां म्हाने लावो मोतीडारो हार,
अणी रोडी नूतता म्हाने लावो जडियो धन्न रो ।

धन्न भू ध्यापार चला दिपो म्हें तो वरणयो माला माल ।¹

कया पक्ष के गीत—कया पक्ष के सामाय गीत वनडी नाम से अभिहित हाते है जिह उत्तर प्रदेश मे सुहाग बोलत है । इन म प्राय कया अपन धावा बाप आदि स अज करती है कि मुक्त ऐम घर देना वस घर मत दना आदि—किन्ही म कया के श्रुगार व वस्थाभूषणा का वणन तथा बारात देख कर सखिया द्वारा वनडे की प्रशमा आदि पाया जाता है ।² विनय रम्मा पर गाय जान वाल राजस्थान व विशिष्ट गात हैं—तारण सभेला कामण चवरी का गीत जुआ-जुई सलाके, तम्बालन आदि । इनके अतिरिक्त कया की विदा के समय गाय जान लाल लाकगीत अत्यन्त ममस्पर्शी एव वरण रस से ओत प्रान हात हैं । विदा के इन गीता का विशिष्ट नाम भी लिय है—ओलू कायल मीजलिया और बधाव भी हाते हैं । बधावा म कया के मम स्पर्शी चित्रण के साथ समुराल पढूचन पर उसक परिवार की मगल कामना एव सौभाग्य समृद्धि हतु आशीषा की भावना अभिव्यक्त होती है ।

बारात की अगवानी के समय पुराहित मन्त्राच्चारण के साथ दोना पक्षा का सम्मेलन करवाता है उस समय म्त्रियाँ सभेला गानी हैं—

हालो बन्ना हालो नी तोरण चाला, तोरण दडी लगावो जी ।

हालो बन्ना हालो सहेला चाला, सहेले मे सब रग ल्यास्या जी राज ।

हालो बन्ना हालोनी माया³ चाला, माया मे मगल गास्याजी राज ॥

1 पूरा गीत देखिय—राजस्थानी लाक गीत (डा० स्वणलता) पृष्ठ 74 ।

2 गीता के नमूने देखिय—राजस्थानी लाक गीत खण्ड 2 व मय्या 78-84 तक ।

3 घर के भीतर थापा आदि रखकर विवाह काय से पूब जहा विनायक स्थापना होनी है उमे माया कहत हैं । तारण की रस के पश्चात् वनडे को माया म पूजा हेतु स जाया जाता है ।

बारात के स्वागत के समय हास्य विनोद होता है—'कामण' गीता में बारातियाँ पर उपहास रूप में गालियाँ की बौछारें होती हैं। बन्दे के मामन गाया जान वाला नखशिख बरण है—

“धे घर लखपतियाँ र जम्मा, सुण्यौ ए सुजान चदजी ।
सुण्यो म्हारी वाईजो घणा ठुकम उठावणा, धनडा ओ रे,
थारी भ्राखडियाँ रो पारणी, भीणी केसर छाणी ।”

कुँवर कजेवा जनवाम में लेकर स्त्रियाँ जाती हैं वहा गया जान वाला जला' गीत अत्यन्त विनोदपूर्ण और मनोरंजक होता है। इस प्रकार के गीता में बन्दे पर उलाहना की बौछारें होती हैं। 'हयलेवा' की प्रथा राजस्थान की अपनी है। वर—या के हाथ मही से जोड़ कर ब्या के भाई भावज उह विवाह मण्डप में ले जाते हैं—पारि प्रहण सस्कार के लिये पुराहित 'हयनेवा' जोड़ता है उस समय के गीत हयनेवा कहलाने हैं—विवाह मण्डप को 'चेंवरी' कहते हैं—मण्डप की सजावट बदनवारा जल कलशा और रासा मही हल्दी व पुष्पादि मांगलिक द्रव्य से चौक पूर कर की जाती है जो आधुनिक बिजली के रंग विरगे बल्ब तथा रसमी भिलमिलानी झालरा से सजाई गई बदी की अपभा बही अधिक सुन्दर मनाहर एव सांस्कृतिक भावनाओं का विकसित करन वाली होती है। इस 'चेंवरी' के भी गीत होते हैं—

“इए चेंवरी इए चेंवरी रामचदरजी न सीताजी चढ़िया,
ज्यां धे चढ़ो हो रग भीना ।
इए चेंवरी इए चेंवरी मूरज जो न राणा दे चढ़िया ।
ज्यां थेई चढ़ो हो केसरिया ”

फेरा के पश्चात् हयलेवा, पीरियारो धम तथा फेरा के अर्थ गीत गाये जाते हैं जिनमें राजस्थान में पारिप्रहण सस्कार की पुरा प्रक्रिया पर प्रकाश पड़ता है आर फिर् जुमा-जुई¹ सलोवे² आदि के गीत होते हैं। बारात जीमत्त समय गान के गीता में एक 'तम्बानन' गीत मुख्य है जिनमें बड़ व्यंगपूर्ण ढंग से भगवान् के अवतार और पौराणिक पुराण के गुणगान व शृंगार भाग प्रसात् आदि का आलंकारिक बरण है।

विदा के गीता के नमून है—

“बन खण्ड की ए कोयल बन खण्ड छोड़ कठ चली
थारी भाले दिवाले गुडियाँ धरी ॥ बन खण्ड की०”³

- 1 कँगना चलने की प्रथा का राजस्थान में जुमा-जुई बतन हैं।
- 2 फेरा के बाद वर ब्या को 'माया' में ले जा कर मंत्र स्त्रियाँ व्यंग्य विना हास परिहास करती हुई वर से मलोवे कहलवानी और नग दती हैं।
- 3 पूरा गीत दक्षिण राजस्थानी लोक गीत प्रथम खण्ड, पृष्ठ 82

कायन म जानी हुई कन्या की उपमा म स्या ही भय कल्पना है। जिस प्रकार कायल व चने जाने पर उपवन म वसन्त की शोभा नहीं रहती उसी प्रकार विटिया के समुरान चले जाने पर माता पिता का घर भाघुय हीन हा कर विमूरन लगता है। पूरे गीत म समस्त परिवार की विरहावस्था का ममस्पर्शी चित्रण हुआ है।

हाठीनी भापा व एक कन्या की विटा व गात म बाई के रथ के पीछे-पीछे नगे पाँव भागत हुए दादाजी बाकाजी बीराजी का अत्यन्त ममस्पर्शी चित्रण हुआ है।¹

आनू —कन्या पीयर की याद कर-कर व रुदन करती है—

ओलू मामासा री आवे है।

ओल्पूडी बाभो सा री आव हो हुआ माह गहीं हाभू चांरोड वस।

ओल्पू थारी मादलिये मंडाऊ हे भाला राखी, ले चालू म्हाभोडे देस ॥”

कन्या पत्र के गीता का कोई अन्न नहीं आर-पार नहीं - स्त्रिया के हृदय की भाव लहरिया अनक रूपा म प्रवाहित हा उठती हैं—विदा का दम्य ता हाता हा हृदय विदारक है। महाकवि बालिगाम की शकुन्तला की विटा के समय वीत राग कण्ठ रूपि के भी हृदय व बांध टूट गय थे। विटा के एक गी। म मां बगी का पानन की मुसीबता का वर्णन करके कहती है—

“ओ सासू गाल मत रीज्यो।

एक ओर गीन म पनि का परदमा सूवटा कहा है—

“आयो परदेसी सूवटो, री ग्यो टोली मे सू टाल
कवर बाई सिध चली ए।’

इनके अतिरिक्त मुस्लाव के गाना म जबाई जाजाजी नण्णाइजी आदि अनका गीत हैं जा हाम्य विनाट स पूण हात ह।

वर पक्ष के गीत —वर पत्र व गाता म प्रारम्भिक रस्मा के सामा य गीता व अतिरिक्त बनड घाडी सबरा और जान व गीत हात है तथा नव वधू व स्वागत म वधावे गाय जात है। बनड आदि गीता म बनड व शृंगार घाडी की मजावट मेवर का अनकारिक वर्णन के साथ-साथ बना बनी की भावी उमगा आर दादा-दादा बाका-बाकी बहिन बुआ आदि के लाड प्यार का चित्रण हाता है।

बनड का पाशाक तयार करन व एक गीन म चरखे म मृत वात-वात कर बनान का वर्णन भी है जिसम आधुनिक गाधीवाणी युग की भन्तव मिलता ह।

1 गीत दक्षिण—राजस्थानी लोक गान—खण्ड 2 व संख्या 104

2 गीत दक्षिण—राजस्थानी लोक गीत—खण्ड 2 व 87

राजस्थान में विशेषकर जैसलमेर की प्रथा है कि बने के समुदाय वाले अपने घर पानी लाकर विवाह वाले दिन स्नान कराते हैं—यह स्नान का गीत सभी जगह गाया जाता है।

“हायले घोयले हो साडकड़ा धारे पगलां रे हठ गगा बहे ।
जिठ म्हाारी धरण पखारो मामाजी रो प्यारो हायले ।
जिठ सूरजजी ए म्हाारे राणादे जी आय सौ ।
राणा दे जी रे घर बघावखौं ए बाई सूरज जी ।”

वाराण (जान) चन्ते समय के ‘जान’ गीत में बने के मन की उमंग की हृत्पट्टारी अभिव्यक्ति हुई है—

“केसरियो सुड सुड पाछला घेरे,
जाने म्हाारी जानइली बाबोसा पधारे ॥”¹

बघाव के गीता में बघू के भव्य स्वागताथ मांगलिक भावनाप्रा की प्रतीक बन्दनवार बाधना, चौक पूजना, हरी हरी डानी सहित बघू के शिर पर जल पान करवा रखना आदि का बखाना होता है—

“फूला भरिया छाबडो रामा, मासण तू सिध जाय ।
नद जी घरां बघावने जी बांधूली बांदरवाल ॥
बघाओ दीनानाथ रो हरि राम बांधूली बांदरवाल ॥”

बना-बनी व प्रथम दशन के गीत मुहागरात² कहाने हैं—इनमें बने की धार में बनेडी के रूप और शृंगार का प्रसंगा एव घूँघट खुनवाने का आग्रह अत्यन्त हृत्पट्टारी होता है। एक एक गीत में घूँघट का हार जडा और उसकी ज्याति १६ सूरज उगन के समान बताई है जिसमें बने के हृदय की उमंग की मुत्तर व्यजना हुई है।²

2 पर्वोत्सव सम्बन्धी तीज त्यौहारा के गीत—धार्मिक भावनाप्रा की अभिव्यक्ति के संसम्य गीत दश भर में बिल्वरे पड़े हैं जिनमें साधारण जनता के व हृत्पट्ट में प्रवर्तित भक्ति के गान का अनुमान हो सकता है। धार्मिक आस्था सम्बन्धी गीता से मूढा पीठिया की आस्था का परिचय मिलता है।

राजस्थान में इन श्रेणा के गीता में धनका प्रकार के गीत प्रचलित हैं—जिन में मुख्य हैं देवी देवताप्रा के गान सतिया बाबा पितर पितराणिया एव भाभियों के गीत, भजन हरजम और तीप यात्रा में सम्बन्धित गीत।

यहाँ धनका देवी-देवताप्रा की मायना है—पौराणिक देवतागण विनायक हनुमानजी गिबजी सत्यनारायणजी, मृग देवता और गान देवता आदि के धनिकित

1 गीत श्रवण—राजस्थानी के लोक गीत (पूर्वाङ्क) मध्या 89।

2 इसी प्रकार परिवार के सभी वारानिया के गायन-न कर गीत धागे बन्दना है।

राजस्थान में स्थानाय लाक देवी देवता अनका हैं। इन सब पर गाय जान वाल गीत अन अनुष्ठान तथा तीर्थ यात्रा स जुडे है। कई गीता स राजस्थानी नारी की गहन आस्था का आभास मिलता है—यहाँ तक कि घर के आगना में भी देवरो (छाट छाट देवस्थान) की स्थापना का उल्लेख है— 'पावती रा देवरो म्हारे आग गिया र बीच ।

बालाजी के गीता में हनुमानजी की राम के प्रति भक्ति और पूछ में लका भस्म करने के बरान द्वारा उनके अलौकिक महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है ।

कौन तेरो माता, कौन तेरा पिता, कुण ने नाम धरया रो हनुमान,
जय बोलो बालाजी रो”¹

अनुष्ठानादि अवसरा पर सूय की मायता अधिकता स है—

“सूरज थान पूजस्थां, भर मोत्या रो थाल ।”

लोक देवी-देवताओं में—भराजी रामदेवाजी, पावू राठोड तजाजी (जाट) गागा (चोहान), जांभजी भभूता सिद्ध भामिया² जीण माता और सकराय माता राजस्थान में अत्यधिक मायता प्राप्त हैं—इन सभी पर रच हुए गीता स जनमानस में प्रवाहित भक्ति के सात का परिचय मिलता है । य सभी प्रकार के गीत रातिजगा में तीर्थ यात्रा में देव यात्रा में गाय जात हैं और मालीगण खेतों में पानी दते समय धर्म परिहार हतु गा गाकर भक्ति का सात प्रवाहित करने हैं ।

राजस्थान में पावती मंगल और जानकी मंगल जन काव्या की कथा आयाजित करना पुण्य कृत्य माना जाता है—कथा की समाप्ति पर कथा गायक के भेंट चढ़ाई जाती है । इन जन काव्या में बरिणत अवतारा के विवाहादि की कथाओं में भी साधारण लोक जीवन की प्रथाओं का रंग दिया गया है यह इन की विशेषता है । जस—

महादेवजी तोरण आया जद,

सखियां रल कामण गाया ।” आदि आदि

पावूजा के भक्त भाष कहलाते हैं—य पावूजी के शीय के चित्रित फड लिय सब तगह धूमत है और रावण हत्या लाक बाघ पर गा गाकर भक्ति भाव स नृत्य भी करत है । राजस्थान के उज्जयपुर और भीलवाड़ा क्षेत्रों में भीला की बस्ती है उनका महान् आराध्य देव भरव है—उनके गीत व मान्यता अखिल राजस्थान में फली हुई हैं । भीला में विवाहादि अवसरा पर गाय जान वाल गीत अत्यंत सरस और अर्थ पूर्य हात है—

१ पूरा गीत उद्धृत है राजस्थानी लोक गीत पृ० ८७ ।

२ पितर पित गणिया की भांति ही बैवार मृत्यु का प्राप्त हान वाल जन भामिया कहलात है ।

भरु थाने पूजा ।

भरु भालर नो भमकी लागे, थान पूजा ॥

राजस्थान के लोक जीवन में प्रचलित गंगा यात्रा के सामूहिक गीत बड़ मधुर और भक्ति भाव से पूरे हैं। जब ये गीत समवत स्वर में हरे-द देकर गाय जाते हैं तो समस्त घातावरण गूँज उठता है।

पूर्वोक्त सम्बन्धी गीतों में त्योहारों और मेला-झरोके के गीत अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। त्योहारों और मेला का यथायत्न स्वरूप लोक जीवन में मिलता है—राजस्थान में दृष्टि से सर्वोपरि है। विभिन्न मेला और त्योहारों पर गाय जाने वाले लोकगीत इस देश की अमूल्य धाती हैं जिनका ऐतिहासिक महत्त्व भी है। लोकगीतों की विशिष्टता की दृष्टि में राजस्थान में तीज और गणगौर के त्योहार सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं। धार्मिक आस्था के साथ-साथ ही इन त्योहारों पर आयोजित मेल हैं जिनमें सम्बन्धित गीत बड़े मनोहर मधुर और सांस्कृतिक भावनाओं के यत्नक हात हैं।

राजस्थान के मरु भागों में जिनमें अधिक मरुत हैं उतने अत्यन्त नहीं। मरु भूमि में जहाँ भी छोटी-सी ताल-तनया पहाड़ी या प्राकृतिक सौन्दर्य की भूमि टुड़ वहाँ पूजकों ने किसी-न-किसी देवी-देवता की स्थापना कर दी और उस जगह हजारों की संख्या में जनता इकट्ठी हो जाती है—उन यज्ञ सम्मिलन जीवन में मनोरंजन के माध्यम बन गये जो मेल नाम में अभिहित हुए।

मेल और पंच एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। शास्त्रानुबन्धित पंच पर कहनातः और लोकानुबन्धी अनुरक्तनात्मक अथवा उत्साह बढ़ाने हैं; इनसे सम्बन्धित गीत सदा से जातीय जीवन में प्रवाहित हात आये हैं।

गणगौर घुड़ले और तीज के गीत—गौरी पूजन भारतीय संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है—उसका एक रूप राजस्थान में गणगौर नाम से विहित है जो वर्ष में दो बार चन्द्र सुनी तृतीया चतुर्थी और भाद्रपद सुनी तृतीया चतुर्थी को राजस्थान के बड़े-बड़े नगरों में मेल के रूप में मनाया जाता है। इन मेलों में छोट-छोटे नगरों और गाँवों की जनता भी बड़े हर्षोल्लास सहित आकर सम्मिलित होती हुई आनन्द मनाती है। राजस्थान में बुधवारों के नामों तथा सोभाग्यवती स्त्रियों के पंच के सम्बन्धित हर्षोल्लासपूर्ण पवित्र सामूहिक पंच हैं। इन अवसरों पर जब वे व्रत रखती, कहानी सुनती हैं और व्रत के मुम्बल रंगों की गाँठ बनाने से भिन्नमिलती हुई पाशाकों तथा आभूषणों से सुसज्जित गवरो के गीत गाते हैं—कुँडा में निवन्दी है—बड़े इश्वर दत्तन पाये जाता है। गवरो और तीज के इन गीतों में महिना जगन की मनाभावनाओं की भाँकियाँ मिलती हैं।

“गवरो गढ़ाँ घूँ उतरो ए ।

होँ ए गवरोजा हाय बवल सिरफूल, बाग में चालए ।

बाग रो काई देखबो ए गवरजा देखा अतबर सहर बाग मे चाल ए
 छोटी वासक नागरी रे हाय कवलरो फूल, बाग मे चालए ॥
 गवर गढ़ा सू०

गवर के एक गीत म गवर का अत्यन्त मनोहारा नख शिख बरगन है। विदेशी
 अभ्यागत कनक टाड न इन मेला और गीता से प्रभावित हाकर अपनी पुस्तक म गौरी
 स्नान आदि का अति सुन्दर बरगन किया है।

भात के गीता की भांति राजस्थान के तीज के गीता म भी भाई बहिन के
 पावन प्रेम की सुन्दर व्यजना हुई है। तीज पर बुलाव आने के लिये भाई की प्रतीक्षा
 और पाहर जान की प्रबल आकांक्षा की अभिव्यक्ति के अनेक गीत हैं जिनमे नारी के
 निष्कपट हृदय की भाव सहरी प्रस्फुटित हुई है। तीज के गाना म राजस्थानी नारी के
 हृदयादगार देखिये—

‘आयो आयो तीज तू हार, रमस्यीं आंगण म ।’

वन खड मे हिंडोली माडयो रंशम की पटडोर,

“राणी रणादे हींढा बठया, घरती भेले न भार ओजी
 घरती भेले न भार ॥”

क्या ही उच्च कल्पना है—राणी रणादे के हिंडोल का आगे भील म सूरज
 चन्द्रमा ब्रह्मा और ईसरजी लसकार देते है घरती भार भैलती नहीं।

तीज के गीता म शृंगार रस की सुन्दर उदभावनाएँ हुई हैं। गणगार और
 तीज के अवसर पर यदि कोई प्रियतम घर न लाता उलाहना की भरमार हा
 जाती है—

“होली नहीं आयो, गिणगोरियां नहीं आयो।

नहिं आयो तीज्योह।

म्हा वालो मोल्यो मिले ओलमो दीज्योह ।”

नायक भी इन त्योंहारा पर धातुर रहना है। राजा की चाकरी म बंध हुए
 बिरही नायक की मनाशा का चित्रण एक गीत म है —

“बादल चमके बीजली, गाजे बरसे मेह,

काग उडावे कामणी, राजा मोल¹ न देह ।”

एन गीता में मरु भूमि की भारी सस्कृति बिखरी पड़ी है। स्त्री पुरुषा के
 हृदयान्वास उमग और आनन्द की अतनी सुन्दर व्यजना अथप्र सम्भव नहीं। मरु
 भूमि के निवासियों के लिये मनोरजन के परम साधन य मरु त्योंहार है।

३ क्लासिक गाना म शृंगार रस के गीत तथा नृत्य के नाच्य गीत प्रमुख है।
 इनके अतिरिक्त श्रुतु मन्त्रांवा के ऐतिहासिक आदि कई प्रकार के गान प्रायः श्रम
 परिवार के लिये नुआ बात खेती करत भाटा तांत अथवा मित्रया चक्की पीसता
 चरवा कातती हुई जाती है।

(अ) शृंगार रस के गीत तीन प्रकार होते हैं—

१ रूप बखान २ संयोग पक्ष और ३ वियोग पक्ष ।

दाम्पत्य प्रेम हृदय का स्वाभाविक गुण है अतः प्रत्येक देश और प्रत्येक भाषा के साहित्य में तत्सम्बन्धी विशाल साहित्य है और लाखों जीवन भी दाम्पत्य प्रेम की भाव भीनी भाँकियों में झोल-झोल है । परन्तु राजस्थानी शृंगार रस के गीत अपनी निराली छटा रखते हैं । यहाँ के लोग प्रायः व्यापार के लिये अन्य देशों में जाते हैं— प्रियतम के पीछे वियोग विह्वल पत्नी के हृदयदागार विनोद करमाजनक हैं अतः इसी प्रकार के गीत सर्वाधिक पाये जाते हैं । तीनों प्रकार के प्रतिनिधि गीत निम्न लिखित हैं—

१ रूप बखान के— मूमल' रैगाद तथा इडाणो - इन में रूप सौंदर्य का मनाहारी चित्रण हुआ है ।^१

२ संयोग पक्ष—बड़ वृष को दाम्पत्य सुख का प्रतीक माना जाता है—उसके उपमान द्वारा युवती के हृदयदागारों की सुन्दर व्यंजना हुई है

यो बडलो गहर घुमेर डालातो पाना जोवन भर रह्यो ।

मत कोई तोडो बडलारो पान, मत कोई सतावो हरयेदल नै ॥”

इसी प्रकार 'नीवड' के प्रतीक द्वारा गाहम्य सुख और दाम्पत्य स्नह का स्वाभाविक रस गीतों में मिलता है ।

अन्य गीत हैं—पोयवा चूँदनी रिडमन सुरमो वाजल रतन राणा मारुजी, पण्डितारी,^२ लहरियों मामनी साडो और पोयल जान व ऋमनीवल के गीत ।

शृंगार बखान के गीत अति उच्च, पावन तथा शुद्ध भावों से अति प्राण हैं । तनीहर जीवन के गीतों में भी दाम्पत्य प्रेम की भाँकी का माधुर्य शृंगारिक भावनाओं की उद्भावना हुई है जस—

“पल सायब मिल लावांगा ।

करा माय मतीरा लावा, भर भर खारसा लावावा ।

घार मास घीमासे इह तो हिलमिल सेत कमावांगा ।

पल सायब मिल लावांगा ॥

३ वियोग पक्ष—प्रमुख गीत 'घा व' सुपना भुगन परवाना, पवैया कुप्या सुवटा, भावन खीव जमाई राखारा गाल जना धार टावा मारु आति । घान्पू और मयना विरह कल के विशिष्ट गीत हैं—इनमें विरहगी की मनाशाखा का मार्मिक चित्रण हुआ है—

१ गीत देसिय—राजस्थानी लोक गीत पृष्ठ 25—पृष्ठ 57

२ गीत का नमून देसिय—राजस्थानी लोकगीत पृष्ठ 2 ग

३ गीत देसिय राजस्थानी लोक गीत पृष्ठ 2 पृष्ठ 58 ।

- ‘श्रोत्यु’— “म्हारा सांघरिया सिरदार, धारी श्रोत्युं घावेजी,
नखबल रा घोरा, धारी श्रोत्युं घावेजी ।
जायर बठयो होतो मालव जी, म्हारी मुध-मुध दीनी बिसार,
बाईजी रो घोरा, श्रोत्युं घावेजी ।”
- ‘सपनो’— सोतो धी म्हें रग महल मे जी, सोतो भेंबर सा न देश्या जी
सपन म्हारा भेंबर मिसाया जी ।
ब्युं तो थे म्हान दोरा मिल्या, ब्युं ये दिया टाल,
कर जोड बिनती कळ, रिलमिल लागू पाय ।
सपना रे ये तो म्हने रुमाई रे । सोती धी०

(धा) नृत्य नाट्य सम्बन्धी गीत—नृत्य नाट्य के गीत विविध प्रकार के हान हैं—इनकी स्वर रचना तथा रागा का माधुर्य इतना मनाहारी हुना है जा शास्त्रीय गीता का मात करदे । नृत्य गीत लय प्रधान हुने है उनम ताल स्पष्ट आता है— इन गीता म सामान्यत करवा ठेका चरता है । नृत्य नाट्य गीता म कथा की प्रधानता हुने के कारण उनकी तान और संगीत ध्वनि कथा के साथ चरनी है । लोक नृत्य के स्वरूप की दृष्टि से प्राकृतिक स्थिति के अनुसार राजस्थान के इस विधा के गीता का तीन भागा म विभाजित किया है—

1 उदयपुर भीलवाडा बाटा और मिरोहा के पहाणी प्रन्शा म भील भीला और बजारा आदि की बहुनता है—ये लोग नृत्य गीत आदि म अपना काफी समय लगाकर मनोरजन करते हैं—यहाँ के प्रमुख नृत्य के नाट्य हैं घूमर गेर गौरी नृत्य तेजा बनजारा के नृत्य गरासिया के नृत्य कान बेलिया के ई डाला और पणिहारी आदि तथा भवाई नृत्य ।

2 बीकानेर जोधपुर और जमलमेर रेगिस्तानी क्षेत्र है—यहाँ के लोग का जीवन निर्वाह हेतु अत्यधिक श्रम करना पता है अत मनोरजन की अधिकता नहीं है—नृत्या की अपक्षा गीता का अधिक प्रचलन है । इनके नृत्य हैं—घूमर भमर बीकानेर का अग्नि नृत्य जालौर का ढाल नृत्य तथा डोटवाना के पाकरन का तेरह ताता ।

3 पूर्वी राजस्थान म गन्वावाणी तथा जयपुर आने है—य भाग समृद्ध है और जीविका निर्वाह कठार नहीं है अत धनी लोग मनोरजन पर धन्य करते हैं । यहाँ के लोकप्रिय नृत्य हैं गीण्ड और चप के नृत्य सांसिया और बजरो के नृत्य, कच्छी घोनी तथा चौक घ्यानगी नृत्य ।

य सभी नृत्य गीत सामान्यत अवसर विधि पर मनाजन के लिय गाये जाते हैं—कुछ अनुष्ठान सम्बन्धी हैं अथ त्यौहार आदि पर गाय जाते हैं—जिनका उपयोग जीविकापाजन के लिय भी हुने लगा है । भरव पूजा और गौरी नृत्य आदि प्रथम श्रेणी म आते है—

“भरू मादल नो धमको बाज धान पूजा,
 भरू भातर नो भमको बाज धान पूजा,
 भरू पणा ना रमजद बाजे धान पूजा,
 भरू नीरतना खडग बाजे धान पूजा।”

धूमर राजस्थानी महिलाओं का सर्वाधिक लोकप्रिय जानीया नृत्य है—भिन्न भिन्न देशों में कई रूपों में प्रचलित है—जिनमें निम्नलिखित धूमर सर्वोपरि हैं—

“म्हारी धूमर है नखराली ए माय धूमर रमबा रहे जासी
 म्हाने रमती ने बाजल टोका लादी ए माय धूमर रमबा रहे जासी
 म्हाने रमती ने लाडूडो लादी ए माय ।
 म्हाने सिसोबिया री सोस गु धाय ए माय ”

नृत्य गीतों के माध्यम से लोक वाद्य भी निरान ही प्रयुक्त होते हैं—ढोल, मृदंग रावण हथा, मंजीरे, पुँगी खजरी आदि विभिन्न नृत्यों के अनन्य अलग वाद्य होत हैं। वग भूषा भी सयकी अपन-अग की हानी है।

राजस्थान के उत्तरप्रदेशवर्ती भाग में भरतपुर व झतवर हैं। इन पर अज भूमि का प्रभाव होने के कारण रामवीणा, रामनीला और तीटकी का अधिक प्रचलन है।

नाट्य गीत—राजस्थानी लोक नाटकों को समान कहते हैं—नाट्य गीतों में विषय विविध होते हैं। समाज में घातक भावना व प्रचार हनु प्राय नाट्य पौराणिक व ऐतिहासिक लोक कथाओं पर आधारित हान हैं जिनमें—राजा हरिश्चंद्र नलमयन्ती, रवमणा भगव पावनी भगल पृष्ठागत्र चौहान, हमीर हठ राजाभोज और हान राणा घाति बुद्ध नाट्य गीत वीर पूजा की भावना द्योतक यहाँ के बीरा व चरित्रा पर हैं।

राजस्थान में व नाट्य गीत राज्य का इतिहास बनान में और सामूहिक व समाजिक परम्पराओं व निर्माण में बड़े सहायक मिड हुए हैं।

१ राजस्थानी लोक गीतों की अनुप श्रेणी के अभावमयिक गीत अलग वाद विषय नहीं होत—वग विषय के लाग जाना भले, टाकिय स्वामा कामरिप सांगा डानन सपर घाति इहा म म बुद्ध गाना का जीविकसाजन अनु गान विरत है विषय वर नृत्य एवं नाट्य गीत।

राजस्थानी लोक-गीतो मे संगीत

लाक गीता मे मगीत की प्रधानता एक सबमाय सत्य है । लाक गीत किसी देश की मस्त्रति क मुँह बालत चित्र ह¹ जबकि रात्रि के निस्तब्ध वातावरण म दूर स आय हुए किसी पुरानन लाक-गीत के स्वर हृदय म आनन्द या वेदना का सचार करत हैं ता काव्य की अपेक्षा गीत का मगीत-पक्ष ही हमारी आत्मा के तार हिनाने म समथ हाना है ।

परन्तु लोक-गीत का यह प्रभावशाली मगीत शास्त्रीय संगीत के कृत्रिम लाक्षणिक बंधना क नियमो म नही बाधा जा सकता । हाँ डम मटा मगीत म स्वर ताल, राग रागनियाँ और धुनें सब कुछ विद्यमान है ।

लाक गीता के मगीत और शास्त्रीय संगीत क बीच एक अदृश्य सी कड़ी है । ये दाना ही दश की मास्कृतिक प्रतिभा के प्रतीक है । लाक-मगीत का निर्माण स्वाभाविक ह । जब उसका विश्लेषण करके नियमबद्ध किया गया ता उसन शास्त्रीय संगीत का रूप धारण किया । लाक मगीत निसग निर्मित ह और सरल है । वह जीवन एव मगीत के स्वाभाविक सम्बन्ध का परिचायक ह । लाक मगीत हृदय है ता शास्त्रीय मगीत बुद्धि है । लाक-मगीत जीवन म रमा हुआ रहता है—यही कारण ह कि वह मानव समाज का इतना प्रिय है ।

शास्त्रीय मगीत क लक्षणो की दृष्टि म विचार करन पर निम्नित हाना है कि इन गीता म अनेक राग रागिनियाँ स्वर ताल और ध्वनियाँ पाई जानी है । विभिन्न विषया के गीत विभिन्न रागा और विभिन्न समयो म गाये जात हैं ।

राग रागिनियाँ—राजस्थानी लाक गीता म बिलावल काफी देश सारठ सारग भूपाली कालिंगडा सोहनी पूरिया जागिया आसावरी भिभोनी पीनू एव हिडोल आदि अनेक राग प्रयुक्त हानी है । इनम भी बिलावल, काफी और भीमपनामी आदि का प्रयाग शुद्ध और मिश्रित होना स्या म मिलता ह । निलग और कामाज जस कठिन रागा पर भी गान भिन्न हैं ।² परन्तु सर्वाधिक गीत देश सारठ और सारग पर पाये जाते हैं ।

1 प्रस्तावना धरती गानी है ।

2 नाक-बना प्रभो डौं देवीनान मामर न मारे राजस्थान का दारा करके समस्त रागा क गीत एकत्रित किया है ।

तिरग और कामो को मिलाकर एक राग बनता है—निनक-कामोद । इसमें निम्नलिखित गीत गाया जाता है —

उड़ जाऊँगे ए माँ पाल लगाय, धोडा दिना को पावरी ।

म्हारा दादाजी घडाई सोना साकली, म्हारी दादया ओ मूँडे तो बोल,
म्हे कोई मतकई आवां छा ॥

विलावल के अन्तगत तो सभी शुद्ध स्वर वाले गीत आ जाते हैं, जस गणगौर पर गान के घूमर गीत की धुन और म्वरा की व्यवस्था को देखकर उन्ने विलावल घाट क किसी राग पर अवलम्बित ममभा जा सकता है ।

राजस्थानी 'राज' गीता का सर्वाधिक लोक प्रिय राग माड विलावल घाट में ही पदा जाता है और भवाडा भी । कुरजा गीत मेवाडा राग में गाया जाता है । देश और सोरठ वास्तव में एक ही राग है नाम मात्र का भेद है । देश राग में शिंकार का एक गीत मुषरिया लिया जा सकता है । देश राग में गान के अर्थ शिंकार के गीत हैं —

ओ जो म्हारी वेग मुन लीजो,

कच की में ऊमी ठाडी ।

घपने म'दरवा घरज करसा बालो राज ।

तया

माहडो रमे छु गिंकार,

नरुदल हे हरियाला डू मर घन घण्टा हो ।

म्हारी माहडो रमे छु गिंकार, कटग दा हरिया दल

यजन माघो प्राण आघार ।

॥ नरुदल ह ॥

मारग राग का एक गीत है —

एक खमां डूजा खमां, खमां खमां वह देग ।

ओड खमां हाडा राव ने, सीतियों घण्टी उमेग ॥

मारग का उगाहरण है —

घरे घो जा बाला मोटपार,

पाछो मुडकर आजे गोरी कर गई सिंघार ।

घाल म काजल तीली तीली नयली घबहरदार,

कान में पेरया फूल भूमका गल मोत्या रो हार ॥

भयवा

भाई - भाई म्हारा बनमा,

कोटा का दरवाजा म मडो मोरडी ।

भूगानी का गान ५ —

छोड दे बलम म्हारे पामघा को पत्तो,

म्ह तो घर रडवा को मांडूगी ।

कालिंगडा राग का गीत है विणजारा । इस गीत में भरव के स्वर मिलते हैं ।
कालिंगदा आश्रय राग भरव से ही निकला है । इस राग का एक गीत दाहनी है —

भ्रमलां री ये बाता म्हाने को न दाहडा री ओ बाता
म्हा से को न राज ।
कोई रात रा मुजरा री बाता म्हा से को न,
यारी रे बलमा मन आव ग्यु राख, खरबूजा री फाक
‘यारी ‘यारी चाख ॥

कालिंगडे का अंतगत परज राग भी है इस राग में गाय जान वान
गान है —

अधिक दृश्यायो जी ये मरवण माभली रात,
रग मर हडो मारु डोलो आयो छ
किन छिदगारी गौरी दाह याने पाई ।
निपट करो छो बात मन रग प्रीतम चेत करो ने-
सायबा हो वन लागी प्रात

तथा

घू घटडो म्हाने खोलो राज ।
हाथ न घालो म्हे कई गाल जडाओ,
दिन दिन रन तुम बरसन लाग पिया ॥

और

बाकडलो मारुजी दाहडी पीव है आव छ री ।
दगमगी घाल म्हाने भाव छ म्हारी हेली ॥ बाकडलो० ॥
ए मुन तान गाव, राग भेद बनाव ।
मन रग मन मोहनी बात बात बनाव ॥ म्हारी० ॥

साहना पुरिया आर जागिया गया का गीत निम्नलिखित है —
साहना —

म्हाने ही बुलाव दावर नली री माणीगरे,
म्हे काई नाणा म्हारो मनडो लाग्यो छ
पौड़ी म्हाने मन राम आन जगावे ॥ दावर नली० ॥

पुरिया (गीत आठू डा) —

कोठ गया हो राजद्र म्हाने अक्ली नात ।
निदिन म्हारी हेली ओलू आव जिया घरे सग
रग बेग जाद मिसाऊं काई करत नाहीं न राजां पाल

बागिया —

हू तो धाने जावण नहीं देस्या हो जो म्हारा राज ।
हू तो म्हारी दासी जनम-जनम री त तो म्हारा राज ॥

आसावरी राग —एक भाग गीत म भाग के गुणा का बखान ह—यह गीत बडी सु र राग म है—साधारणतया इम आसावरी कहा जा सकता है परंतु गायागी राग के भी अत्यंत निकट है, गीत है —

भाग तो भिजाई छ राज,
आव या दोला ने रग रो बतता ॥ आव० ॥
भाग कहे सो बाबरो, विजिया कहे सो कूर ।
मेरो नाम कपला-पति, रहे नरो मे चूर ॥

झिभोटी —इम राग का हाडाती क्षेत्र का एक श्रोजपूर्ण गीत ह —

जाग-जाग बू दीपल हाडा धारी प्रजा दु ख पाव रे,
हाडा जाग रे ।
काजर थारा राज भाई ने लूट कोस मचाव रे,
श्रीर धानादार सिपाई वा से तनखा पावे रे,
हाडा जाग रे ॥

दूमी राग म गिकार-गीत देखिय मगरा —

जाग जाग हे जगल का राजा मारयो जासी रे ।
बनी का राजा भरयो जासी रे, मगरो छोड दे ॥
उम्मेदासह जो राजा आया सिकारी, मारयो जासी रे ।
मगरो छोड दे० ॥

पीनू —शलावाटी का अत्यंत लावप्रिय गीत धूमर पीलू राग में ही गाया जाता * —

गोरो धूमर रमबा रहे जाता
घेरदार घाघरो गुलाबदार साडी,
कसरिया री बोली ध्यारी लागे ए मां
म्हारी धूमर छ नपराली ए मां,
धूमर रमबा रहे जाता ।

रागमार के अक्षर पर गाया जाना वाला उज्यपुर का एक गीत ह —

रगड रगड पग धोवती हो रसिया,
धोवती विछोला थारी पाल,
भाहजो म्हारो गम गयो छ, हो नादान बाधियो ।

शास्त्रीय शक्ति म इम राग की गिनती मित्रावन थाट क रागा म होनी चाहिए धार म गाया भी राग का ही जाता है ।

पिछाना भील के किनार गरणगौर का बीच म रखकर इम गीत क साथ महिना मे मामूहिक नृत्य करती ह । यह भी धूमर के नाम म प्रसिद्ध है ।

हिंडाल राग म भूने और वर्षा के गान गाय जाने है। तौज के भूने के गाना की गति ही हिंडोल जसी वषा मे मन्नाती हुई भी प्रतीत हानी है।

काफा राग का एक गीत है —

ब्रज मे हरि होरी मचाई कहाई,
इतसे निक्सी कु वर राधिका, इतसे श्याम कहाई,
खेलत फाग परस्पर हिलमिल,
सो सुख बरणी न जाई ।
सो घर घर बजत बधाई ॥

भीमपलामी का उदाहरण निम्नलिखित गीत म मिलता है।

अब तो सुन ले बन के कगवा अब तो सुन ले ।
कगवा छु के पियरवा ऊठे उड जावो अटरिया रे ॥

॥ अब तो० ॥

माड ता यहाँ के गीता की विशिष्ट राग है। माड की घीमी धार वक्र गति म इस प्रांत की प्रकृति का सुन्दर चित्र भी प्रतिबिम्बित होता है। रेत के टीला म मान का स्वर तरता हुआ दर तक लहराना है। पहाडी गीता के प्रतिबन्धि-बूण लाक-गीत की तुलना म रखकर माड की ध्वनि का भाव स्पष्ट किया जा सकता है। माड 12-15 प्रकार की हानी है—कुरजा लूर घूमर, पीपली पणहारो मूमल, आलू बधाव घूसा जलो और काछवा तथा कागमिया आदि लम्बी ढाल (विलम्बित तय) के लगभग ममस्त गीत माड राग म गाय जाते हैं। माड राग का एक गीत है तसकरिया —

म्हाने लारा लेन पधारो जो म्हारा लसकरिया,
ऊँची पाल तलाब को म्हासे चढ़ियो न उतरियो जाय,
जो म्हारा कमधजिया ।

कागद हो तो बाचलू जो करम न बाच्या जाय, जो म्हारा लसकरिया ।
और भी अमर्य गीत इस राग म अनेक ढंग से गाय जाते हैं।

सुन्तान-निहानद का भी एना मस्त राग है कि श्रोता भ्रम उठता है। ढलती रात म समा बंध जाता है और कतारिय गा-गाकर रेगिस्तान की मी ल पार कर लेते हैं। हानी के गीत बटुघा घमान और लावनी म गाय जाते हैं।

अधिक लोकप्रिय गीता के आधार पर राजस्थाना की मौलिक राग रागिनियाँ भी बन गई हैं जिसम शास्त्राय लभणा की खाज हान पर उनके शास्त्रीय मगीत म सम्मिलित होने की संभावना है। यहाँ की मानिक राग रागनियां पाला के नाम म जन-देशीया म मुरात हैं। पणहारो घूमर जला नागजी मान् सूवर बगवत, वींछूना कागमिया आदि राजस्थान की एमी हा मानिक राग है जिनम गाय जान मान उही नामा के गीता का उल्लेख लखिना के शाघ ग्रन्थ म हुआ है।

इन समस्त रागा क अनिश्चित कई बठिन रागों राजस्थानी लोक-गीता म पाई जाती हैं। जैसे घासा और तागी का उल्लेख शास्त्रीय संगीत की भरत-खण्ड पुस्तक तक म नहीं है। य इतनी बठिन राग हैं कि बी० ए० के विद्यार्थी भी सरलता स नहीं सीख पात परंतु राग रागनिया की संगीतज्ञता से अनभिन्न अल्प श्रियां तक गीता में बिल्कुल शुद्ध रूप म य रागे गाती हुई पाई जाती है जस—घासा राग का चित्र दसिये —

करेसुवा पे लटपट छाई नागर बेल,
महलां फोडी काकडी, छाजा, रात्या बीज,
भाप पधारवा चाकरो झूारी कौन सुनाय तीज ।

इसी प्रकार दीपक राग शास्त्रीय संगीत म प्रचलित नहीं रहा, प्राय लोप सा हो बना है परंतु लोक संगीत के अब भी दिवाली के त्याहार पर प्राणिया द्वारा गाय जान बाल गीता म सुना जाता है।

मेवाडा राग शास्त्रीय संगीत में जो बनी है वह लोक गीता की मवाडा राग पर हो बनी प्रतीत हानो है। मवाड प्रात म गाई जान वाली ध्वनि अत्यन्त प्रचलित हान के कारण उस संगीत शास्त्र म भी स्थान प्राप्त हुआ है। 3-4 सौ बर प्राचीन बनी रागों में भी इस राग का कोई उल्लेख नहीं है। मवाडी राग का एक गीत लिया जाता है जो पहले लोक गीत था और नाट्यमन म बंधकर कानांतर में इस शास्त्रीय संगीत म स्थान प्राप्त हो गया। परंतु इतन प्रचार म नहीं आया कि राग के नियम भी बनाय जात —

कु जडलो दे संदेगो हमारो, जाय बालम रजये जी रे ।
घारे कांटा ने झूने नाना पखह,
हेउडी उडो घोले सार्ये जइये जी रे,
कु जडली दे सदेसी हमारो जाइये जी रे,
हे लखजो हमारो पाखडली रे ।

ताल—जिस प्रकार शास्त्रीय संगीत म ताल के बिना गायन नहीं हो सकता, उसी प्रकार लोक गीता म भी ताल का हाना आवश्यक है। लोक संगीत म स्वरा का उतार चढ़ाव और ताल या लय का स्वरूप भी प्राणिया हाना है। ताल की दृष्टि से राजस्थान क लोक गीत मध्यम हैं। सामूहिक लोक गीता म ताल का ही विशेष महत्व जाता है।

राजस्थान के रतिय, उज्जपुर की होरिया भीना क घगुण् बीकानरी चुनरी क गीत मवाणी घूमरें जयपुरी लहरिया, भारवाणी माई जमलमरी दाम्ना तथा घनेवा ल्योहार। बियाहा और समाराहा क गीत जिहनि सुन हैं उह पान हाना हागा कि राजस्थानी रागा म कितना माधुर्य है और कितनी मनभादकता है।

नाक गीता के साथ साज प्रायः कम ही प्रयुक्त होते हैं। ग्रामीण लोग अपना प्रयाजन प्रायः पून की धानी खजड़ी या डफली आदि से साध लेते हैं। ताल का ऋचि से ढानक ताल मजीरे नगारे चग डफ अपग मृदग, डमरु और माट आदि लोक वाद्य रहते हैं जिनसे लोक गीत में भी निश्चित बधन (ताल का नियमन) आ जाता है।

राजस्थानी लोक गीतों में अधिकतर निम्नलिखित तालों का प्रयोग होता है —

- | | |
|------------|------------|
| (1) दादरा | 6 मात्राएँ |
| (2) चाचर | 7 मात्राएँ |
| (3) तीव्रा | 7 मात्राएँ |
| (4) कहरवा | 8 मात्राएँ |

य ताल तबले और नगारे के स्वरूप को स्पष्ट करती हैं। टफ व चग पर अधिकतर कहरवा बजाया जाता है। लोक गीतों में प्रयुक्त हान वाले तार-वाद्य हैं— रावणहृत्था इकतारा सारंगी तम्बूरा माल्ल बाकिया मूंगल और अलमोजा। शब और पू गी मुख से बजाये जाने वाले वाद्य हैं। तार-वाद्यों में भी ताल बताने का विधान होता है जैसे रावण हृत्थ में राग पर धु धरु ताल का ही काम देते हैं एवं भजन के साथ इकतारा स्वर भी देता है और ताल भी। इस ही अर्थ वाद्य भी हैं।

अतएव लोक गीतों में भी शास्त्रीय संगीत के ताल वाद्यों की भाँति तालों का विचित्र जाल फला हुआ पाया जाता है। राजस्थानी लोक गीतों की प्रतिष्ठित गान पद्धति माड में अधिकतर दादरा चलता है किन्तु अर्थ मुख्य मुख्य गीतों में तीव्रा चाचर अथवा कहरवा। तालों में सभ्यतया कहरवा ही ऐसा ताल है, जिस दिल खोल कर बजाया जा सकता है। सामूहिक लोक गीतों में तो विशेषकर ताल ही प्रमुख रहती हैं। चाचर व तीव्रा ताल शास्त्रीय संगीत में उतनी प्रचलित नहीं हैं जितनी लोक गीतों में। व्यावसायिक (जीविका सम्बन्धी) नृत्य गीतों में नर्तक-नर्तिका तालों का प्रयोग हान लगा है। जम त्रिताल चौताल आदि रूपक। धूमर गीतों में सब ताल चलती हैं।

नारी और पुरुष समुदाय द्वारा जा अवस्थानीय संगीतमय प्रवाह उनके आयाजनों में इच्छितगच्छर होता है संगीत के स्वरों के साथ नृत्य के लय और ताल में जा समानता और उत्तार-चढ़ाव प्रस्तुत किया जाता है उसका कारण शक्ति में करना सभ्य नती। उनके संगीत का आनन्द तो देख मुनकर ही लिया जाता है। धीरे धीरे उठते हुए गीत के स्वर द्रुत होकर लगते हैं और उन्हीं के साथ तबल हानी जाती है परा की धिरकन और मगत करने वाले साजों की आवाज।

इस प्रकार सामूहिक लोक गीत नृत्य की धिरक के साथ राजस्थान के विभिन्न भागों में प्रचलता है गाय जाते हैं। राष्ट्रिय पर्वों और उत्सवों पर भी इस प्रकार की मण्डलिया का आयाजन रखा जाता है। इनका एक एक गीत धावक और दमक मण्डली का अपनी मान्यता में आनन्द विभार कर देता है।

ध्वनि—राजस्थानी लाक-गीता म ध्वनि की विभिन्नता शास्त्राय संगीत शास्त्रिया ने भी स्वीकार की है। मगम म सन 1954 म होन वाल अखिन भारतीय नाक-नस्य और नास्य उत्सव (फेस्टीवल) म विभिन्न प्रातीय लाक-गीता म म राजस्थान के गीत ध्वनि की विवेचना के कारण संगीतना क द्वारा अधिक पसंद किय गय और इह तुलनात्मक अध्ययन के लिए चुना गया।

स्वर रचना—राजस्थानी लाक गीता की स्वर रचना अत्यंत सरल ँ, माधारणतया इनम स्थायी अन्तर नही हात पूरा गीत एक ही राग म गाया जाता ँ। धास्त्रिवासी भोला धार माणा क गीत और अधिक सरल हैं। हाँ, व्यावसायिक (जीविका सम्बधी) लाक गीता की स्वर लिपि कुछ जटिल ह उनम म्थाया अन्तर भी हान लगे हैं। यहा के गीता म मारग, दश और मारठ की छाप पाई जाती है।

लाक-संगीत नाना प्रकार की धाराया म प्रवाहित हाता है, उसम विविध विषय रूत है। एक देश के जन पलो के लोक-संगीत म भी अपनी कुछ निजी विगपनाएँ रूती हैं, इमी प्रकार राजस्थान का लोक-संगीत अपनी विशिष्टता लिय हुए है, जिनका अनुभव इन गीता म रमने ने ही हा सकता है। राजस्थान के विभिन्न भौगोलिक विभाग क संगीता म भी भन् पाया जाता है। पहाडी प्रदेश म रहन वात आदिवासी गीता के गीत गावका की कल्पना-शक्ति सोमित होन के कारण स्वर प्रधान ह उनम शब्द चयन कम विचार शक्ति कुठित और वातावरण सकुचित हात क कारण गूज कम है। दसके विपरीत मरुभूमि क गीत कल्पना और विचार प्रधान तथा भावनात्मक हाते हैं और उनम आलाप और गूज अधिक है। पण्डितारी सुरजा, आन मपना हिचकी गारवन् और ई दुशा एम संगीतात्मक काव्य पूण गीता के उदाहरण ँ जा मन क कामलतम भावा का अभि-यक्त करत हुए काय और संगीत क म्थामितन म प्रतीत हात हैं। राजस्थानी लाक गीता का धुनि माधुय भाषा क भासित आता का भा प्रभावित किय बिना नही रूना। स्त्री पुरुष सम्मिश्रित अथवा अलग अलग नामूर्तिक म्प म जब मला त्योहार अथवा मार्गिक अथवा पर वगाचा तातावा अथवा घर के धांगना म आनंद विमार हाकर गान है ता सुनन वात चमत्कृत हो जात हैं।

बहुत ग दशा क लाक गीत नगरों क नाय और संगीत म भी प्रभावित हा जात है। परन्तु मह प्रभाव पश्चिमी दशा क बनडम पर अधिक है। भारतवर्ष के विगपकर राजस्थान क लाक गीता म इन प्रकार का प्रभाव दृष्टि म ननी आता। उनका कवित्व और संगीत क्षपना रममदना का सुरार्तन रख हुए है।

श्रम परिहार सम्बन्धी राजस्थानी लोक-गीत

जन जीवन क प्रत्येक पहलू म आल्हाद और मस्ती के दर्शन हान है। विवाह, संस्कार मन और त्योहार क अवसर पर यह आल्हाद और मस्ती मामागत नारी जीवन म प्रकट हाना है। वसंतिक गीना म शृंगार रम क गीत—मयाग एव वियोग पक्ष—भी अधिकतर स्त्रिया द्वारा गाय जान वान हैं। हाली आदि के अवसर पर अवश्य ग्रामीण लोग दान चण एवं नगाइ आदि बजाने हुए गान नाचत मस्ती म धूमत है। परन्तु श्रम परिहार क गीत मनक प्रकार के पुण्या द्वारा व्यवसाय करत समय गाय जान हैं। ग्रामीण जीवन म पुण्या क स्त्री बायनी, चराई पिसाई अथवा कुआ स पानी भरना प्रत्येक काय म आल्हाद और मस्ती छाई रहती है। उनकी वह मस्ती व्यवसाय करत समय गाय जान वाल गाता से अभिव्यक्त होनी है।

राजस्थान के लोक जीवन म भी हर क्षेत्र म श्रम करन वाला व्यक्ति गाता हुआ मिनगा—उसका काइ काय गीता क माधुय म विहीन नहीं। कठिन स कठिन काम करत हुए गीत की मस्ती म मनुष्य का श्रम का वाभ अनुभव नहीं हाना और गाता स काय का बोभ हल्का हा जान के कारण उसकी काय-कुशलता बढ़ती है एव काम म मुचास्ता झानी है।

गीता पर काम करन वाला किसान गाता है गउएँ व भे० चरान वाले चरवाह गात हैं, कुआ स पानी खीचन वाले वारिए गाते हैं जिह बारती गीत कहने है और डेट लादन वान बतारिए गात हैं कुआ पर पानी भरन वाली स्त्रियाँ गानी है, भाटा फान्न वाली मजदूरिनें गाती है और गाती है महिनाए प्राटा पीसन समय एवं चरगा चलात समय। और भी जा श्रम मा य काम नित्य प्रति क हात है जन जीवन म गा गा कर किय जात है जिसस श्रम की कठोरता कायकर्ता का अनुभव हा नहा होती। गान की मस्ती म तमय हावर मनुष्य श्रम की कठोरता का भूल जाता है। गीता क माधुय स कठार स कठार काय माधुय म परिणत हाकर मनारजन का साधन बन जाता है। स्टण्डर्ड डिक्शनरी ऑफ फोव्लोर न श्रम परिहार के गीता क महत्व पर प्रकाश डालत हुए लिखा है कि मनाविमान क विद्वाना तथा काय-दक्षता के विशेषता न भी स्वीकार किया ह कि गीता से काय की उत्पान्न शक्ति बढ़ता है।¹

1 Music in raising work—productivity is acknowledged by psychologists and efficiency experts

स्वामात्मिक ही है कि काम की कठोरता अनुभव न हान स मन पर बाध नहीं रहता पार गीत के माधुय म चित्त की प्रपुम्नता स काय करन म उत्साह और मन्ती उत्पन्न हाती है जिमक फनस्वरूप शक्ति की काय क्षमता तीव्र हान के साथ-साथ काय म मुचागता श्रानी है। इसके विपरीत थकावट अनुभव हान की स्थिति म कम का बोध मन पर हान स मनुष्य अनिच्छा स काय करता हुमा शीघ्रातिशीघ्र काय मुक्त हाना चाहता है—दसम वह काम बगार रूप बनकर न भली प्रवार सम्पन्न हाता ह न श्रमिक परिमाण म फनीभूत हाता है।

श्रम परिहार क गीता की पृष्ठभूमि म लाक जीवन की भास्या भी निहित है। हमारा प्रत्यक काय धार्मिक भास्या स प्रारम्भ होता है। अपनी काय सिद्धि हेतु मनुष्य दवी-देवतामा की मनीती करता है। जिस प्रवार मागलिक काय के प्रारम्भ म गणेश पूजा श्रान्ति की जाती है उसी प्रवार कोई भी व्यवसाय करते समय यक्ति हृदय म परमात्मा के प्रति नतमस्तक होकर प्रपन व्यवसाय म सिद्धि की कामना करता ह। प्रन दवी देवतामा की स्तुति स प्रारम्भ करके कभी कृपि श्रान्ति व्यवसाय का ही दवी रूप म मानता हुमा व्यवसायी भाव विभार हो गान लगता है और कभी व्यवसाय क साधना व्यवसाय की प्रत्रिया का बणन करता हुमा परिणाम म प्राप्त होने वाल फल की कल्पना म श्रानन्ति हाकर परमात्मा के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करने लगता ह। चक्की और चरख क गीता म माताए देवी-देवतामा क गीत भजन और हरजस ही गा गा कर अपना चित्त भगवान् के चरणा म लगाती हुई श्रम को भूल कर घण्टा तक कमरन हान की क्षमता प्राप्त कर रती है। इसी प्रकार खतरे का प्रवसाय वारती श्रान्ति (बुए पर खडे हाकर खता म पानी देना) काय प्रारम्भ करते समय माली हनुमानजी का स्मरण करके दवी-देवतामा की स्तुति करता है—उमक दाहा का मुग्य स्वर देव स्तुति ही हाता है। राजस्थान के भीना मीणा और लगा क श्रम परिहार क गीता म भी मुग्यत दवी-देवतामाओ और व्रतापवासा के गीत हात है जिनम उनक धार्मिक विश्वास और श्रान्ति की श्रमिब्यक्ति हाती है।

राजस्थानी श्रम परिहार सम्बन्धी गीता क मुग्य भेद निम्नलिखित है —

- (1) कृपि क गीत (2) पशु चराने क गीत (3) कतारिया¹ के गीत
- (4) बारेती गीत² (5) पण्डितारी गीत (6) भाटा फोडने ममय गान क गीत
- (7) चक्की और चरख क गीत (8) भीना मीणा और लगा क गीत।

कृपि गीत—वेनी करना हुमा किसान और उसके परिवार क सभी सप्तस्य माना मृष्टि रूप परमेश्वर म सीधा सम्बन्ध जाडकर श्रानन्त मग्न हो कृपि काय करने

1 ऊरु लाने वान।

2 कुँधा स पानी निकाल कर खता म पानी देना बारा ला कहलाता है प्रन हन मालिया के गान बारेती गान कहलाते हैं।

हैं। मती की सफ़रता निमित्त कृषक सेती का लवी स्वरूप मानकर उसकी स्तुति और प्रारधना करता है। मती म हान वाली फसल पर ही उसकी मुख समृद्धि आधारित है—मती माना स्वर्ण की खान है जिसमें वह अपने श्रम द्वारा कप भर क निय साना उपजान वाला है जो न केवल विमान क बल्कि दश भर की समृद्धि का आधार बनगा। दबी की स्तुति से प्रारम्भ हुए किसान क गीता म मती सम्बन्धी सभी विषय सम्मिलित हो जाते हैं। कृषक जीवन का पूरा चित्रण इन गीता म मिलता है। कृषि कर्म की विवेचना और इस व्यवसाय के सुखद परिणामों का परिचय। जहाँ मती क फलस्वरूप प्राप्त हान वाली समृद्धि की कल्पना किसान के हृदय का हर्षोल्लास व्यक्त करता है वहाँ इस व्यवसाय म आने वाली कठिनायों का खीभ कर कृषक इन गीता म अपने मन का क्षोभ भी व्यक्त करता है।

मती के प्रति मुरम्भ भाव व्यक्त करता हुआ कृषक गाता है—

“मुरग ऋतु आईं म्हारे देस ।

यो कुण बीज बाजरी ए वदली, यो कुण बाव मोठ मेवा मिसरी ।

मुरगी ऋतु आईं म्हारे देस मली ए मुरग ऋतु आईं म्हारे देस ॥

सवाई बिरखा लाईं म्हारे देस ।’

राजस्थान क कुछ क्षेत्रों म मुख्य उपज माठ बाजरी है। पूरे कप यहाँ क लाग माठ बाजरी की रोटी खान है। खीचड़ा बनाने और मोठ कावरी पापड भुजिया आदि अनेक रूपा म उपयोग करके स्वादिष्ट भोजन बनाते हैं। अतः बाजरी और माठ का इस गीत म मवा मिसरी के समान बता कर मन का आल्हास व्यक्त किया है।

इसी प्रकार एक गीत म सुन्दर सेती की कल्पना म आनन्द विभार हुई गहरी के उत्तार देखिये—

धरु सायब मिल खावागा,

डरा माय मतीरा साग्वा, भर भर खारला लावागा ।

धरु सायब मिल खावागा ।

खेता माय काकडिया पाक्या भर भर खारला लावागा । धरु सायब०

खेता माय बाजरी पाकी, भर भर गाडा लावागा ॥ धरु सायब०

खेता माय मू गडला पाक्या भर भर गाडा लावागा ॥ धरु०

च्यार मास चौमासे मे तो रिलमिल खेत कमावागा ॥ धरु०

काकडी^१ मत्तारा^२ भी रेगिस्तानों भागों की मुख्य उपज है। मामास लाख जावन म खेतों म काम करने वाले मजदूरी करने वाले तथा अन्य साधारण श्रमिकों क

1 उत्तर प्रदेश आदि म फूट जाती है—उसमें मिलता हुआ एक फल है—कमवा साग भी बनता है ।

2 अथ प्रातः म तरबूज वालन है— पर दाना की फसल का समय अलग होता है ।

श्रम परिहार सम्बन्धी राजस्थानी लोक गीत

लोग लिन लिन भर बावड़ी मतीरे पर निकाल देते हैं। जिन भेथा म पानी कम मिलता
"बहा मतीरे के पानी म हा प्यास बुभा नेते है। सती बरत-बरत य गीत गाता हुआ
निमान परिवार आत्म विभोर हा जाता है।

दबी माता की स्तुति म स्वावण माता का गीत भी श्रम परिहार हेतु गाया
जाता है। इन सब गीता के नमून राजस्थानी लोक गीत खण्ड 2 म तथा श्री नरोत्तम
राम एव डा० रामसिंहजी आदि द्वारा सन्कलित राजस्थान क लोक गीत पुस्तक म
मिलेंगे।

पशु चराने के गीत—राजस्थान म चरवाहा के गीत अधिकतर वर्षा म
सम्बन्धित हाते हैं। भड बकरी चरान वाल गडरिय और गऊ चरान वाल ग्वाला क
निद्रा जीवन की भनक उनक गाता म मिलती है। इन गीता म प्रामीण जीवन क
पारिवारिक चित्र भी प्रस्तुत हाते हैं। पशु चराने क लिय रेवड का ल जान हुए
चरवाहा भयवा उसकी पत्नी निद्रा क भाव स गीता की मस्ती म बढ जात है कभी
इंद्र की स्तुति¹ करते है कि इंद्र दबता मावली (प्रचुर) वर्षा करे जिसस पशुआ क
निय घाम उगे और गर्मी का प्रचण्डता दूर हा कभी बाल उमडत देख हपाभिव्यक्ति
करत है। इन गीता म बाल गरजन विजली चमकन और घीरे घीरे वषा की बू द
पृथ्वी पर गिरन का माओहारी वणन रहता है जम —

'बादलिया घरराव छ।

आया आया जेठ असण्ड ओ स्याम इदरियो घरराव छ।

मेहा रो जल आई ओ स्याम बादलियो घरराव छ।

हलिया रो साज सवारो ओ स्याम बादलिया घरराव छ ॥"

×

×

×

×

"ओ किन बादल गाज आ किन चमक बीजली।

म्हार डरा बादल गाज आ नाला चमक बीजली।

ओ किसेक बादल गाज आ किसेक चमक बीजली।

ओ गहरो गहरो गाज आ ल ल चमक बीजली।

ओ मघरो मघरो गाज आ चम चम चमक बीजली।"

इसा प्रकार चौमास बारहमास गीता म चरवाहा तथा वृषका का उच्चार
मिलता है—प्रत्येक महीन म ऋतु अनुसार हान वाली फसल की कल्पना कर कर क
घामाण जन धानन्तित होत है—इम स्वाभाविक एव स्वत स्फुरित धान क लहरा
म पशु चरान और सती करने क श्रम का इलान की महती शक्ति निहित ह। बारहमास
का एक सुन्दर आल्हात्पूण गीत खलिय राजस्थानी लोक गीत क तृतीय खण्ड म
पृ० 74 पर जिनकी अन्तिम लाइना म प्रामीण दम्पति क हृत्पयत उन्नास की

1 गीत खलिय—राजस्थानी लोक गीत (खण्ड 2) पृष्ठ 70

भनक दशनीय है। प्रत्यक महीने में होने वाली विभिन्न फसल का वर्णन करनी हुई गटिंगी ग्रानद विभा हुई जाती है —

‘साठ महीने बिरखा लागी, बाजरिया री बाह
मारुजी म्हार भातो साब, वाहरे साईं बाह।

× × × ×

बसाखा मे धूप पडसी, तावडिये री ताह,
पडछावा मे पडिया रहसा, वाह रे साईं बाह।
जेठ महीने धूप पडसी तावडिये री ताह,
सेजर चढढर खोला खासां, वाह रे साईं बाह।”

किमी गीत में माना-पुत्र के वार्तालाप द्वारा बट की मान मनोबल का मनमाहक चित्र है। छाट स लाडले ग्वाने का गडए चरान जान हनु मा मनानी है—बटा अनक प्रकार क बहाने करता है।¹ इसी प्रकार जयपुर के एक गीत में बालक कहता है—दादा मुझे ता पाटी बस्ता ता मैं गाय चरान नहीं जाऊंगा—भ तो पड तिल कर नाजम बनू गा।² एक अन्य चरवाह क गीत में वर्षा क कारण पशुमा की चरान जान की असमर्थता प्रकट की है —

“डू गरा मे मेह बरस।

कठ चर म्हारो रेवडियो, ए कुण गया गुवाल ॥ डू गरा मे०

डू गरा मे गयो म्हारो रेवडियो, कोई माहजी गया गुवाल ॥ डू गरा मे०

किसोक बरस मेहडियो, किसोक भरिया ताल।

मूसलधारा मेहडो बरस कोई भिलमिल भरिया ताल ॥” डू गरा मे०

वतारियों के गीत—ऊट का राजस्थान का जहाज माना जाता है—कारण नि रतील क्षेत्रों में सब प्रकार का सामान इधर से उधर ले जान का काम ऊट में ही लिया जाता है। पक्की सड़क के अभाव में प्राचीन काल में गावा में यात्रा भी ऊट द्वारा ही होती थी—अब भी बहुत से स्थानों तक पहुंचने का माधन ऊट ही है। ऊट क पावा की बनावट इस प्रकार की है कि उस मरुभूमि में चलने में कठिनाई नहीं आती। उसके तपुआ में गटियां बनी हाती है और गल में पानी रखने की बरिया आती है जिनमें वह पतना पाना सचित कर लता है कि रतील मैदानों की नम्बी नम्बी यात्रा में पानी न मिलने पर भी ऊँट अनापूवक धीमी धामी चाल से चलता जाता है। राजस्थान के प्राचीन जीवन में यातायात का प्रमुख साधन ऊट है व्यापार के लिये अनाज काकटा मनीर पशुमा के लिये चारा भवन निर्माण हनु ईट चूना बकर आदि सामान इधर से उधर ले जान का काम ऊट से ही लिया जाता है। अतः

1 गान दक्षिण—राजस्थानी लोक-गीत पृष्ठ 220

2 गीत देखिये—राजस्थानी लोक गीत (खण्ड 2) पृष्ठ 136

ऊँटा पर बाभा लाग कर ले जात हुए पुरुष गीत गा गा कर अपना श्रम परिहार करते हैं। इनके गीत सामान्यतः बिरुजारा समास अभिहित होने हैं और एक प्रमुख गीत है 'गारबद' १। इस गीत में गारबद चोरी होने पर ऊँट वाले कतारिया की मनास्थिति का ममस्पर्शी चित्रण हुआ है —

“लारा समदर सू कोड मगाया, जूनेगढ़ गु पायो रे, म्हारा गोरबद
भति कोडा तू ऊजला, बिच, हडवी कांच बिढाया रे।
गोरबदिये रे कारण म्हारा बारे को होन पड गयो रे ॥ म्हारा गोरबद०
गोरबदिये ने बणावता म्हान महीना लाग्या रे ॥”

इसी प्रकार ऊँट पर जाते हुए कतारिया व मुखस अथवा गीता की ध्वनि भङ्गित होनी रहती है जिनके विषय अधिकतर अपने-यवसायसम्बन्धित हान हैं और कुछ भजन व पौराणिक गीत भी गाय जाते हैं।^२

एक बिरुजारा गीत में पति पत्नी व वार्तालाप में पत्नी द्वारा कतारिया की प्रेरणा देते हुए पारस्परिक प्रेम भाव की सुन्दर व्यञ्जना हुई है —

“बिरुजारा रे लोमी,
लोग तो दिसावर न जाय, तन घर बठया बसू सर। बिरुजारा०
बिरुजारी ए लोमण, औरा क पल्ल छ दाम,
म्हार तो पल्ल काय नहीं, बिरुजारी ए लोमन।
बिरुजारा ए लोमी, ले जा गले के रो हार,
बाव पग रो लेग्या टोडरो।” बिरुजारा०

इसी प्रकार पत्नी अपने अथवा आभूषण व नाम ले ल कर पति का 'पापार' हेतु निमावर जाने को प्रेरित करती है।

बारेती गीत—राजस्थान व कुछ अत्यन्त गहरे हान हैं—इसीलिये इन कुँआ व नाम व साथ प्रायः सागर लगा रहता है—अलख सागर कुँआ नवल सागर कुँआ अमृत सागर कुँआ आति। आधुनिक युग में ता विज्ञान के बल से वे नगरों में बिजली की शक्ति से कुँआ व पानी सर्वत्र प्रसारित किया जात लगा है परंतु प्राचीन काल में कुँआ व पास की बाड़ी और छत साचन हेतु पाना निकालन में अत्यधिक श्रम करना पड़ता था। अब भी जिन ठेको में गाँवाँ तक बिजली से पानी निकालन की व्यवस्था नहीं हुई है प्राचीण जन स्वयं ही यह श्रम साध्य काय करते हैं। रात भर माली चरम की सहायता से पानी निकाल कर ही जल जम स्थान पर मंचित करता है—प्रातः उससे छता और बाडिया की मिचाइ हाता है।

1 गारबद ऊँट पर सामान लाने का बन्ग थला सा होता है।

2 बिरुजारा गीत दक्षिण—राजस्थानी लोक गीत (खण्ड 2) पृष्ठ 133। भजन और पौराणिक गीत भा इसी पुस्तक में अथवा पृष्ठ 108-110 तक मिलेंगे।

यह पानी निकावन का कृत्य राजस्थानी भाषा में बाराब्ना कहनाता है और पानी निकावन वान का बारती कहते हैं। राजस्थान का यह बारती यथायम पृथ्वी पुत्र है। उसका जीवन प्रकृति प्रेम में आन प्राप्त है—धर्म परिहार हेतु माय जान वान उमक गीता में प्रेम प्रकृति प्रेम की अभिव्यक्ति हाती है। प्रकृति में उमका जीवन रगा हुआ है—यह प्रकृति प्रेम की धारा उमक गीता में स्फुरित हाती है जिसके प्रभाव में कुछ में पानी निकावन का बटोर काम उमक नियम मारजन में परिणत हो जाता है। कुछ पर लड़े हाकर पानी निकावन स्वर में गानी नहीं है फिर भी मानी इस स्वर की परवाह न करता हुआ आनन्द-मग्न हाकर मस्ता में गाता है—उम निम्नर कवि के गान स्वाभाविक रूप में स्वतः स्फुरित हान के कारण सरस और सरल हान है। स्वर के स्थान पर खड़ा हुआ यह पृथ्वी पुत्र सवप्रथम देव स्तुति करता है—गव प्रथम बजरगवनी का स्मरण करके अथ देवतामा की वन्दना हाती है। फिर ऋतु विज्ञान का परिचय देता हुआ वीर रस के दाँ. भी बानता है।

माली के गीता में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रती प्रमिवाद्या की भावमयी गाथाएँ हाती हैं। धानी जमान गाधी आभल आनि की प्रेम गाथाएँ बारती गीता में पाई जाना हैं। उदाहरणार्थ कुछ दाँ. न्यि जाने हैं —

‘देती पानी बीनती रे, परमेसर को आप।

पर हाथा ना कीजिये रे, करिये आपो आप ॥”

× × × ×

“या तन की मट्टी कह रे, मन को कहूँ कलात।

नणा का प्याला कहूँ रे, भर भर पियो जमाल ॥”

× × × ×

“धानी के घर धन बठ रे, जू बूब को नीर।

सापुरसा के खाटव रे, सब काहूँ को सीर ॥

सिर मटकी बसर मरी रे, घल गयद जू आल।

पाछी मुड कर देखती रे, बद को लडो जमाल।’

माली के स्वरों में वीर रस की धारा भी दशनीय है —

भूत जण तो दोय जण रे के दाता के सूर।

नातर रहजे बाँभडी तू, मती गमाजे नूर ॥

बारती का स्वर का पूरा ध्यान रहता है और वह स्वर बनता है चरस की चाल में। चक्कर खान हुए चरस का स्वर ही मानी को गा की प्रेरणा होता है। जमे बादला का उमका देखकर मार नाचन लगता है, उसी प्रकार चरस के भूण की आवाज पर माना मस्ती में आकर गान लगता है। किसी गाँव में कई कुछ हान हैं ता गाधी रात के समय सब जगह में चरस के साथ बारेती के गान के स्वरों में समा वध जाना है। इस प्रकार गीता के सहारे से बारती का अत्यन्त धर्म माध्य बटोर काम सरल व सरस बन कर स्वाभाविक रूप में सम्पन्न हो जाता है।

पण्डित गीत—सिर पर मटकी व गूनिया¹ रख रख कर कुएँ से पानी लाती हुई स्त्रियाँ भी गीत गा गा कर श्रम परिहार करती हैं। इन गीतों का मुख्यतः पण्डित नाम में अभिहित किया जाता है। यद्यपि गीतों का विषय विभिन्न होते हैं—पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित अनेक प्रसंग इन गीतों में मिलते हैं परन्तु शृंगार से संपर्क हुए दाम्पत्य जीवन की भी इनका मुख्य स्वर माना जाता है। इन भावों का गीत विशेष राजस्थान में पण्डित नाम से प्रचलित है।² यह गीत राजस्थान के सर्वश्रेष्ठ एवं अत्यन्त लोकप्रिय गीतों में से है। ग्रामीण जीवन में प्रायः काल रंग बिरंगे कसरियाँ वसुधवल ओम्न ओम्न सिर पर इडणी और इडणी पर पानी व लिय घन्टे व गूनिया रखे हुए कुँआ पर जाती हुई स्त्रियाँ का दृश्य बना मनमाहक होता है। अडोमन पडोसन कुएँ पर इडणी होकर अठवलिवाँ करती और गाना भी इनके गीतों में कभी-कभी सास बहू एवं परिवार के अन्य सदस्यों से भगडा का भी उल्लेख रहता है—और इडणी का बणन करते-करते अत्यन्त विभोर हो जाती है। इन अतिरिक्त चूँदर लहरिया आदि तीज के गीतों में भी गीतों हैं। ईडणी³ गीतों का एक नमूना है—

“म्हारी सवा पाव की ईडणी म्हारो सवा तार को सूत गमगी ई डूणी ।
 म्हारी माहजी बणावी ई डूणी,
 म्हारा मामोजी कात्यो सूत, गमगी ई डूणी,
 मोतीडा जडो म्हारो ई डूणी,
 कोई होरा जडयो म्हारो सूत, गमगी ई डूणी
 म्हारी सवा साख रो ई डूणी,
 म्हारो सवा साख रो सूत, गमगी ई डूणी ।
 म्हे और कातस्यां सूत, गमगी ई डूणी
 मोतीडा जडास्यां ई डूणी,
 म्हे होरा जडास्यां सूत, गमगी ई डूणी ॥”

भाटा फोडने वालियों के गीत—राजस्थान के कुछ भागों में पत्थर का काम होता है—वहाँ मजदूर स्त्रियाँ भाटा ताड़ते समय पत्थर टूटने की आवाज के साथ स्वर मिलती हुई मुर्र गीत गाना है। काम के साथ-साथ गाय जान वाल गीतों की राग उम काय के स्वरूप से निर्धारित हानी है—काम की तीव्र गति के साथ गीतों की राग मिलकर सरस संगीतमय वातावरण की सृष्टि करत है जिसमें भाटा

- 1 पीतल के छोटे-बड़े टाकनी जस पानी के बदन को राजस्थान में गूनिया कहते हैं।
- 2 पण्डित गीत प्रायः अनेक सक्लना में उपलब्ध हैं।
- 3 सिर पर घन्टे का निदान के लिये गान-गाल चकरी जमी बनी हुई हानी है—यह माधारण में तीज पर ही पण्डित गीतों का मन स्थिति में भावपूर्ण गीतों की रचना कर ली है।

ताज्ज जम कगोर कम की कठीरता का भान ही नहीं हालता । जयपुर व दौसा कस्य म गाय जान वाला हम प्रकार का एक गीत यहाँ लिखा जाता है —

माखरा की झूंगरी मे चाल छ मसीन,
भाटा फोड रे सोडयो, म्हारो देवरियो चाल रे ए खाम ।
इकलौ सकडौ ना जल रे, नाथ उजाला होय,
सद्यमन भूला भादा राम अरेसो होय । माखरा की०

एक ही एक और गीत म ग्रामीण जीवन के दाम्पत्य प्रेम की मनाहर भक्ती मितनी है —

“माखरी की झूंगरी मे भमडा चल,
रोडो फोड रे टायरा को बाबलियो ।
दिन की उगाली घर सू निकल्यो, दोपहर दिन चाड्यो आवतो
माखरी की०

रोटी क्षाय डोल हुक्को भरियो, जब म्हारे जीव मे जीव जो आयो ॥’

माखरी की झूंगरी मे०²

चक्की चरखे के गीत—ग्रामीण महिलाएं प्रायः चार बजे स उठकर भाटा पीमती हैं—चक्की चलान समय ग्रान्त मग्न हुई गीत गाती हैं—य जात - के गीत कहलात हैं । इन गीत म चक्की व प्रतिरिक्त प्रायः भजन प्रभातो भार हरजस प्रादि हान हैं । एसी प्रकार तिन म फुरसत के समय स्त्रियाँ मूत बानता है—चरखा चनान समय ग्रान्त मग्न हुई चरखे के घूमने की आवाज व साथ-साथ स्वर मिलानी हुई गीत गाती ह । भजन हरजम ता श्रम परिहार व लगभग सभी अवसर पर गाये जान है—चरखा बानते समय चरखे पर बनाय हुए गीत भी गाय जाने ह —

चरखा हिरद को घाव घण्पा ।

काहे को तेरो बण्यो चरखलो, काहे को रे जडाव जडियो
अगर चनल को भरो बनो चरखलो, सोने को रे जडाव जडयो
व मासा को तरो बण्यो चरखलो, क मासा को जडाव जडियो
दस मासा को मेरो बण्यो चरखलो, नौ मासा को जडाव जडियो
कुण स सहर मेरो बण्यो चरखलो, कुण स सहर जडाव जडियो
दिल्ली ए सहर मेरो बनो चरखलो जपरियो मे जडाव जडियो ।

इन सभी श्रम परिहार के गीत म श्रम की महत्ता स्थापित हानी ह जिमर पतम्बरूप श्रम साधना म स्त्रियाँ व मन के उत्साह उत्लाम आर स्वाभाविक रम मयना का परिचय मिलता है ।

1 पूरा गीत देविय राजस्थानी लाक-गीत (खण्ड 2) पृष्ठ 139

2 जात = चक्की

भील, मीणों और लोगों के गीत—राजस्थान के पहाड़ी भाग उदयपुर और बांसवाड़ा क्षेत्र में भील, मीणों और लोग बस्ती है। पहाड़ी जीवन की कठिनाइयों से सघप करने जीवनयापन करने हेतु ये लोग मनोरंजन के साधन गान नाचने का आश्रय लेते हैं। मनोरंजन की प्रवृत्ति के कारण ये लोग कठिन से कठिन परिस्थिति में भी प्रसन्न रहते हैं। इनके गीतों के विषय अन्य राजस्थानी गीतों की भाँति देवी देवताओं के अतापवासा संस्कारों एवं विविध हास्य रस के, ऋतुआ और तीर्थों के वीरता और प्रेम प्रहसन आदि होते हैं परंतु ये गीत सुनने में श्रोता से निराले प्रतीत होते हैं—इनके स्वर ताल अपने हैं। भाषा भी इनकी अपनी होती है। भीलों के कुछ गीतों में उनके धार्मिक विश्वास, रहन सहन, रीति रिवाज और जातीय एकता का बल भी मिलता है। प्रातः चक्का चलान का एक गीत है जिस प्रभाती कहते हैं —

‘ राइवे केवाँ बोले रे,

कवड़ा रो नाले हूरज (सूरज) ऊगो रे, जागो म्हारो माता हूरज ऊगो रे । ’

इन पहाड़ी जानियाँ के गीतों का श्रम परिहार के गीतों की श्रेणी में इसलिये लिया गया है कि भीलों के महारों के लोग अपने जीवन की कठिनाइयों का सुगमता से पार कर पाते हैं वस्तुतः श्रम परिहार हेतु अलग से गान के इनके विदाय गीत नहीं हैं।

1 पूरा गीत अथवा राजस्थान के भील गीत, दूसरा भाग, पृष्ठ 76

राजस्थानी लोक गीतों में सांस्कृतिक अभिव्यक्ति

संस्कृति मानव के आन्तरिक एवं बाह्य जीवन की अभिव्यक्ति है जिसमें अन्तर्गत जीवन के भौतिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक सभी मूल्य आ जाते हैं। प्रत्येक देश और समाज के ये मूल्य परम्परा के प्रवाह लिए हुए आते हैं जो उस देश व समाज की संस्कृति कहलाती है। हम संस्कृति की आधारशिला वही का नाम समाज मानते हैं। लोक समाज के आचार विचार, रहन-सहन नीति धर्म एवं जीवन ढंग की चर्चा जिस साहित्य में होती है वह लोक साहित्य कहलाता है। अतः लोक साहित्य में किसी भी राष्ट्र व समाज की संस्कृति चित्रित होता निर्विवाद सत्य है।

डॉ० सत्यनन्द लोक साहित्य का परिभाषा करते हुए बताया है कि लोक साहित्य के अन्तर्गत वह समस्त भाषागत अभिव्यक्ति आती है जिसमें आत्म मानव के अवस्था उपलब्ध हैं। आपने साकालावत व रशियन फोकलोर नामक ग्रन्थ में अभिव्यक्त विचारधारा का भी उल्लेख किया है कि लोक साहित्य में प्राचीन संस्कृतियों का अवशेष प्रधान तत्त्व है।

राष्ट्रकवि दिनकर के शब्दों में संस्कृति जिन्गी का एक तरीका है जो सन्ध्या में जमा होकर समाज में छाया रहता है। जिसमें हम जन्म लेते हैं हम जो कुछ भी करते हैं उसमें हमारी संस्कृति की भन्क हाती है। लोक जीवन में यह संस्कृति अपने मौलिक रूप में पायी जाती है जबकि शिष्ट समाज में इसका परिष्कृत रूप सभ्यता का आवरण धारण करके प्रकट होता है। लोक साहित्य की अभिव्यक्ति में इस शुद्ध स्वप्न लोक संस्कृति के दर्शन होते हैं। आदि काल में जो हमारे लोक काय और दर्शन की रचना करती आयी है एक चित्र व मूर्तियों निर्मित हुई है उनमें हमारी संस्कृति का सभ्यता रूप प्रतिबिम्बित है।

संस्कृति बड़े वस्तु मानी गई है जो हमारे जीवन में व्याप्त है परन्तु सभ्यता के आवरण में लुप्त हुआ प्राचीन संस्कृति का मूला स्वरूप हम लोक गीतों व वातायन में ही मिलना सम्भव है। किन्तु भी देश या काल व गत में स्वार्थ मौलिक संस्कृति लोक गीतों द्वारा पुनः उदघाटित हो सकती है।

डॉ० हजारी प्रमानन्द द्विवेदी ने लोक गीतों के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए लिखा है कि ग्राम गीतों का महत्त्व उनके काव्य साहित्य तक ही सीमित नहीं है उनका

हानी के अवसर पर गाने का ग्राम्या भारिया गीत पारिवारिक सुख के चित्रण का सुन्दर नमूना है। सुखी कुटुम्ब के प्रतीक ग्राम के वृक्ष की समृद्धि से गीत आरम्भ होता है। इस समृद्धि से पूव वसन्त ऋतु के आगमन पर एक लिन गहिरणी अपनी सहलिया के साथ महल से उतरी और सगुणी सास ने उससे कहा कि बहू आज मुझे गहने पहन कर लिखाओ इस पर बहू उत्तर देती है कि मेरे आभूषण तो समस्त परिवार के सन्त्य हैं। वह सभी पारिवारिक पक्तियाँ को अपने आभूषण उपमाना द्वारा वर्णन करके पारिवारिक सुख का परिचय देती हुई अंत में कहती है 'गामूजी आपकी कोख का धन्य है जिसने मेरे पति को जन्म दिया। यह देखिए गीत की अन्तिम पक्तियाँ में सास बहू के पारम्परिक प्रेम की झलकी—

मैं तो चारया बहूजी चारो बोल ने,
लडायो म्हारो स परिवार,
सहेल्या ए आबा मोरिया
मैं तो चारया जी, सासूजी चारो कूँल ने।
सहेल्या आबा मोरिया

यह है राजस्थान की संस्कृति, जिसकी भाँवी यहाँ के लोक मानस से स्फुरित स्वर लहरियाँ से विभिन्न रूपों में दर्शनीय रहती है। इसी प्रकार के अन्य पारिवारिक प्रेम के गीतों से राजस्थान के साम्प्रदायिक भावों की व्यञ्जना होती है। जिठानी के मुख से दवरानी के प्रति लाड और दवरानी द्वारा पगा लगने की भावना प्रकट करने वाला एक गीत है—

मेमद चढायो, देवर परणी ने परावो जी।
परणी ने परावो, म्हारे पगा लगावो जी ॥

इसी प्रकार पूरे गीत में गहनों के नाम ल लेकर देवरानी के प्रति प्रेम प्रकट किया गया है।

दाम्पत्य प्रेम के गीतों में भी भारतीय संस्कृति की विविध भाँकियाँ प्रस्तुत हुई हैं। मयोग व वियाग दोनों प्रकार की शृंगारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति इन गीतों में प्रचुरता में पायी जाती है।

रंठी हुई पत्नी को मनाने हुए पति के बोल सुनिये—

खोलो खोलो गौरी जडिया किवाड
बाहर आयो चारो सायबो जी राज।

म्हारा सायबी शन्ता में राजस्थाना नारी के पतित्व घम का सुन्दर झलकियाँ मिलती हैं। एम ही चिरकाल पश्चात् परदश से आय पति के प्रति प्रेम प्रकट करने हुई पत्नी के हृदयहारी भाव देखिये—

रग, रग जिमास्या जी कौडका खूब करार्या जी,
नखदल बाइए, रावल जिमास्या जी।

नई सभ्यता में गने हुए स्त्री पुण्या में दाम्पत्य प्रेम व इस उज्ज्वल स्वरूप का दशन दुलभ सा हो गया है ।

आदश प्रेमिका के रूप पला भलती हुई पत्नी कहती है—

भूँ भाल दुत्ताऊँ, फूला रो पला म्हारे हाय मे,
ऊँची मेडा राबली ए धौमु डा निबला जोय,
ढोत्यो पलग निवार को सो गयो सापवो,
अजो भूँ भाल दुत्ताऊँ फूलारी पलो म्हारे हाय मे ।

पृथ्वीराज चौहान हमीर हठ, अमरसिंह भालदे, हाडीरानी, महाराणा राजा भाज और जमल आदि को यश गाथाएँ राजस्थान मङ्कृति में बीर पूजा की धोतक हैं । प्राचीन काल में गंगा-नगरी डोलक और माङ्गो आदि लोक वाद्य की संगत में इन गाथाओं पर बने हुए न्याता का अभिनय करती हुई राम मण्डलियाँ कान-कान में राजस्थानी सङ्कृति का प्रचार और प्रसार करती पायी जाती थी । सभ्यता व विज्ञान से तिनमा धरो की वृद्धि के साथ इन लोक मनोरंजनकारी प्रवृत्तियों का साथ हाता जा रहा है ।

विवाहादि मन्कारा के अवसर पर गाय जाने वाले लोक गीतों में देवी देवताओं के प्रति आस्था भाई-बहिन का प्रेम और प्रामोद प्रयाग की भावना व विभिन्न रूप व्यक्तित होत हैं । विनायक भैरा रामदेव आदि व गाल देवी-देवताओं में उनकी अनन्य भक्ति क प्रताक हैं । भान के गीत भी राजस्थानी लोक सङ्कृति में अपना विशिष्ट स्थान राबत हैं । भायरे में बहिन व हूय की घडकन अनुभव करने का विशेष मन्त्व ह वएन का नही— जस—

आयो छ भाँ का जायो बार हीरा जड ल्यायो ।
धोडूँ ता हीरा रे बीरा भड पड,
धैसू तो तरसे भाई रो जोव हीरा जड ल्यायो ।

पान सुपारी व पान का बीडा लेकर भाइया का पानन जाना बहिन की माणिक भावना का धानक ह—मायरा¹ लेकर भाई जाता ह बहिन का चूनड उठाना है इस अवसर व चूनगी गीतों में बहिन की मनपूर्ण आत्मा का छनछनाना हुआ प्रम दशनीय है ।

राजस्थानी लोक गीतों में यहाँ के पान और बसभूपा आदि में भी अन्त लोक सङ्कृति बनकती है । मनुष्य जीवन की स्वाभाविक आवश्यकताएँ समान हान हुए भी विभिन्न क्षेत्रीय परिस्थितियों व परम्परागत मान्यताओं से आहार विचार और बसभूपा आदि में भेद उत्पन्न हो जात हैं । राजस्थान के अधिकांश भागों में

1 बहिन व घर विवाह में वस्त्राभूषण आदि लेकर भाई जाता है वह मायरा का भान कहलाता है ।

प्रकृति काय स हरी भरी साग-सञ्जिया का अभ्राव हान के बारण निराल ढग के भाय पनाथ बनत ह । मोठ बाजरी, भक्का आदि मुलभ अनाजा और गो रस क याग म पीष्टिक आर स्वादिष्ट पदाय तयार करके राजस्थानी गहिणी हर शाक, फल आदि क अभ्राव की पूनि बग्न म अपनी दग्ना का परिचय देती है ।

त्याहार क अय मागलिक अवमरा पर तापसी बना और अतिथि का शीरा, पूरी क घी शक्कर क साथ भात खिनाना यहाँ की सस्मृति का अंग बन गया है । अय त्रिगण व्यजन हैं— धूनी रावडी माठ बाजरीरो खीचडा और चूरमा । बार क र टेंटी, खाना पागलारा और सांगरिया आदि यहाँ क विशिष्ट साग हैं इनस मित्रकर पचमेला तयार किया जाता है । इसका एक लाक गीत म मुन्तर उल्लख हुआ है— गहिणी कहती है—

यो पचमेला रो साग देवतडो ने भो नाय मिलेगी राजी,
मोठा मोठा काचरा, गवारफली, कचनार
यही ननी मिरची पिसी, छियो राम रस डार,
माउफली मूंगफली मांय मसीरो मिलासे ।
तेला रा म्हे कूँकण दीनी, दीनी हाण्डो चढ़ाय ॥ यो पचा०

शुद्ध दूध, दही और घी की यहाँ प्रचुरता है । गा रस का घीणा मना स व्यक्त किया जाता ह । घर म घीणा का होना परिवार की सम्पन्नता का लक्षण समभा जाता है ।

म्हारे घर धीणो घणो कोई दूभण दोय दोय भोट,
म्हारे घर धीणो घणा ।

शिष्टतापूर्ण आधुनिक जीवन की खान-पान पद्धति म औपचारिकता मिलगी, आन्धर मिलेगा और उसम कलात्मकता के स्थान भी हागे परतु उम म लाक जीवन म व्याप्त हिनोर दृष्टव्य नहीं ।

राजस्थानी लाक गीता म व्यक्त खान-पान म वहाँ का सस्मृति का सरसता और सादगी क साथ लोक मानस का उछाह एक रगोलापन भन्नता है ।

लाक गीता म अभिव्यक्त राजस्थानी वशभूया स भी यहाँ की सस्मृति के सम्यग दशन हान है । राजस्थानी लोक गीता म वर्णित पाशाक का चटकीला भडकाला और रगोला छबीलापन व्यक्त हाना है । पुम्पा की पोशाक म मुगल राज्य का प्रभाव अब भी दृष्टि म आता ह—भद्र पुम्पा की दरवारी पाशाक अचकन चुरीणर पजामा और पगडी ह । पचरण पगनी दयान और सांसनी स्मान का उल्लख लाक गीता म मिनाता है ।

“परण्यो ने रगासूँ एक सोसनी हमाल’

राजस्थानी महिला की पोगाक में घूमदार घाघरा अन्ना कुर्ती काचनी के अनिरीक्त त्योहार विवाह पुत्र जन्म आदि विशेष अवसर पर पहन जान वाल लहरिया पोमचा चूनडी और चीण्टियो (पीलिया) आदि वस्त्र यहाँ की कलात्मक रचि एवं कायमयी प्रकृति व परिचायक है। तीज के त्योहार पर लहरिया ओढ़ना विवाहान्ति मार्गलिक अवसर पर चूनडी एवं पुत्रवती माता को चीण्टिया उगना साम्प्रतिक महत्व रखते हैं।

लोक गीता में इस प्रकार के अनेक प्रसंग आते हैं—

“माँ तीज नवेसी आयो ए कुण ओढ़ावे चूनडी
साये दो जी भेंबर म्हाने चीण्टियो।”

राजस्थानी नारी की वेशभूषा एवं शृंगार सम्बन्धी अनेक लोक गीता में स्त्रिया के आभूषणा का वर्णन है। सौभाग्यवती स्त्रिया मस्तक पर वारिया आर हाथा में हाथी दाँत का चूडला आदि पहनती हैं, जो यहाँ की सस्कृति की दानक है। तीमणिया टुम्मा कडना और टड्डा आदि भारी भारी सान व आभूषण लाभ जीवन की समृद्धि का गान गान के साथ राजस्थानी नारी की शृंगारमयी भावनाओं के परिचायक हैं।

त्योहार और मने—विभिन्न मेल और त्योहार पर गाय जाने वाले गीता स लोक सस्कृति का उज्ज्वल रूप परिलक्षित होता है। गीता में निहित लोक व आनन्द उल्लास और सामाजिक रीति रिवाज की छाया दमक व उम एश्वयपूण युग का स्मरण नितिती है जबकि लाग का राटी कपड व लिए यप्र नही हाना पडता था न ही भौतिकवादिता व प्रपच न उनक मानस का विचलित बनाया था। इन त्याहारा आर मना पर गाय गाने वाले गीता स राजस्थान की सस्कृति का रंगीलापन परिलक्षित हाना हूमा मानस का उच्चाटपूण आनन्द उर्ध्वलित होता है।

राजस्थान में त्याहारा व मना का विशेष बाहुल्य है। तीज और गनगौर व मना पर रग विरगी कमरिया व मुमल पाशाका में हन दन्कर गाने गाती हुई राजस्थानी स्त्रिया व मुण्ड व नुण्ड सडका घर गलिया में निकलन हुए धनुषम आनन्द की हिनारें प्रवाहित करत हैं। लाभ साहित्य में इन गीता व पाशाका का वर्णन लोक सस्कृति का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है। त्याहार मनान व उल्लाह आर गाय जाने वान गीता स जीवन व ह्योत्साह और आनन्द की अभिव्यक्ति हानती है। भाई-बहिन सम्बन्धी एवं सौभाग्य सम्बन्धी त्याहारा व गीता में लोक जीवन की आन्तरिक स्तर भावनाएँ उजनीय हैं।

गौरी पूजन भारतीय सस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है। उसी का एक रूप पनर का मना राजस्थान भर में एक विंगण अवसर है। यहाँ व बड़े बड़ नगरा में यह मना घूम घाम में लगता है। कमरिया व मुमल रग विरगा गाने वनार की पाशाक पहन आभूषणा स सुमनजित सौभाग्यवती राजस्थानी महिलाएँ तथा कुँवारी बचाए

हृत्ने देकर गवर के गीत गानी हुई जब मन म निवल्नी हैं तो एमा ममा बंधता है मानो राजस्थानी सस्कृति मुह बोले खडी हा। इन गीता म राजस्थानी नारी की मनो भावानभा की मनमाहक भनक मिलती है। राजस्थानी भाषा के परम विद्वान एव लोक साहित्य प्रमी श्री दीनदयाल श्रोभा ने अपनी पुस्तक राजस्थान का वास्तविक पब गणगौर म गणगौर का सुन्दर सास्कृतिक चित्रण किया है। गारी क प्रति गाय जान वाले विविध भावनापूर्ण गीता का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है जिमम राजस्थान की रगीनी सस्कृति भलवती है—

“गवर गढ़ा सूँ उतरो ए,

हो ए गवर रजा हाय केवल सिरफूल, बाग मे चाल ए।

बागा रो बाई देखवो ए गवरजा देला अलवर सहर

बाग मे चाल ए।”

एक गीत म गवर का नव्यशिल बरान है। इसके अतिरिक्त अनका गीत हैं। सिंहासन की मजावट गौरी पूजन के पुष्प चयन करने क पुष्प लेकर घर जान के महत्नी सीचने काटन के गीत हैं जिमम गवर क प्रति लोक जीवन की अटूट थढ़ा और भक्ति भावना की अभिव्यक्ति हानी है। इम मल के अवसर पर लोक जीवन की रग रेलियाँ तथा जीवन का रगीलापन पराकाष्ठा पर पहुँचा प्रतीत हाता है।

इसी प्रकार तीज और गुडल के गीत राजस्थानी सस्कृति की मनाहर छटा क प्रतीक है।



राजस्थानी लोक-गीतो मे कलात्मक सौंदर्य

प्रत्येक अभिव्यक्ति के दो पहलू हान हैं—एक वस्तु विषयगत दूसरा रूपगत । अभिव्यक्ति व इन दो पहलुओ म स कना ना सम्बन्ध रूप स है । रूप सौन्दर्य ही कला का प्रधान विषय है ।²

वास्तव म लोक साहित्य मानव क हृदय म स्तत उदभूत भावा का प्रकटीकरण है । न उसक लिय कोई शास्त्रीय नियम बन न उमके मूल्या न क गीते । जित प्रकार परिभाषा क कठ म राग स्वाभाविक रूप स निवृत्त कर गान का रूप धारण कर लते ह ओर मनुष्य का बहु कण प्रिय लगती है अंग ही वापल की सुरीली बूब ओर वपीठे की मधुर पी पी की भाँति मानव क कठ म भावा क प्रबल आवग म जो वाली या हूब निवृत्ती उन लोक गीत मचा दी गर्द—न ता लोक गीत म सौन्दर्य का ध्यान है न भाषा छ ओर अलंकार का । ओर न ही रस ध्वनि आदि का उसम महत्व है । परन्तु साहित्य के समीपक न कहा है कि स्वाभाविक रूप म निवृत्त हृदय क भावा म स्वत ही कविता उत्पन्न हा जाती है ।

यद्यपि लोक गायक का ध्यान गीत क कलात्मक पक्ष की ओर नहा हाता फिर भी कभी-कभी भाषा ओर छ ओर अलंकार आदि के प्रयोग बढ चमत्कारपूर्ण मिलते हैं ।

साज-साजा की साहित्यिक विनयता है रस म आन प्राप्त हाता । भावनाओ के आवग म आत्मा क रम विभार हाता पर ही लोक-गीता की मूष्टि हाती है ओर उमक रस की ही कर्पा हाती है ।

परिस्थिति क अनुकूल समुचित रम क भाग्यान्न करान की विविध शक्ति इन साज-साजा म पाई जाती है । रस की प्रतिष्ठा का स्थिति इनम मनोपी मान्यत्व स मित्र प्रकार को हाती है । यहाँ रम उतना वस्तु सामग्री म शास्त्रीय उपागना म परिपक्व नहा हाता जितना अभिप्रेत रटना ह ओर गीत-मूर्त्रिया की उद्गम गति म परिष्कृत रना है ।

1 जनताक साहित्य—डॉ० भास्कर पृ० 253

राजस्थाना लाक गाता म भी रस परिपाक की यहा स्थिति अपन स्पष्ट रूप म दर्शनीय ह । यहा के गीत भावा से लवानब भर हुए ह और उनम साहित्यिक अंश पयाप्त माना म ह । विनयकर शृंगार रस और करण रस क ता इन गीता मे माना खान उमरे पडते है । विवाह तथा मींदय क गाता म शृंगार रस का सुंदर नमूना और मंद हास का उज्ज्वल दृष्टान्त मिनता ह । दाम्पत्य प्रेम के गीत ता हे हा शृंगार रस के सयाग और वियाग पत्र के उदात्त भावा स पूरा रस क सागर ।

प० रामनरेश त्रिपाठा न लिखा है मारवाड जम सूखे प्रांत म भा मुँ प्रेम और करण रस क भरन प्रवाहित मिन । वहाँ भी ग्राम कविता का विकास इसी उमाँ के साथ हुआ है जमा भारत के अय प्राँता म । आगे आप लिखत है कि वीर रस की ता यहा कमा नही पर मयाग और वियाग शृंगार म भी यह प्रांत किसी म पिछता नही ह ।¹ वास्तव म राजस्थान के लाक गीता म शृंगार रस का परिपाक अत्यधिक हुआ । राजस्थान क प्रत्येक भाग म दाम्पत्य प्रेम के गीत गाव गाव म बिखर पड ह । उत्सव स्वाहार विनयकर तीज श्रादी श्राति तथा सम्कार, आमाल प्रमाँ श्राति क नत्य गीता म एव ग्राम्य जीवन के अय गीता म सबत्र शृंगार रस के खान प्रवाहित हुए दृष्टि म आन है । राजस्थाना नारी क एक एक गीत म दाम्पत्य प्रेम की पीर और तत्पूभूत शृंगार रस की निष्पत्ति छार् नई ह । काव्य ग्राम्य क नियमा स अनभिन्न नारी के हृदय म सीधे निकरे हुए य प्रकृत गान स्वत ही माना शास्त्रीय नियमा म बाजा मारन का तत्पर हा गय हा । राजस्थान क प्रचलित गाना म पपत्या नाम क गीत स यहा के गाना को रस मृष्टि ना अनुमान हा सकता ह ।

मा ए काली रे कलायण ऊमटी
मा ए गुडलसा बरसे मेह
पपइयो बोल्यो हरिये बाग मे ।

इम गीत की ध्रुव टक हृदय म रस खान उँ लता सा प्रानत हाता । इमा प्रकार राजस्थान के प्रसिद्ध गीत घूमर पणिलानी पीपनी और जवा श्राति गीता म रस का समुद्र उमटा खला आता ह ।

लाक गीता का मकान और अययन कभी भा काव्य मात्य का निखन और परखन क निय नहा किया गया । श्रातिम काल स अब तक सामाजिक श्राति और राननिक परिस्थितिया क बीच गुजरत हुए मानव की हृत्पगत भावनाओं का जाच करव उसम सामग्र्य स्थापित करन क निय नाक साहित्य का अययन किया जाता । यना आशय लाक-गीता का भी । अतः स्पष्ट ह कि कता का चमत्कार लाक गीता का उँष्य न्हा । नाक-गाना म कदा स्वत उदभूत हा जान क कारण गानु र स

1 मारवाड क मनाहर गाल ।

उसका पयवेक्षण कर लिया जाता है। उनका रस अलवार भाषा और छंद धाति बाह्य उपकरणों का वाच्य शास्त्र के नियमों पर नहीं बसा जा सकता है। वाच्य शास्त्र के नियम शिष्ट समाज और शिष्ट साहित्य के आधार पर बन हैं। पर लोक-गीतों का मानव का प्रकृतितम सीधा सम्बन्ध है। इनके वाच्य शास्त्र का आधार लोक जीवन और लोक-गीतों की भाषा में प्रयुक्त शब्दों में अपनी ही स्वाभाविकता टपकती है जो एक बार अंतरंग के भावों को भ्रमभोरे बिना नहीं रहती। यदि उनका शब्दों का हटा कर कोई पर्यायवाची शब्द रखे तो उसका सम्पूर्ण माधुमय सौन्दर्य और महज भाव नष्ट हो जायगा।

शास्त्रीय नियमों की दृष्टि में उद्दीपन अलवन विभाव और मंचारी भाव धाति रस निष्पत्ति के तत्त्वा का यदि लोक-गीतों में खोजा जाय तो उनमें रस के यत्न के बिना ही शली में निरान्त भिन्न है। साहित्यिक रचना का कवि किसी वस्तु, मानव या स्थिति के वर्णनकर्ता के रूप में तटस्थ भाव से चित्रण करता है इसलिए अलवन उद्दीपन धाति तत्त्वा के रूप में वर्णन सामग्री का प्राथम्य त्वर उपलब्धता का प्रयोग करना पड़ता है। तब ही उन उपलब्धता के महान् रस की भाव भूमि तयार होकर रस निष्पत्ति की स्थिति बनती है। परन्तु लोक गीतों में गायक के हृदय में पारिवारिक सम्बन्धों के कारण मनावज्ञानिक सांख्यिक मन की भाव भूमि में विषय प्रकाश के रस की स्थितियाँ स्वभावतः उत्पन्न हो जाती हैं जिनके फलस्वरूप ध्वनि और व्यञ्जना उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार लोक गीतों में नृत्या के हृदय में रस परिपक्वता का प्राप्ति होकर शब्द ध्वनि द्वारा व्यञ्जित होता है। यहाँ रस निष्पत्ति के नियम उपलब्धता के रूप में अलवन उद्दीपन विभाव और मंचारी के प्राथम्य की आवश्यकता ही नहीं। शब्दों का उपयोग करके मात्र भावों के प्रतीक रूप में किया जाता है। प्रतीकात्मकता परम्परा बनती हुई है वही गायक या धातक का रस की भाव भूमि प्रदीप्त रस परिष्कार की स्थिति तब पट्टी होती है। लोक कवि में मनीषी कवि की भाँति तटस्थता नहीं होती। वह वर्णनकर्ता मानव होकर स्वयं रस का अनुभव करने वाला होता है। उस रस का उपलब्धता के सट्टार तयार नष्ट करना पड़ता यदि उसमें निजी हृदय में रस का स्थान उभरता है। गीतों का सुनकर या पढ़कर हम स्वयं अनुमान हो जाता है कि इन शब्दों का वाच्य मध्य गायक की क्या मनाशा होगी—कामना कि स्वर में स्वयं ही उद्दीपन की शक्ति होती है जिनके वृष्ट ध्वनि में रस परिष्कार होकर स्वभावतः रस की अभिव्यक्ति हो जाती है।

विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टागोर ने कहा है— लोक-गीतों में जनता के अन्तर्गत मानव की सर्वाधिक स्वयंभूत धारणा निहित है। इस प्रकार लोक-गीतों में स्वयं प्रकृतितम मंत्रयान उत्पन्नित रस धारणी मनायी कविता के प्राथम्य निन्दना बाल उत्पन्न हो मिनत।

लाक साहित्य का कवि मन्त्र मृत्पा होता है। गान्ध की वह कभी छपना नहीं रखता। उसकी प्रेरणा का प्रत्यक्ष पत्र स्वात्भूत होता है। गान्ध जीवन की भाव भूमि तथा इन मन्त्रकी दीर्घ परम्परा अवश्य उसकी प्रेरणा के प्राण की भाँति व्यापक होती है। पत्रन गान्ध गीत की मर्यादाएँ ही इस लाक-कविता की मर्यादाएँ होती हैं। जन मानस अथ मर्यादाओं की क्विचित भी चिन्ता नहीं करता। जय मानस विवाम की आर बढन लगा और उमन निम्न पढन का पयाप्त तान प्राप्त कर लिया ता मवप्रथम उमन अपन लाक-साहित्य का हा निषिद्ध किया। पानान्तर म शास्त्रीय नियम छत्र आत्ति बन आर तन्तन्तर वह नियमा की परिधि म पनपने लगा। इस प्रकार लोक साहित्य स ही शास्त्रीय साहित्य की उत्पत्ति हुई। अब लोक साहित्य तथा शास्त्रीय साहित्य दाना साथ साथ पनपने लगे—एक स्वच्छन्दता क क्षुल मैदान म ता डूमरा कृत्रिमता की तग चहारनीवारी म। लाक गीता की रचना शनी और अभिव्यक्ति सभी बुद्ध सामूहिक चेतना और अनुभूति पर आधारित रहे हैं एमीलिय उसम एकरूपता अथवा शास्त्रीय पूरणा की रुतिवाणी परम्परा की टाया डूटना उचित नहीं। ममम्पर्शी भावना आलवन और अभिव्यक्ति की दृष्टि म लाक गीत सर्वोपरि हैं। अलकार और रस इनम साधन रूप म व्यस्त हात हैं साध्य रूप म नहीं।

लाक-गीता म अनुभूति और अभिव्यक्ति म इनकी एकरूपता है कि उनम मीधे चुभ जान की क्षमता है। व्यजना म इनकी मार्मिक मवेत्ता है कि उनक प्रभाव के लिये मानसिक तब वित्तव की आवश्यकता नहीं। वह सीधे हृदय म चुभ जान हैं और उस पर अपन अनुभूल रस का बाष्प सहज ही करा देत हैं।

अभिज्ञान कविताओं म रस छत्र अलकार आत्ति की मर्यादाएँ निश्चित हो चुकी हैं। किन्तु लाक कविता म इनका सरन सौम्य हात हुए भी कोई मर्यादा नहीं। लाक-जीवन ही उसकी मर्यादा है। जस बच्च की तोलनी वाली म रूप और शिष्टता नहीं हात पर भी उसम सरन हृदय का सरल आनन्द कम नहीं हाता वस ही लाक कविता अपन सहज उदगारा म रसमय और प्रभावपूर्ण हाती है।

भारतीय इतिहास के विद्वान सर यदुनाथ सरकार न लाक-गीत की व्याख्या करत हुए लिखा है प्रबन्ध का द्रुतगति शब्द विन्यास की सात्मी विश्व व्यापक ममम्पर्शी प्राकृतिक और आत्ति मनोरोग म म भाव विश्लेषण के बजाय व्यापार की प्रधानता स्थूल किन्तु प्रभावोत्पात्क चरित्र चित्रण श्रीडा स्थला अथवा देश काल का स्थूल अकन साहित्यिक कृत्रिमताओं का नूनानि-यून प्रयाग या सबधा बहिष्कार सच्च लाक-गीता की यह निरान्त आवश्यकताएँ हैं।¹

इम विवचन म प्रकट है कि लाक-काव्य म कला पक्ष का क्विचित भी महत्व प्राप्त नहीं हाता लाक-गीत कनात्मक साहित्य का अंग नहीं है। साहित्यिक कविता और लाक-गीत की प्राकृतिक कविता म राग निन का अन्तर है।²

1 तादा मारु की प्रस्तावना पृ० 42

2 वही पृ० 42

राजस्थानी लोक गीतों में कलात्मक सौंदर्य

अप्रेजी गीत काव्या व अनुसंधानकर्ता प्रा० किटरेज ने भी लिखा है 'जनता का काव्य, कलापूर्ण काव्य न भिन्न है।' 1 परन्तु फिर भी लोक-काव्य व स्वतः रचित भाव 'सा टेकिटी व फनस्वरूप बना स्वयं ही उत्पन्न हो जाती है। वर कला इनका मतान्तर है कि शास्त्रीय नियमों से बंध होकर कलात्मक सौंदर्य प्राप्त करने वाली मार्गस्थिक कविता का बना इसका समान प्रभावशाली हो ही नहीं सकती। प्रा० किटरेज लिखते हैं कि 'गन दो शताब्दियों में लोक गीतों में कलात्मक साहित्य को प्रभावित किया है, और सदक ही य साहित्यिक इतिहासकारों द्वारा कलात्मक साहित्य व समकालीन माना जायगा।' 2

डॉ० वामुन्वशरण अग्रवाल ने लोक गीतों व कलात्मक रूप का वर्णन करने हुए लिखा है 'लोक-गीतों में विभिन्न काव्य की सी आ सौंदर्य सौंदर्य विचारी पड़ी है उसमें हम बहुत कुछ हृदयगत कर सकते हैं और नूतन काव्य मृष्टि में उसमें बहुत सहायता भी मिल सकती है।' कलाकार जो अभिव्यक्तियाँ परिभाषाओं का आश्रय नहीं लेती। व स्वयं ही स्वाभाविक रूप में प्रकट होती है। अभिव्यक्तियों का कलात्मक होना किमा जाति व जीवन व कलात्मक हान पर निर्भर है। राजस्थान का लोक जीवन कलात्मक है। तीज त्योहार, विवाह-सम्कार और मन-पव आदि अवसरों पर हान वाला अभिव्यक्तियों के समान उनकी कला भी कलात्मक है। राजस्थान की सुकुमार अभिव्यक्तियाँ न लोक-काव्य के छन्द प्रकार रम ध्वनि आदि व ऐम अलिखित विधान लोक मानस में बिरा लिये हैं जिनकी सहायता से गीतकार रस की मृष्टि करता है तथा गायक और श्रोता रम का आम्बादन करते हैं।

राजस्थान व गाना की कलात्मक कला पर प० रामनरेश त्रिपाठी व निम्न कथन में सुन्दर प्रकाश पड़ता है 'यह तो मानी हुई बात है कि भारतीय गीतों व रचने का व कवि नहीं थे। पर उनकी रचना में कविता का मनाहूर विकास हुआ है यह गीत मुनन ही मान्य हान लगता है।' 3

लोक गानों की भाषा छन्द और अन्वय आदि व सम्बन्ध में अन्वय अन्वय विचार करने पर विचार होना है कि काव्य व कलात्मक गुणा की उत्पत्ति होना हुए भी उनमें भाषा सौष्ठव छन्द योजना और अन्वय विधान का सम्बन्ध अविच्छिन्न पाया जाता है।

- 1 दत्त एज लिफ्टनन्ट ब्रिगेडियर व फाक एण्ड व पायट्री आफ द आर्ट इन्स्ट्रुक्शन टू स्टाफिण एण्ड इयनिंग बनडम-किटरेज।
- 2 द बलड हैज इन न लास्ट टू स तुरीज एक्करसादरुट ए पावरफुल व फुल्लम ऑन आरगिस्टिक विटुचर, एण्ड द विल ऑल्वेज हैव द वी रकण्ड विटु वाई द लिट्टे गे हिस्टोरियस-वही।
- 3 कविता कीमुनी भाग-5 की भूमिका पृ० 4

—प्रा० किटरेज

प्रतीक और मुहावरे— लोक व्यवहार में बुद्धि वृत्त की प्रपञ्चा हृदय में स्पन्दन बहुत स्पष्ट होते हैं और वही में उनकी कला का रूप खड़ा होता है। किन्तु इस कला की अभिव्यक्ति भावात्मक शक्ति द्वारा नहीं होती इसमें मकर चित्रा की भाषा का उपयोग होता है।¹ यही सबेरे चित्र साहित्यिक भाषा में प्रतीक कहना है। प्रतीका के प्रयोग द्वारा भावा की व्यञ्जना में लोक गीत की कवित्व शक्ति सिद्धिगित ही गर्द है। जैसे यौवन का प्रभाव वर वृष प्रेम का प्रतीक निम्बुडा वनड का प्रभाव सूवटा कहकर विदा होता है वर वर विनाप करनी —

“है आधो परदेसी सूवटो, हे बागा माँपलो सूवटो,
रहे तो रमती सहेयाँ रे साथ, जोडी रो जालम ले चलयो।²

लोक-साहित्य में प्रतीक प्रयोग सामान्य अभिव्यक्ति में परिणत होता है साधारण अनन्तर की स्थिति तक पहुँच जाता है।³

राजस्थानी लोक गीतों में मूय का तज शीय शक्ति और प्रकाश का प्रतीक माना गया है और चन्द्रमा का मुकामलता और मौल्य का। एम हा तार किरल्यो और हिरण्या आदि का भा मुदरता का प्रतीक रूप में ग्रहण किया गया है —

“दल बादल बिच चमक जो तारा, साभ समै, पिय सागे जो प्यारा।

लोक साहित्य की प्रतीक याचना में यह विन्यास है कि शब्द एक वस्तु या भाव मात्र का प्रतीक न होकर शब्द प्रतीक अभिप्राय (मोटिफ) भाव और दृश्य का लोक मानस में अनुकूल एक संयोग विशेष उत्पन्न करके दृश्य विधान उपस्थित कर देता है। यही विन्यास राजस्थानी लोक-गीतों का प्रतीक में पूर्णरूपण पाई जाती है जिन प्रकार दाम्पत्य प्रेम का अभिव्यक्ति का एक गीत में पति का हवा करने के लिये पत्नी के साथ में फुनडा री पखी का प्रयोग पत्नी द्वारा पति के प्रति कामन भाव का व्यञ्जना करता हुआ यथाय रूप में कामल भाव का प्रतीक हुआ। इस गीत में प्रतीक द्वारा ही भाव विधान नष्ट होता। गीत में वरुणात्मकता है जिसमें वरुणात्मकता अभिप्राय का भी उपयोग हुआ है। चमक दिवला या चौमुख दिवला ऊँची मंडी रावनी य एम ही अभिप्राय है जिनमें हम प्रतीकात्मकता भी मिलती है। गायिका अथवा हम गीत की नायिका का साथवा के लिये हा सकता है क्या भी दीपक उपनयन न हो ऊँचा मंडी रावनी भले ही उसने स्वप्न में भी न देखी है पर फुनडा री पखी भ्रमण वाली के लिये उसने साथवा भाव विधान में वस्तुतः किन्हीं से कम नहीं। अतः वह इन अभिप्रायों का संयोजना से ही अपनी भाव की उस महत्ता को प्रकट कर सकती है। प्रच्छन्न रूप से एक लोक कल्पना में टान की भावना भी रहती है। इन दोनों

1 ब्रज लोक साहित्य पृ० 547

2 राजस्थान का लोक गान पूवाड पृ० 189

3 ब्रज लोक साहित्य, पृ० 256

स्थितियों में ही य शब्द 'अभिप्राय' के रूप में उपस्थित होकर प्रतीक' का भी काम करते हैं। इससे भाव विधान व साथ दृश्य-विधान का मेल हो जाता है।

इसी प्रकार की प्रतीक योजना राजस्थानी लोक-गीतों में प्रचुरता से हुई है—यही प्रतीक' रस की निष्पत्ति में बड़े सहायक सिद्ध होते हैं। क्योंकि ऐम प्रयोगों में भाव, दृश्य और प्रतीकात्मक भाव मिलकर एक हो जाते हैं।

मुहावरों का प्रयोग भी राजस्थानी लोक-गीतों में हुआ अवश्य है परन्तु साहित्यिक प्रयोगों से उनमें कुछ तात्विक भेद है। कवि भाषा सीप कर कविता रचना है और भाव सम्पत्ति को अजित कर एक विनोद बौद्धिक चतुरता से रचना करता है। अतः उसकी भाषा में प्रयुक्त मुहावरों में बोध तत्त्व अधिक होता है। वह इन मुहावरों को लोक-साहित्य के क्षेत्र से ही ग्रहण करता है, पर वह लोक-साहित्य का क्षेत्र भी गीतों का क्षेत्र नहीं होता व्यावहारिक क्षेत्र होता है। लोक-साहित्य में बोध तत्त्व प्रयुक्त मुहावरों में कम काम आते हैं। गीतों में जो मुहावरों का काम आता है वह अतः ही भाव सयोजन करते हैं। लोक गीतों में पुनर्वा रो पक्षा और गंगा जलमरी आदि जिनमें बोध तत्त्व कम भाव तत्त्व विद्यमान होते हैं। य मुहावरों किसी मूल आधार से आते हैं—मन की भावना से पक्ष में कामल भाव की स्थापना करने की क्षमता नहीं है। य मुहावरों के अन्तर्गत रखा जा सकता है। इनमें कोई बोधगम्य तत्त्व दृष्टि नहीं है। य मुहावरों का रूप दे दिया इन मुहावरों में शब्द प्रयोग में एक मात्र शक्ति विद्यमान रहती है।

लोक-गीतों में गान के लिए नहीं गाय जाते—उनके प्रत्येक अंग में जीवन तत्त्व रहता है। य ही राजस्थानी लोक-गीतों में प्रयुक्त मुहावरों के कुछ उदाहरण —

गोरा दे पाकी बड बोर जू, बोर बटाऊ लाम ।
ऊरा न भाव बाचली, गोरा न भाव गात ।'
'निरग बिना निरगी एकलड ।

'निरगो छोड गयो बन लड माँय ।'²

'स्याम बिना ब्रज ऐसो सुनो लाग ए,
डार सुनो ज्यों एक निरग बिना ।'²

'सूरज थाने पूजस्यो मर मोत्या रो बाल ।'
'कागण फोको ए सहेल्या, एक स्याम बिना,
'स्याम बिना कागण इसडो फोको लाग ए,
'साग फोको एक सूरण बिना ।

'स्याम बिना कागण इसडो फोको लाग ए,
'साग फोको एक सूरण बिना ।

1 राजस्थान के लोक गीत सं० 136
2 वही—गीत सं० 135

“भात फीकी जाए लोड बिना,
 नए फीका जाए काजल बिना,
 हाथ फीका जाए मेहदी बिना
 छुडलो फीको जाए बंगडी बिना
 सावण फीको ए जाए हरियाली बिना
 बन फीको ए मोर बिना ।

गुड बिना ए लुगाया किसडो चौध
 राई बिना ए किसडो रायतो ।
 लूण बिना ए लुगाया किसडो साग
 तेल बिना ए लुगाया किसडो खीचडो ।
 बूर बिना ए लुगाया किसडो भात
 दाल बिना ए किसडो चूरमों ।
 भाय बिना ए लुगाया किसडो पीर
 सामू बिना ए किसडो सासरो ।
 बिछडया बिछडया ए लुगाया ज्या रा स्याम
 वा रो घण रो ए किसडो जीवबो ।

(ख) राजस्थानी लोक-गीतो की छंद योजना

जिस प्रकार लोक-जीवन स स्वत उद्भूत अभिव्यक्ति स स्वभावत प्रलीकिकरम का परिपाक आर अलकारा का चमत्कार उत्पन्न हा जाता स उसी प्रकार छंद शास्त्र के तान स रहित लोक के स्वर स बंधे हुए गीता स काइ उभ भी हा ता आश्चय न हाना चाहिये । इसी दृष्टि स राजस्थानी लोक-गीता स छंटा की खाज करन का चष्टा की जा रही है । वस्तुत यह विषय तना महत्वपूर्ण है कि इस अनुसंधान का विषय बना कर लोक-गीता स नय छंटा का खाज कर उभ शास्त्र का सर्वाङ्कित किया जा सकता है ।

निश्चय हा लोक-गीता स लय और स्वर तान की प्रधानता हाना ह, पिगल मम्मन मात्रा लघु-गुरु यति विराम आदि का इनम काई महत्वपूर्ण स्थान नया । लोक गाना का जीवन स उद्भूत अपना निजी एक छंटा हाता स । महापति शत्रुत मातृव्यायन व शब्दा स लोक-गीत क इन छंटा न समय-समय पर सध्यान नागरिक साहित्य और मगीत का भी नया जीवन प्रदान किया है ।

राजस्थान क मभन्न लोक-गीता की धुन लगभग एक भाती पर ह पर चुकार आर ताल स भन्न है । इन भन्ना स मात्राघ्रा आर वर्णों की गणना करव यति विराम खाज कर भा यह निराय करना सम्भव नहीं कि इन गाता स निश्चय रूप स कम-कम छंटा प्रयुक्त हुए हैं क्याकि एक एक गीत की विभिन्न पक्तिया स भी राग रागिनिया की प्रधानता क कारण सुर और लय क अनुसार मात्राण घटती बन्ती रहती है ।

राजस्थानी लोक-गीतों में कलात्मक सौंदर्य

वही ए ए जी' रामा घानि स्वर-बधन शब्द लगा-लगा कर पद पूति करना अथवा पत्तिया के अशा का दाट्टा जोहरा कर राग बाधना लाव-गीता व साधारण लक्षण है। साधारण रूप से यह कहा जा सकता है कि राजस्थानी लाव गीता में मनाके और मत वागिया की भाँति सारठे और हूँ छ' व लक्षण प्रायः पाय जात है उनमें भा उपयुक्त कारणा में अनियमितताएँ बहुत मिलती हैं।

वास्तव में लाव मानस की इस स्वाभाविक अभिव्यक्ति में शास्त्र मम्मन छ' वू टना ही दुस्साहस है। यहाँ तो भावा को लय में बाँधने के लिय शब्द और भाषा का आश्रय लिया जाता है।

मनेप में हम कहेंगे कि लाव-गीत हैं इसलिये छ' की छ' में उट या ता ताना जा सकता है कि छ' की भाँति गीत का आश्रय भी मायाएँ हैं किन्तु गीत में अपनी निजी विनोयता है जो कि छ' के बधन से नहीं बधती। य विघापनाएँ हैं —

- (1) गीत में राग पूति के शब्द हाने हैं।
- (2) गीत में लय बधन के शब्द हाने हैं।
- (3) गीत में टप हानी है।
- (4) गीत में सहार के शब्द हाने हैं।
- (5) गीत के स्वर क्रम में यन्त्रम हाना है।
- (6) गीत भावाच्छात्रम व माय घटन बधन हैं।
- (7) गीत में बविव्य होता है।

अतः लाव-गीत वस्तुतः छ' की सीमा व अतगत नहीं आते। पिगत शास्त्र व लक्षण टूट कर इन गीता को रसपूरा तुक-रनी मानना थयम्कर हागा। इन तुक-रनी में से नवाने छ' की खाज करके लोक गीता की छ' योजना का निगम किया जा सकता है।

(ग) राजस्थानी लोक-गीतों में अलंकार

राजस्थानी लोक गीता में आनकायिक बमलवार की भी बमी नही परंतु उनके अलंकारों में विचित्र सांगी संगनना आर नवीनता है जो काव्य की वृथिम कविताओं में देवन को नहीं मिलती। काव्य में प्रायः परम्परागत उपमाओं का प्रयोग पाया जाता है। व उपमाएँ बारम्बार प्रयुक्त हान में फीवी भी प्रतीत हानी है परंतु लाव-काव्य में नित्य नई आर स्वाभाविक व उपमाएँ प्रयुक्त हानी है जिनका हमारा दैनिक जीवन से सम्बन्ध रहता है। लाव = ता ला की धार दात दारिम व बीज और बाह चम्प की डात वही चिर परिचित लाव जीवन व उपमान हैं उदाहरणार्थ —

लाव ला रो धार राय हा जी र आलीजा काई आँखना ता राम मन माहनी धारा नाडिया हा राज दाँन दाँम रा जा बीज राय हाओ र।
इसी प्रकार अनेक बाह चम्पों की जल बनाइ गई है।

सर्वोत्कृष्ट उपमाना का प्रयाग हुआ है 'मूमल क अग प्रत्यग रूप वरुण मे।'¹ इसी प्रकार एक और गीत में स्त्री सौन्दर्य वरुण में भाविकता से पूरा उपमान मिलते हैं।² इन उपमानों में कल्पना की ऊहात्मक उन्नति नहीं है बल्कि उनमें है आत्मा में रस धोलन वाली सुस्त्रि की पुष्ट व्यञ्जना ।

उक्ति वचित्र्य से सम्बन्धित तथा सादृश्य मूलक अलंकार लोक-गीता में विशेष पाये जाते हैं । समस्त अलंकारों में उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक ऐसे स्वाभाविक अलंकार हैं जो वस्तुओं के रूप आकार प्रकार, गति और स्थिति का पूरा चित्र प्रस्तुत करके भाव का समझने में सहायक सिद्ध होते हैं । अलंकारों में से इनका प्रयाग लोक-गीता में अधिक हुआ है ।

भोजपुरी लोक-गीता के लिये जैसे लिखा है कि इनकी उपमाएँ ऐसी ही स्वाभाविक हैं जसा जंगल का स्वयं खिलने वाला फूल।'³ उसी प्रकार राजस्थानी लोक-गीता के लिये कहा जा सकता है कि इनकी उपमाएँ ऐसी सरल और स्वाभाविक हैं जसा माता का प्यार या 'बालक का हृदय ।

सहल्या के बीच अपने सासरे की प्रशंसा में किशोरी बालिका अपनी सास, समुर और पति को तमश घरती अम्बर और मूरज जसा बताती है । तीनों ही उपमानों में सरल चित्र परिचित और भाव व्यञ्जक हैं । एक एक शब्द में सास समुर और पति के लिये बाधित गुणा की व्यञ्जना हुई है । यह है अपठ लोक जीवन की सूक्ष्म और बुद्धि की प्रखरता जो भावों की तल्लीनता के समन्वय में बिना प्रयास ही उनके गीतों में अलंकारों का समावेश कर देती है । राजस्थानी लोक-गीतों की उपमाओं की साधकता केवल साम्य या सादृश्य में नहीं है बल्कि उनमें सम्बन्धित धारणाओं में निहित है । कुछ गीतों में प्रयुक्त उपमाओं में परिवार के कामलतम सम्बन्धों का सूत्र मिलता है । एक गीत में पुत्र वधू में श्वसुर का अम्बर और सास को धरणी जसी कहा है तो दूसरे में श्वसुर का गड राजकी कह कर एक सुखी परिवार के स्वामी प्रदर्शित किया है । सास जी का रत्न का भण्डार कहकर परिवार के लिये आवश्यक सम्पन्नता पूरा हाना व्यक्त किया गया है ।

पुत्र कुल का प्रकाश और पुत्र-वधू दीपक की लौ है, जिससे फिर प्रकाश अर्थात् 'पुत्रोत्पत्ति' की कामना उत्पन्न होगी ।

रतन राखे गीत में पति के विभाग में विरहिणी नारी विरहावस्था में पीली पडी हुई अपनी तुलना पक वार से करती है । क्या ही विलक्षण उपमा है —

“गोरा दे पाकी बड बोर ज्यूँ,

1 देखिये मूमल गीत मध्या—117 (खण्ड 2) 'राजस्थानी लोक-गीत

2 राजस्थान के लोक-गीत संग्रह—117

3 भाजपुरा ग्राम गीत—पृ० 29

यौवन की तुलना की है तो दही स —
दई जइ कसमसी ।”

भालण गीत में काल नाग में वाला की उपमा दन से रूप वणुन में चार चौं
सग गय है —

‘सास सोने रो नारेल हाजो रे भालीजा,
कोई बेणईयो बासग बड भागण धारे नाग,
ज्यूं हो राज ॥ बाल काले नाग जसे ।”

बीदली के सौन्दर्य की सराहना करते समय राजस्थानी लोक-गीता के रचयिता ने उस ‘चंदा बदली घर नार’ और दूल्हे के पौरुष का तेज बखानने के लिये उस ‘सूरजमल कहकर सम्बोधित किया है—इसी प्रकार माता पिता में अपनी पुत्री के लिये सगा पूतन का चाँद जसा और ‘ऊगते सूरज के तेज’ जसा वर खोजन की कामना बनी रहती है ।

निम्नलिखित शृंगार रस के गीत में अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा रूपक उदाहरण और छटाट छान्दि कई अलंकारों का प्रयोग हुआ है —

बोली चाल्यो चाकरो धण चर्कोकर जो सी जो,
पाणी भायली भाइली बिन पाणी मर जाय
स्याम बिहूणो गोरडो अन पाणी नहीं छाय
प्यारी मुकलामोडो नार सायल बिन किरकासी जो,
बरसण कर भोजन कर बिन बरसण लग धार,
पिब बिछड़यो धण सू भूर ज्यो मिरगी बित डार,
पिया केरी प्यारी पलपल भुरसो जो
पाला बिन पलेरु तडफ मुत बिन तडफे बाभ,
पिब बिन तडफ गोरडो धण बिन तडफे स्याम,
धारो मिरगा नेणो धारे बिन कुरलासा जो ।

क्या की विना व गीत में सागोपाग रूपक स्वयं हृत्पयगत भावनाया की प्ररसा
स उत्पन्न हा गया है —

बन लड की ए कोयल
बन लड छोड कठ चली १

इसी प्रकार बिरहणी के गीत में कहा है —
मिरग बिना मिरगी एबलडो
मिरगो छोड गयो बन लड मांय १

- 1 दक्षिण राजस्थान के लोक-गीत सभ्या-91
2 दक्षिण राजस्थान के लोक-गीत सभ्या-136

जिस प्रकार मृग के कामल मृगिणी का छाड़कर चले जाने पर वह अक्ली बन लड म विनाप करती फिरती है उसी प्रकार पति रूप मृग के बिना वह बेचारी अकेली रह गई । कितनी स्वाभाविक और मूत कल्पना है ।

रूपक अलंकार का एक आर मुद्र भावपूर्ण उदाहरण है —

‘भे तो वारया जी सासू जी थारी फोख ने
थे तो जायो अरजूण-भीम
सहेल्या ए आंबो मोरियो ।¹

गट वधू सास स कहती ह ह मास । तुम्हारी काख को घय ह जो ‘अजु न
‘भीम रूप पुत्र का जन्म लिया ।

साहित्य की भाति विद्वत्तापूर्ण उपमान ढूँढकर कवि कौशन दशनि का लोक-गीता म प्रयास नहीं ह । बिना प्रयास हा सहृदयता और भावो की तल्लीनता स लोक कवि क गीता म अलंकारा का एसा चमत्कार उत्पन्न हा जाता ह जो बाव्य जगत के लिय निनात अनूठा और अप्रुव है । एसा भाव का डा० सत्येद्र १ इम प्रकार व्यक्त किया है —

अलंकार विधान निश्चय हा साक-साहित्यकार की चतन वृत्ति म उतना नहीं हुआ जितना जीवन प्रकृति, शब्द और अर्थ के यथाथ एकीकरण (अपाथका) के कारण सम्भव हुआ ह ।²

प० रामनरेश त्रिपाठी न एक गीत म निराली उपमा का उल्लेख किया है —

रेलिया सवति मोर पिया लडके भागी ³

रेल का तुलना सौत म करना एक विलक्षण कल्पना है । स्त्रिया क भावुक हृदय के लिय ही ऐस भम की बात सम्भव ह । ऐसी मार्मिक अभिव्यक्तिया म अपन प्रामाण स्त्रिया के कवितामय हृदय का प्रमाण मिलता है ।

राजस्थानी लोक गीता म शब्दानंकारा का भा सम्यक प्रयोग हुआ है ।

गोरबद गीत म अनुप्रास और यमक अलंकारा के योग म गोरबद के वरण की संगीतात्मक ध्वनि अत्यन्त मनाहारी हा गई है —

लड लूमालो लड भूमालो
म्हारो गोरबद लूमालो ।

इसी प्रकार एक ‘भान गीत की प्रथम पक्तिया म दक्षिण यमक और अनुप्रास का चमत्कार —

1 देखिय राजस्थान के लोक-गीत सख्या-50

—डा० रामनिह इत्यादि

2 भूमिका कीमुनी—पाचवाँ भाग-पृ० 22

3 ब्रजलोक साहित्य—पृ० 557

धीरा म्हारे माया ने मैमद लाज्यो,
म्हारी रलडी बढ घडाज्यो
म्हारे रिमक भिमक भाती घ्राज्यो ।”

रिमक भिमक शब्दा का प्रयोग कितना साधन और ध्वन्यात्मक प्रयोग चित्र शली जसा प्रभावशाली बन पडा है। “तिउला” गीत में घ और न की ध्रावृत्ति स मुन्द्र अनुप्रास का चमत्कार उत्पन्न हा गया है —

घडियो घडियो हौर भाजा दीवला
तन घडियो लाल लुहार ।

एक अन्य गमित गीत में मुठालकार की मुन्द्र वाजना दखिय —

‘ बाणिएबाणी रसी नह! रसी स धारो
सोना रो जासी नहों कह नामी कुमारो । ’

साक गीता क कवित्व पर प्रकाश डालते हुए डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी निम्नलिखित हैं कि लोक-गीता की एक एक बहू क चित्रण पर रीति-काल को मौ ली मुष्पाए खडिताए और धीराएँ निछावर की जा सकती है क्यकि य निरलकार तान पर भी प्राणमयी हैं और व भलकारो में लदी हान पर भी निष्प्राण हैं। य अपने जीवन के निय किमो शान्त्र विनाय की मुलापेलिया नही है य अपने आप में परिपूर्ण है ।

चारण न अपने गीता में अतिशयाक्ति पूण चाटूक्तिया स राजपूता का गुणगान भल ही किया हो अनुप्रासा क चक्कर में वायकाश न शिहित पाठना का चकित भल ही कर दिया हा पर हृदय का स्पश कर मानव नत्य करन वाली मुन्द्र साहित्य नहरियाँ जनसाधारण द्वारा रच हुए और जनसाधारण द्वारा गाय जान वाली है । नाक गाता में निरमी ।

राजस्थान के लोक वाद्य

लोक जीवन की दुनिया ही निरानी है— आधुनिकता के रग म रगे जन मानस में बुद्धि की प्रबलता से सभी कुछ कृत्रिम एवं उच्चमन्त्रीय बाना पहन कर प्रकट होता है—किंतु लोक मानस में स्वतः प्ररित भावनाओं के फलस्वरूप स्वाभाविक रूप से जीवन यापन की सीमित आवश्यकताएँ पूर्य जाने के साथ-साथ मनोरजन और कला का समावेश भी स्वतः होता रहता है— न शास्त्रीय विधान का आश्रय नना पड़ता है न किसी पाठशाला में जाकर मगीत कला अथवा मनोरजन हतु नाच्य आदि का अभ्यास करना पड़ता है— न ही ललित-कलाओं की सजना के लिये बारखाना में से साज सामग्री जुटानी होती है ।

विभिन्न अवसरों पर भावाभिभूत हाकर लोक मानस से जा स्वर लहरियाँ प्रस्फुटित होती हैं— उनके अन्तुरूप स्वरा के साथ ताल बाँधने के लिये जो भी साधन सरलता में उपलब्ध हो जाय उसी को वाद्य का रूप देकर गीता की ध्वनि को प्रति ध्वनित करने के लिये उपयोग कर लिया जाता है— इस प्रकार लोक गीता के गायकान अनेको लोक-वाद्यों का सजना कर ली ।

लोक मजीरे और ढप आदि तो अखिल भारत में प्रचलित लोक-वाद्य हैं जो अत्यंत प्राचीन काल से उपयोग में आने पाये जाते हैं— राजस्थान के लोक-वाद्यों में अनेको निराल रूप लोक-वाद्यों के मिलते हैं जो विविध क्षेत्रों में लोक गीता एवं नृत्य के साथ प्रयोग में आते हैं । यहाँ के प्रमुख लोक वाद्य निम्नलिखित हैं जिन में से कुछ का प्रयोग सामान्यतः सभी प्रकार के गायक करते हैं और कुछ विशेष अवसरों पर गाय जान वाले गीता अथवा नृत्या के साथ उपयोग में आते हैं— लाल मजीरे और ढप के अनिरिक्त ढप चंग नगाड़े तम्बूरा मृत्ग खजरी डमरू अरबी ताशा अलगोजा, बाँकशा अणग सारंगी बरनाय, तूरी पूगी मान्द रावण हत्था खजरी थाली भूगन शंख और माट ।

राजस्थान में तीज त्यौहार और गौरी पूजन आदि के गीता में वाद्यों की संगत नहीं होती— रंग बिरंगी पोशाकों व आभूषणों से सुसज्जित स्त्रियाँ मुँड के कुँट हिन मिल कर समूहों में गाना करती हैं तो बिना ढोल मजीरे अथवा वाद्य यंत्रों की सहायता के ही उनकी कठ ध्वनि गुजरिन हाकर सम्पूर्ण वातावरण को संगीतमय माधुर्य से आन-आन कर देती है ।

शिशु जन्मालय तथा विवाह आदि भागलिक अवसर पर मामा-यत स्त्रियों डोलक मञ्जीरा के साथ गीत गानी हैं—डोलक मञ्जीरा का प्रयोग धीरे मा धनव प्रवसरा पर गीत गान तथा नृत्य के साथ होता है। स्त्री-वनाभा व गान भजन हरजस आदि बहूषा बिना डोलक मञ्जीरा व भी गाय जात हैं परन्तु रानिजगा आदि विशिष्ट अनुष्ठाना म जब सगत जगना है ता डोलक, मञ्जीर, डमरू तम्बूरा मारगी धीरे मञ्जीरी आदि ध्वय वाद्य यत्र भी बजाय जात हैं जिम म गायका की मन्त्री धीरे इष्ट के प्रति भक्ति भाव का भली प्रकार आभास मिलता है।

शृंगार रस के बलासिक गीत धीरे ध्ववसाय सम्बन्धी श्रम परिहार व गाना म वाद्य यत्रा का प्रश्न ही नहीं उठता जा ब्यावसायिक काम व साथ हा मन बहनाव व लिय गाय जात हैं। पारिवारिक जीवन म चलते फिरत गाय जात गीत भी वाद्य हित भावाभिप्यक्ति मात्र होते हैं—वाद्य यत्रा का विाप उपवाग आयाजित मगना म नाट्य नृत्य मण्डनिया म धीरे हाती लीवाली स्त्रीद्वारा पर म मस्त हुई टोनिया द्वारा हाता है एव लाक देवनाभा के भापे जा स्थान-स्थान पर दव चरित गान व अभिनय करत हुए भ्रमण करत है व लाक वाद्य विाप स भजन गीता की संगत विद्यत हैं। टीकिय मामी सामी बजर डाम व धारी आदि ब्यावसायिक जन जो जीविवापानन करत हुए भ्रमण करत हैं, व भी मञ्जीरी मारग चग डाल घाली भूगल तूरी गव धववा बौबया आदि लाक बाटा का उपवाग करक अपन मनोरजन म जनता का प्रचुर धन व धन-वन्त्रादि नन व लिय प्राकपित करत हैं।

डफ चग धीरे डाल का सर्वाधिक उपवाग हाती व त्योगर पर घमाल गान म हाता है। हाती व कई दिन पहन स गाँवा धीरे नगरा म भो रमते निवत्तन लगती हैं चग धीरे डफ पर मद मस्त हाकर लोग घमाले गान हैं। होली व दूसर दिन मेर सलने निवत्तत हैं तव भी चग धीरे डफ पर गान नाचन शरीर की मुष-मुष भूत जात हैं। सता-सलिहाना नगरा धीरे गाँवा व बाहर चौराहा पर चग पर गाय जाने वान गाता स साग आरम विभार हा जात हैं। इन गाना म प्रात्मिक रग भी रहता है। समाज म कई विाप काम करन वाला व नाम पर घमाल जोड जात्र कर पाई जाती है—जस—

“धू सो बाज हो महाराजा गगा सिंह जी को,
बाल्हो साग हो राजा धारी सवारो,
मगरो छोड बाल्हरका मोरुया मारुधाजासो धो।”

इन गीता की तरग चग धीरे डफ के साथ ही प्रतिध्वनित हाकर लोक मानम पर होनी का रग लाती है। हाती व त्योहार पर वात्रिकाए भी चग व गीत गानी हुई हर्षोल्लास का परिचय देती हैं —

“चग बोकाल बाज, जोधाले बाज,
कोई बाज बाज चग भ्रजमेरा ए,
रगोलो चग बाजए।”

अधिकतर लोक वाद्य मृदंग, ढोल, अन्नगाजा, मान्दल, तुरी, धाली, बाँक्या, अथवा आदि लोक नृत्या में प्रयोग किये जाते हैं— इन में से कोई-काई गीत अथवा नृत्य विधि के साथ ही प्रयुक्त होता है जिनका सामान्य विवरण इस प्रकार है।

उदयपुर के उत्तरी भाग में श्रावण भाग्य महीना में भीला का गौरी नृत्य होता है जिसमें 15-20 नृत्यकार भाग लेते हैं—एक व्यक्ति भरव बन कर मूत्रधार की भाँति नृत्य संचालन करता है और एक शिव रूपधारी गान के बाहर खड़ा रह कर वाद्य से दायं घूमता है। इसमें मान्दल और धानी वाद्य का प्रयोग होता है। यह शुद्ध धार्मिक नृत्य है—इस नृत्य में गीत भी भरव और शिव भक्ति पर रचे होते हैं। गीत के पदा और नृत्य की ताल से देवता के प्रति अटूट भक्ति व्यक्त होती है।

इसी प्रकार भरव पूजा नृत्य में मान्दल और धानी का प्रयोग होता है। इस नृत्य में पुरुष व स्त्री अथवा गालावार रूप में खड़े होते हैं पुरुष गीत की लाइन को उठाना है स्त्रियाँ उसी को दोहराना हैं। नृत्य का एक एक हावभाव व ईं बार दाहराया जाता है— गीत हैं—

“भरव मादल नो धमको बाज धान पूजा,
भरव भालर नो भमको बाज धान पूजा,
भरव पर्गा ना रमजद बाज धान पूजा,
भरव धरतो धुजाओ मतो धान पूजा
भरव मगरा ना भायल भाय धान पूजा।

गीत के बाला के अनुसार ही नृत्य में भरव पूजा के भाव व्यक्त किये जाते हैं और श्रृंगार की ध्वनि नृत्यकारों की पगबनि के साथ गूँजती हुई सुन्दर भक्ति रस प्रवाहित करती है।

होली गणगाय और विवाह के अवसर पर किया जाने वाले भीला के गौर नृत्य में भी धाली और बड़ा ढोल प्रयुक्त होता है। इस नृत्य में भीला की उद्वत प्रकृति का आभास मिलता है।

राजस्थानी महिलाओं का जातीय नृत्य घूमर अत्यंत लोकप्रिय है—यह विभिन्न क्षेत्रों में अलग अलग रूपों में होता है। इस नृत्य का सामूहिक महत्त्व है—गणगाय का त्याग अथवा प्रमुख अवसर है पर विवाहान्ति अनुष्ठान। एक अथवा समारोह पर भी घूमर किया जाता है। घूमर नृत्य के गीत अत्यन्त मनाहारी कामल काँत पदावली के होते हैं। इसमें गगाढा ढोल या ढालकी से ताल दी जाती है। इन वाद्य यंत्रों का आदि नृत्य गीतों से सम्बन्ध है। गगाढा प्राचीन काल से धार्मिक अनुष्ठानों से सम्बन्धित नृत्य गीतों में प्रयुक्त होता रहा है।

मारवाड़ क्षेत्र में पुरपा का डाडिया नृत्य होता है। होली के बाद उगका प्रस्थान होने के कारण इसमें ऋतु के अनुरूप होता है और गीत ऐतिहासिक एवं पौराणिक

कथाओं पर आधारित शृंगार रस से परिपूर्ण होने हैं जिनमें राधा कृष्ण की लीलाओं और फाग के गीत मुख्य हैं। ढोल की चाट पर ही यह नृत्य चलता है। अथ वाद्य में डमरू, अलगाजा और मृदंग या अथवा कभी कभी प्रयोग कर लेते हैं। इसी प्रकार सामूहिक लोक नृत्य गीदड में ढोल छप और नगाड़े का प्रयोग होता है। डक की ताल नृत्य की गति और गीत के शब्द व धुन में पूर्ण समन्वय रहता है। गीत के भावा से जा डके की चोट पर तरंग उठती है वहीं के शब्द व धुन में पूर्ण समन्वय रहता है।

रावण हत्या राजस्थान का विशिष्ट लोक वाद्य है। यहाँ के लोक देवता पावूजी की प्रणसा में रच हुए वीर रस के दाहे विषय हाव भाव व साथ साथे नाग रावण हत्या वजा-वजा कर सामूहिक रूप में गाते हैं। पावूजी व जीवन सम्बन्धी घटनाएँ एक पंक्ति पर चित्रित य भावे लिये फिरते हैं जिस पावूजी की पड कहते हैं—उन घटनाओं व अनुसार अभिनय कर-कर के भी भोग बड़े मनोरंजक ढंग से पावूजी की विष्णवली रावण हत्या व साथ गाते हैं। डू गजी एक वीर रस का घांड़ी गीत गीत है जिसमें डानुआ व भीतर छिपी कर्णा दानशीलता और आश्रयिता प्रकट होती है—डानुआ व चरित्र सम्बन्धी उचार भावना की व्यञ्जना द्वारा इस में लोक कवि ने एक नवीन आश्रय उपस्थित किया है—यह भी रावण हत्ये पर गा गा कर लोक कलाकर अपनी गुप्त प्रतिभाओं की प्रभावशालीता अभिव्यक्त करत हैं।

घाट भी दशभक्ति युक्त वीर रस व गीता में विषय कर रावण हत्या का प्रयोग होता है। माटा का प्रयोग भी पावूजी की पड व साथ अभिनय करने समय होता है—गीत की लय के अनुकूल दाना हाया से या कभी-कभी नगाड़े की भाँति लकड़ी व दो डुबडा में माटा से ध्वनि निवाली जाती है—य माट पावूजी व माट कहलात है—राजस्थान व अजायबघरा में य माट तथा पावूजी की पड दशनीय है।

तम्बूरा (इकतारा) वाद्य विशेषकर डीडवाना पोकरन कुचामन और नागार मेवा व तरह्तानी नृत्य में प्रयुक्त होता है। यह नृत्य हाती के पश्चात् जागरण आदि में भागिया जानि व लोग द्वारा अपने छप्प देवता रामदेवजी का प्रसन्न करन व नित्य निया जाता है। य लाग कामड भी कहलात हैं जा कभी कभी अपने यजमाना से भ्र प्राप्त कर व घन भी कमात हैं। पुरप च्चनारा वजात हैं स्त्रियाँ अपने शरीर पर मजीर बाँध कर नृत्य की अनेक मुद्राओं का प्रदर्शन करता हैं।

घानी का प्रयोग बल्लारारा नृत्य में घार भाँगिया व नृत्य में भी ढालक व साथ होता है। पूगी मूख तूख अथवा लीकी की बना ली जाती है—यह बालवनिया 1 का माट वद्य है। माँप का माहित करन वाली धुनें हैं दण्डारी और पगिहारी इनके आधार पर बालवनिया व नृत्या व भी यही नाम पड गय।

1 बालवलिया सपरा का कहते हैं जा अपने मंगल नृत्य व भाव में साँप पकड़न में बुशान हान हैं।

सारंगी नवकार और नगाडे आदि विनोदकर राजस्थान के सीमाई क्षेत्रों के भवाई¹ लोग के भवाई नृत्य में भी प्रयोग हात था परंतु अब ये ढोल, मजीरा से काम चला लते हैं। इनकी नृत्य की मुद्राएं बड़ी मनोहर हाती हैं। 'ढोना मारू' काय भवाई का प्रमुख तेल है जिस इन्होंने अपनी उबर कल्पना में अति सुन्दर ढंग से नाच में बाधा है।

अरबी ताशा राजस्थान का एक निराला लोक वाद्य है जो 'खावाटा' चूल्ह रामगट मवाड और भारवाड आदि क्षेत्रों के बछ घोड़ी नृत्य के साथ बजाया जाता है। इस नृत्य के साथ गात गही गाय जाता ढोल की आवाज से ही भाव व्यक्त होते हैं साथ में अरबी ताशा वाद्य बजाते हैं।²

राजस्थान के लोक नाट्य जिह रम्याल कहते हैं उनमें भी लोक मानस की मस्ती का घातक नाचना कूदना आदि मादकता रहती है—अतः नाटका के अभिनय के साथ भी सारंगी नगारा और ढोलक आदि लोक वाद्य का प्रयोग होता है। वस्तुतः लोक मानस की मस्ती उत्साह और तरंग को लोक गीता और लोक नृत्य द्वारा अभिव्यक्त करने में विभिन्न लोक वाद्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

1 जाटा की एक खास नाचन गान में रवि व कारण भवाई नाम की जाति बन गई जो वर्ष भर विविध अवसरों पर अथ जाट वर्गीय लोग का नृत्य आदि से मना रंजन करते हैं।

2 नृत्य का विवरण दक्षिण-राजस्थानी लोक-गीत पृष्ठ 196

जीविकोपार्जन सम्बन्धी राजस्थानी लोक-गीत एव नृत्य

भारत के लगभग सभी प्रान्ता में जन-जीवन में व्याप्त लोक गीतों के व्यावसायिक गायक पाये जाते हैं जो विभिन्न अवसरों पर अनुसूचित गीत गा-गाकर अपनी जीविका अर्जन करते हैं। कई वग इस प्रकार के होते हैं जिनका व्यवसाय गीत नृत्य और नाच्य द्वारा जीविकोपार्जन करना होता है। राजस्थान में इस प्रकार के गायकों की अनेक जातियाँ एवं वर्ग हैं जिनमें मुख्य हैं—टीकिय-सामी जागी भोपे कुम्हार जांगलिये डानी, ढाणो मीरामो, डाम सरगढे हिजडे, सुयरा कामडिय जागरी पातुर भगतन बालावन रावल साँसो सेपेर गीतरनियो दोगरे भगरो और ढालणे। इन के गीतों का विषय कोई अलग नहीं होते। विभिन्न अवसरों पर साधारण जनता द्वारा गाय जात भूम्य हैं—नृत्य गीत नाच्य गीत कथा गीत, रातजगे के गीत पवाडे पौराणिक गीत, भजन और हरजस भान्ति, एवं विविध हाली की धमाल राम कृष्ण आदि की लीलाका का वएन और पुत्र जन्म व विवाहान्ति उत्सवों पर गान के सम्कार सम्बन्धी गीत।

टीकिये सामियों के गीत—सामी लोग लाल टीका लंगोटे हुए पगडो बांधे फिरते हैं कोई-कहाँ सम्ब बाल भी रखते हैं। ये टीकिये अथ नौकरी व अन्य व्यवसाय जीविका निमित्त करन गेते हैं वर्ना ये लोग अपना व्यवसाय ही गीत गा-गाकर भाव भागना बनाते हैं। इनकी स्त्रियाँ एवं छोटे छोट लंडक लंडकी भी हास्य मन्हालत ही गीत गाकर भीस भागन का व्यवसाय करन लगत हैं। यदि इनस कहा जाय कि तुम काम करो, बिना महनत के वैसा नहो मिनगा, ता उत्तर मिनगा— ए मारिऐ म्हार ता बाप दाणे न ई कना काम ननि कर्या म्हे काकर करी। यह कहकर तरह-तरह म माच कृष्णकर व शासन करन एक मुठ्ठी आता या पमा टका स ही मत है। आजकल ये साग प्राधुनिक ढंग म हास्यमनियम भान्ति गन म ढालकर भी अजाकर गान लगे हैं। इनक गान प्राय भरावा, रामदवजी व कृष्ण साता और राम साता म सम्बन्धित हान हैं।

1. विविध राजस्थानी सात गान पृष्ठ 2 ग गीत सं० 29, 22 25, 83 85 तथा 93

भोपों के गीत—राजस्थान में लोक श्रवताप्रायः पुजारी भाषा कहते हैं। भोपे अर्थात् देवी देवताप्रायः का पूजने हैं तथा देवता के सामने बड़ी मन्त्री में नाच-नाच कर गीत गाते हैं। इनके इष्ट देव रामदेवजी पावूजी भरोजी गोगाजी मानाजी तथा अथ लोक देवता हैं उन्हीं की यथा पूजा करते हैं तथा उनमें सम्बन्धित गीत गाते और साथ ही गाने-संगीत गूजरों मीरा राजा भरथरी और अथ पौराणिक गीतों का भी प्रयोग करते हैं।

रामदेवजी और भरोजी के भाषा की सार प्रदश में प्रतिष्ठा है पावूजी के गीत भी यही भरोजी के भाषा गाने हैं।

जाधपुर बीकानेर उदयपुर झूलवर और जसलमेर विभाग में रामदेवजी की बहुत मा प्रता है। या ता लगभग सभी जाति के लोग स्वास्थ्य धन सन्तान प्राप्ति के लिये उनके गीत गाने हैं पूजा करण और रातिजगा करते हैं पर डडिया चमार लोग का पक्षा ही यही है। इन्हें मधवान भी कहते हैं कपडा बुनना इनका व्यवसाय है इसलिये बुनकर कहलाते हैं आठ दम योग मिन्दर तम्बूर और मजीरे लकर बजाने हुए रामदेवजी के गीत गाने हैं रातभर जागकर जा रातिजगा करते हैं उस रामदेवजी का जमा देना कहते हैं। विवाह और पुन जन्म आदि विषय अवसरों पर गहन्ये लोग रामदेवजी का जमा दिखवाते हैं।

भरोजी के भोपे—भरोजी के भाषा लाल जामा और कभी-कभी लाल ही पगड़ी पहने घु घट बाँध हाथ में थाली लकर ऊपर उछालते हुए और डमरू बजाते हुए गाने फिरा करते हैं। इनके गीत प्रायः भरो बाबा के ही होते हैं।¹

पावूजी और डूंगरी जवारजी² आदि जा राजस्थान में बीर कृत्या के कारण प्रसिद्ध हैं उनके गीत भी यथा भाषा बड़े प्रेम और उत्साह में गाने हैं। विवाहादि अवसरों पर इनकी विष्णु भाषणा होती है। पावूजी में घाघल नामक राजपूत के घर के घर का बयारो में अवतार लिया एसी भाषणा है। ये राजपूत यानी नामक गाँव में मारवाड़ में रहते थे, जहाँ रवाडी तथा भोपा नामक जाति अधिक रहती थी इसलिये भाषा पावूजी की बहुत भाषणा करते हैं। पावूजी के पवानी का प्रचलित करण का श्रेय ही इन भाषा का है।

गोगाजी के भोपे—गोगाजी के भाषे उनकी बीरता के गीत गाने हैं यथा डमरू बजाते हैं और यानी का जार में घुमाकर ऊपर उछालते हैं फिर ऊगली पर रोकते हैं—उमत्तावस्था में यथा लग्न भी करते हैं। भादा में गोगा नवमा पर लगन बान मले पर सक्का की मग्या में भाषे अपनी श्रद्धा भक्ति प्रकट करण गोगामेडी में इकट्ठे हाते हैं। इनके गाना में भक्ति भक्तकी है और यथा बड़ी रुचि एवं गाम्भीर्य में गाय जाते

1 भाषा के गीत श्रवण—नखिका का शोध अथ राजस्थानी लोक गीत खण्ड 2—ग म

2 गीत देखिये—मह भारत, अगस्त 54

जीविकोपार्जन सम्बन्धी राजस्थानी लोक गीत एवं नृत्य

हैं।¹ गंगा नवमी के दिन कुछ भोपे ढाल पीटते हैं और कुछ अपन शरीर पर लाले की बज्जिरा से पिगई करत है।

माताजी के भोपे—य माताजी दुर्गाजी के पुजारी है और उसकी शक्ति म बडा विश्वास रखते हैं। भाप करणीमाता की विरुदावली गाते हैं। करणीमाता क भेन क भ्रवसर पर सैकडा भोपे इक्ठे होते हैं।²

जोगी गायक—मारवाड शेखावाटी और तारावाटी के जोगी गायक जोम्पुर शेखावाटी और नारनौली विभागा म गीत गाते हुए मागते फिरत हैं। इन बचारा का प्रनिष्ठा प्राप्त नही हुई है। राजस्थान क अत्यंत लोकप्रिय गीत निहालणे मुनतान और जोगीमाता इही लागे के गीत हैं।

कुम्हारों के गीत—राजस्थान म दो प्रकार क कुम्हार पाये जाने हैं—मार और दूमर बांडा। इनम स बांग कुम्हार प्राय पश्चिमी राजस्थान म होते है। य होली पर साग बनाने क लिय प्रसिद्ध हैं। साग की राग के होली गीत बांडा कुम्हारो द्वारा ही प्रारम्भ होने है। कुम्हार, घोसिया और घोविया की स्त्रियाँ बसन्त म लूमर गाने हैं। जायपुर, नागौर और पाली जिल म विनापकर इनके गीता का प्रचार ह। होली क दिन म या सावन की तीज पर दो पार्टी बनाए हुए ग्रामन-सामन खडी हाकर स्त्रियाँ नृत्य क साथ गीत गाने हैं। एक धार एक बतार गाने हुई सामने बन्ती है फिर दूमरों। हालो पर विशारी बालिकाया द्वारा गाय जान वाला लूमर गीत इही स्त्रिया का है —

लूमर रमवाँ म्हेँ जास्यां³ अथवा

“होली घाई रे कुलाँ रो भोली

भिरमटियो के से।

ओ कुरण सेते रे केसरियाँ बागाँ भिरमटियो के से।”

पुण्या गरा गाय जान वान इन जातिया क गीत हैं —

“घग घाज बाग्यो, बाल बाग्यो, होली रे परमात बाग्यो,

घालोडी राती बायो,

बाजत-बाजत थो गयो,

घग घांगलियाँ बजाव, मू वडियाँ बजावै,

घग चिमटी र भएकार।”⁴ बाजत०

- 1 राजस्थान क सावानुपजन (श्री त्रवीलाल सामर), पृ० 27
- 2 दलिय—गाना क मनुन ललिका का साथ अथ, राजस्थानी साव-गीत पृ० 2-य
- 3 पूरा गान दलिय पृ० 2-य गान संख्या 12।
- 4 एगाही एक अथ गीत संख्या 43 राजस्थान क साव गीत पूराड।

जोगनियों के गीत—स्त्री गायन। म जोगनिया व गीत उल्लसनीय है। य याचक जाति की स्त्रियाँ बाजार म गा-गाकर नाचती फिरती हैं और इसी म पम इच्छा करके अपना पट धावती हैं। इनके अनिश्चित भगनिय सांगनिय और नट-नटगिया व गान हात हैं। भगनिया ता सब जगत् गा-गाकर नाचती फिरती हैं—यू० पी० भ्रात्रि म इह वजरिय कहत हैं। नट-नटी सार राजस्थान म है पर छाबू की तराई म जाधपुर व मध्य बंदिता हैं। सामनिया भी सार राजस्थान पजाब और यू० पी० म गा-गाकर मांगती फिरती हैं।

ढोली, डाढी मिरासी, डोम, सरगडों और हिजडों के गीत—दानी हिन्दू और मुसलमान दाना जाति व हात हैं। मिरासी मुसलमान और डोम व सरगडे हरिजन जानि व है। य नाग दान बजाकर गान है। इनके गान का प्रवमर होनी है और पुत्र जन्म व विवाहादि प्रवमरा पर घर घर जाकर गाने हैं। इनकी स्त्रियाँ भी गानी नाचती हैं। नाग बजान म तालिया का कोई मुरात्रता नही कर सकना। दानी लोग चिकारा बजात हैं।

बुद्ध पुष्प लाग स्त्रिया व थप बनाकर और भी कई ळग स बहुनिय बनकर उपयुक्त प्रवमरा पर गान फिरते हैं व त्रिजड कहलात हैं।

सुघरों के गीत—सुघरा लाग नायक पथी भ्रात्रि किसी सन्न परम्परा विगप व हैं और य गधवों की एक जाति के गायक है जा मुसलमान और हिन्दू दाना धर्मों के हात ह। इनका व्यवसाय भी गीत बनाना और गाना है। मगीत स ही य नाग जीवन निर्वाह करत हैं। य लाग डड बजात हुग डूंगजी जवारजी एव राजस्थान के भ्रम्य और पुरथा व गीत गाते हैं। जन समाज म उनके सध स पम बंधे हुए हाते हैं। उनके अनिश्चित इधर उधर भी गाते हैं। य जाकिवा निमित्त कलकत्ता बम्बई और इलाहाबाद भ्रात्रि भ्रम्य नगरा म भी जाकर गान है।

कामडिये—यह मघवाला की एक खाप ह। तरह ताली नृत्य की तरह इनकी औरत अपना बदन स 13 जगह मजीरे बजाता है—य कामिधा के मगत हैं। मत् तम्बूरे पर गाते हैं। इनकी औरतें पाँच म चाँगी का ताडा कडियाँ बाना म चाँगी व भूटन दाना म सोन की रूप पहिन सकती हैं—इन लाग का पशा गाना बजाना है। अधिकतर भजन महादेवजी मालीदेवमी पवार भ्रात्रि व बजात हुग तम्बूर और मजीरा पर गाते हैं।

रावल और सासियों के गीत—रावल नाग चारण जाति व भिक्षु व हात हैं जा चारण का ही तमाशा दिवात गीत गाते फिरा करते है। इनकी सामाजिक स्थिति बहुत निम्न काटि की है। सामा एक प्रकार स भगिया व चारण हैं—इनकी स्त्रियाँ गानी नाचती हैं और भगिना का बडा सम्मान करती है। य भी गीत गा गाकर मांगने वाली जानिया म स है। इनके गीत अधिन्तर पौराणिक गाथाया पर आधारित होत हैं।

दुनका अग्नि नृत्य एक प्रदम्भुत चमत्कार है।¹ गान की तरंग म बुँड का बुँड बीच म जनती हुई अग्नि म शून्य वग नाचना है। नृत्य के साथ डान वजा-वजा कर एक विशेष प्रकार की धुन और राग म गीत गाते हैं। यह एक जानाय नृत्य है जो सामान्यत माच-अप्रन व महीना म मठा व अवनर पर किया जाता है परन्तु कभी-कभी विशिष्ट जन उत्सव व ममारहा पर भी यह नृत्य करवान पर लोक कला कारा का पुरस्कृत करत है। बीकानर के यशस्वी भूतपूव महाराजा गगामिह अग्नि नृत्य क मुख्य सरदाक थ। अग्नि नृत्य व साथ व लाग अपन आराध्य देव गारखनाथ व गीत गाते है।

2 भवाई नृत्य—जाटा की एक खाप जा नाचने गान के व्यवसाय म लग गई भवाई कहलाने लगी। इनम चमार दुका भील नायक तनी बलाई गूजर मानी और लाग आदि जातिया भी सम्मिलित हा गई है। मध्य भारत और राजस्थान की सीमा क समीपवर्ती स्थाना तथा चित्तौड निम्बाहेडा चौसला विनाथ और भित्तिया आदि गावा म भवाईया व अहु है।² भवाई नृत्य का ढग शास्त्रीय जसा हाता है नृत्य गीता के विषय दैनिक जावन स सम्बन्धित हात है जिनम हास्य रस का अच्छा पु रहता है। गीता की धुना को य अपन ढग से लाल कर गात है। य लाग अपनी उवरा कल्पना शक्ति क बल से जीवन के दैनिक पक्ष का बडे प्रभावशाली ढग मे अभिनय करत है। भवाद्या के 12 नृत्या म स मुख्य चार है—बीकाजी, बाघाजी ढाला मार और मूरनास व जावन वृत्त स सम्बन्धित। बाघाजी और बीकाजी खेन के गीत यही लिय जान है जिह गा-गाकर भवाई लाग नृत्य करते है।

काटला निवामी बाघाजी क दीघकाल तक पावर सीथ स न लौटन पर उनकी पत्नी भारमली का व्यथा की मार्मिक अभिव्यक्ति है —

“बाघा—आव घर कोटड चले पू धरणी,
जासी फूल भड, थारो बास न जावे बाघजी।
जब जागू जब सुणू, तांत तणी तणकार,
बाघा थारे बारण, नटे नहीं मागराहार।
नणा रा सरवर कह, प्रीत रो बांधू पाल,
भारमली जल को मछलिया, बाघो नाल जाल।”

‘बीकाजी खेल का गीत—

‘बाजण लाग बायरा, ऊडण लागी खेह,
छालण लागो सायबो म्हारो टूटण लागो नेह।
जाजे सजना साठ कोस, फर न जाज कोस असी,
चित फाटे मन उचटया, थांमू प्रीत कसी।

1 नृत्य का विवरण देविसे राजस्थानी लोक-गात पृष्ठ-192

2 वही पृष्ठ 194

सोपाले सी पडसा, जदी ठरेला पाँच,
सेजाँ मे मुल सूँ पोडजो, कामए कठ लगाय ।”

उपयुक्त गीत में बीकानेर की बसान बाजे महाराजा बीकानजी का जीवन चित्र है। बीकानजी तथा उनकी रानी का सवाण द्वारा उनका प्राण प्रम चित्रित किया गया है। इस प्रकार का सवाण-त्मक गीतों का साथ नृत्यात्मक अभिनय से लाव-कला की श्रष्टता का परिचय मिलता है। य अभिनय बड़े रामाचकारी और प्रभावशाली हात हैं। ढाला मारु जो राजस्थान का अत्यन्त लावप्रिय शृंगार रस का वाय है और अय लाग इस कबल गा गाकर जनता का मनोरजन करत हैं उन भी भवाइया न अपनी कल्पना शक्ति से बड़े सुन्दर ढंग से नृत्य में वाप किया है। नृत्य की मुहारों भी प्रति मनोहर हैं। इस नृत्य के साथ ढाल मजोरे वाद्य यंत्रा का प्रयोग हाना है। इनकी वेशभूषा बड़ा कलात्मक हाती है और आभूषणा से सुसज्जित हाते हैं।

वर्षा श्रुतु के अनिर्दिष्ट रूप के 8 महीना भर भवाई लाग अपनी नृत्य मण्डली नित्य घूम घूम कर जीविका कमाते हैं। कभी-कभी य लाग राजस्थान का बाहर गुजरात व सौराष्ट्र तक घनाजन के लिये जान रहते हैं।

3 जालौर का ढोल नृत्य—देगिस्तानी भागा में सरगरा, टाली घानी आर भील जातिया द्वारा मिलकर यह नृत्य किया जाता है। यह पुरखा द्वारा किया जान वाला नृत्य कई प्रकार के नृत्या का समन्वय है—दसम एक का बाद एक 4-5 ढाल बजाए जाते हैं। य लोग पिछनी जातिया का हैं पर अपनी कला में प्रवीण हान क कारण लोक-कला की परम्परा को जीवित रखन में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह अपनी कला के द्वारा ही जीविका कमाते हैं। जालौर और समीपवर्ती गाँवाँ सुराना बागेण और एनी गाँवाँ में ये नृत्य प्रचलित है।

4 बणजारा नृत्य—भारी दोभा लाट एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमन वान खानावाण जाति के लोग बणजार कहाने हैं। य लोग रूप में मठा महीना तक घूम घूम कर व्यापार के अतिरिक्त नृत्य कला का प्रशान द्वारा भी जीविका कमाते हैं। य प्राय जोरा में नृत्य करते हैं नृत्य की मन्ती में अपने को भूव जाने है—बणजारा की स्त्रिया की वेशभूषा बड़ी आकर्षक हानी है—बणजारा नृत्य का साथ प्रयोग में घान वाला मुख्य वाद्य ढोल है परतु कभी कभी थाल कटारी भी प्रयोग करत हैं। इनक नृत्य के कई गीत नहीं हाते—या ही नाचने समय कुछ शत्र करत जाते हैं माना अपने साधिया का पुकार रहे हैं कालिया रे 'घोनिया रे आदि आदि।

बणजारा का मुख्य व्यवसाय व्यापार है अत अपने नृत्या में दोभा लाटना उत्तारना और चिलम पीना आदि अपने नित्य प्रति का काम के भाव प्रशिक्षित करते हैं। पहाड़ी प्रन्ना में बाभा ढोल का काम मिल जाता है इसलिय बणजारे लाग प्राय फनहसागर का पाग बड़ा का छडा बलदेव का खेडा तरीवा गाँवाँ और भूपाल सागर के पास काला खेडा गाँवाँ में बस हैं।

5 मारवाड का कदघोड़ी नृत्य—बुचामन परवतमर और निम्बाद आदि मरु क्षेत्रों में व्यवसायिक नृत्य कदघोड़ी प्रचलित है जो बावरिया द्वारा नाचा जाता है। कदघ की घोड़ी प्रसिद्ध है। दा टाकिया जो बाँम के दा सिरा पर बाँध कर एक के ऊपर बनावटी घोड़ी का सिर और दूसरी पर पूछ ब लिये गोएँगर गुच्छा लगा दत्त हैं उसे कढ़ाई से सजा वत है और उस के भीतर बुम कर हाथ में तनवार लिय पुरुष नाचता है। चार पाँच जाड़े मिल कर नाचते हैं। यह नृत्य जाति विंगेय का नहा है। कोई भी निम्न वर्गीय नाम इस अपनी जीविका अन्न का साधन बना सकते हैं परन्तु इस कला में दक्ष प्रायः य लोग पाये जाते हैं— गेन्वावाणी के मरगरा बुम्हार और दर्जी चून् और रामगन् के मिरासी और मुसतमान तथा भवाड और मारवाड के चमार व महतर। लोक की आवाज के साथ इस नृत्य में भाव व्यक्त किय जान है गात नहीं गाया जाता—साथ में भरवी ताशा लोक वाद्य भी बजाया जाता है। ढाल की उत्तेजक और कण कट्टु ध्वनि युद्ध जमा वातावरण उपस्थित कर देती है। ढाल का ठेका ताजिय जसा हाता है। इस नृत्य का आयाजन कठिन हात व कारण इस कला के प्रवीण लोग ही इस कर सकते हैं अतः उन्होंने इस नृत्य का अपना व्यवसाय बना लिया। विवाहाहानि अवसरों पर नृत्य करने के लिये भी मनारजन के लिये उन्हीं कला प्रवीण व्यवसायियों का बुलाया जाता है जिसमें इन्हें प्रचुर भाग्य हाता है।

इस प्रकार लोक गीत और नृत्य बना ता व्यवसायिक लोगों द्वारा धनोपाजन हेतु प्रयुक्त की ही जाती है—कुछ नाच्य गीत मण्डलियाँ भी जीविका कमान के लिये इधर उधर जा-जाकर अपनी कला का प्रदर्शन करती हैं। राजस्थान में नाच्य गीतों का खयाल कहन हैं—प्रायः हाली पर या विवाहोत्सव पर नाच्य गीतों के साथ अभिनय हात है माली जाति के लोग इनमें अधिक भाग लेते हैं। शेखावाटी क्षेत्र में वेगेवर ग्याला के रक्षयिता और लिलाटी विंगेय रहे हैं। वतमान ग्याला के प्रसिद्ध रक्षयिता हैं चिडावा व नानूराणा। इनकी पार्टी स्थान-स्थान पर प्रदर्शन कर के धनोपाजन करती फिरती थी।

नानू के कुछ ग्यान है— विराट पव पूरण भगत हीर राभा ढाला मरवण आदि। नानूराणा ने अपने ग्याला में स्थान-स्थान पर गुच्छा का उल्लेख कर के गुरु भक्ति का परिचय लिया है।

भरतपुर के रासघारिया व और चित्तौड़ के तुर्रा-कलगी नृत्य भी नाच्य श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं—य लोग भगवान् राम-कृष्ण की लीलाओं का और अन्य पौराणिक कथाओं का प्रदर्शन कर के जीविका कमाते हैं। जम—

“रानी तने जुलम कर डारी, वन में भेज दये श्रीराम”

भरतपुर अलवर करौली और धोलपुर में इन कथाओं पर रच हुए रसिय गानाकर अभिनय हाता है। इस प्रकार का एक अभिनय काम गुजरा वटा मन मोहक है।●●

भरव—भरा बाबा की अखिल राजस्थान में मायना है जगह-जगह भरव का मंदिर बने हुए हैं। सामान्य भक्ति-भाव से तो भरव की उपासना हानी ही है पर धन सन्तान आदि की कामना पूर्ति हेतु भी यहाँ भरा का ढाक दी जाती है। भराजी के तीन रूपा की उपासना होना है—कान गार और जूभार। काने भरव राजपूत जाति के हैं गारे ब्राह्मणों के और जूभार जाट के स्वामियों द्वारा पूजे जाते हैं। इस प्रकार विभिन्न जातियों में भगवत्कर्म अलग अलग स्वरूप की मायना है। बीकानेर के काडम देमर स्थान में भरव का सबसे बड़ा मन्दिर है जहाँ समय-समय पर मेले लगते हैं—जाधपुर तथा अन्य नगरों से भी लोग आकर काडमदेमर के मेले में सम्मिलित होकर परम भक्ति भाव से भरवजी को ढाकते हैं।

रामदेवजी—रामदेव बाबा की भी ममस्न राजस्थान में मायना है। जोधपुर के रण्डीचा गाँव में रामदेव बाबा का सबसे बड़ा मन्दिर है। भाद्रपद और माघ शुक्ला दशमी के दिन वहाँ भारी मेला लगता है। रामदेवजी रण्डीचा के जागरदार थे। भाद्रपद 11 का म० 1516 ई० में गाँव के राममरोवर पर उन्होंने रण्डीचा वासिया का समभाया और समाधि ले ली। तब से भक्ता ने उनका धनक चमत्कार देखे—रामदेव बाबा की मायना में प्रभावित होकर भारतीय गाँव के एक वृद्ध मनीषी ने बराठिया गाँव में रामदेवजी का मन्दिर बनवाया। वह अपना पत्नी से कहते नगे—

‘गणो रे कपडा धारा सगला तो बेचू ।

अ-दाता रो मिररियो चुणावा रे, जीवो

खमा खमा खमा रे कुँवर अजमाल रा’

यह है रामदेव के प्रति अटूट भक्ति कि भक्त अपनी पत्नी के वस्त्राभूषण बच कर भी बाबा का मन्दिर बनवाने की भावना प्रकट करता है।

रामदेव और भरा राजस्थान के सर्वाधिक मायना लाल देवता है—बड़े बड़े मन्दिरों के अतिरिक्त नगर और गाँवों में थोड़ी-थोड़ी दूर पर रामदेव बाबा अथवा भरा के धान बन होते हैं। भाद्रपद तथा माघ शुक्ला दशमी का जगह-जगह रामदेवजी का जागरण होता है और दिन में जहाँ तहाँ मेले लगते हैं। सबसे भारी मेले जोधपुर के रण्डीचा गाँव में और बीकानेर के पास सुजानदेमर गाँव में लगते हैं जिनमें राजस्थान भर से यात्री आकर सम्मिलित होते हैं। रामदेवजी के स्थानीय मेले का साधारण नगर और गाँवों में भी लगते हैं जिनमें नवलगढ़ पाकरण और मसूरिया आदि।

रामदेव बाबा को राजस्थान में मय प्रकार की मनाकामनाएँ पूरी करने वाला लोक देवता माना जाता है जसा कि निम्नलिखित जन्मश्रुति से व्यक्त है —

“कोडिया रो कोड भाडे, आंधा न आल देव ।

लूला लगडा ने हाथ पाव देव । आदि

जन मानस की झूट श्रद्धा भक्ति व फलस्वरूप य लाग-वृता सचमुच ही लोक जीवन म सुल समृद्धि की बर्षा वरत हुए धार्मिक आस्थाभा को छ वनात रहे हैं। बौवानर जोधपुर और जमलमर म गाँव-गाँव म रामदेवजी की देवलिया¹ हैं जहाँ सरलतापूर्वक ग्रामवासी मनीनी मना मना कर रामदेव बाबा की डाक देते हैं। वष भर म कई बार निर्धारित तिथिभा पर इन मंदिरा म मले नगन हैं और रात्रि जागरण होते हैं—साक जीवन म मला और जागरणा का बडा ही महत्व है। मले और जागरण लोक मानस म प्रवाहित भक्ति भाव व प्रतीक हैं य जनजीवन को सरस बनाए रखन म बडे सहायक हात हैं। जागरणा स जन साधारण को निव्य सदेग मिलता रहता है जा उनक लिय सात्त्विक जीवन का माग प्रशस्त करता है। इन रात रात भर हान बाने जागरणा म गीना का आर छार नहीं रहता।

उज्जपुर डूंगरपुर भीलवाडा और बांसवाडा की आर भारत के प्राचीन आश्रिवासी भील अधिक सख्या म रहने है। भीला व आराध्य दब भरव है उही के प्रभाव म समस्त राजस्थान म भरव की मायता प्रसारित हुई मानी जाती है—भराजी पर अनका लोक-गीत प्रचलित हैं। विवाहाणि भवसरा पर भी भराजी पर अत्यन्त सरम और भय पूण गीत गाय जाते हैं। भरव बाबा का एक भील गीत है —

भरू धान पूजा।
 भरू आतर नो भूमको लाग, धान पूजा।
 भरू पगलाना रमभड बाज, धान पूजा।
 भरू नारता ना खडग बाज धान पूजा।
 भरू धरती घूजाओ मती धान पूजा।
 भरू मगराना मायल भार, धान पूजा।

विवाह पर गाय जाने वाले भरव व गीता म जीवन का प्रतीक हमा और ववाग ठहर ठहर कर मधुर वाणी म वानी जाती है —
 'हमा री बेवाण रई ने बे बी बोल रे हमा री बेवाण।
 हमा मई जोवनिया माए, हमा री बेवाण।

× × ×
 हमा धरमी धरमी आव रे, हमा री बेवाण।"
 × × ×

भरव व अधिकग गीत नत्य व साथ गाय जात है इनम कोई दार्शनिक तत्व नहीं होता।
 भरव के कुछ गीता म शराव पीन व भाव भी व्यजित हुए हैं —
 घ्राद्यो पायो ए कलाली धान, फूल दाहडो माय छरू।
 दाहडो घ्राद्यो पावेल।

1 हाटे छाटे धान (मन्दिर रूप)
 2 'आजकल पत्रिका जुलाइ 51 म प्रकाशित लेख डॉ० देवीलाल सामर व लेख से।

सिर पर का मोती तो भरू जी कलाली न दीना जी, आछो पायो ।

आछो पायो ए कलाली घान फूल दाण्डो मेद, छक दाण्डो आछो पायो ।”

नाविक सिद्धिया के लिये निश्चित अवधि म मनोकामना पूर्ति हेतु जो दव यात्रा या तीय यात्रा की जाती है उम लाक जीवन म ‘जात दना कहत हैं—भरव और रामदेवा आदि लाक दयताआ की जाते बहुत बोला जाती हैं—मनाकामना पूरी हान पर इन देव-देविया के प्रसिद्ध मदिरो म जाकर टाक दते है । भरोजी अथवा रामदेवा को ढोक देन के लिये जाती हुई राजस्थानी स्त्रियां भरो के प्रति भक्ति भाव म प्ररित हाकर अनक गीत गाती ह जसे —

भरव का गीत —

“यारे कोडाणे रे गोले में रे भरू कालो गोरो बीण बजाव ।

हो राज हर को हो हालरो भल देई मारा कानूडा भाई ।”

× × × ×

रामदेव का गीत —

‘कोटे तो बाजा ओ अजमल¹ जी रा छावा बाजिया,

बारी जाऊं कोटे तो छुरा छ निसाण । आज०

आज अजमलजी रो छावो कलन धो कस्या ए,

रणीचे तो बाजा ओ अजमलजी रा छावा बाजिया । ²

× × × ×

कल्पुग मे तो रामदेवजी कवापा, टापर मे रामचंरजी,

शेता म कृष्ण भगवान कवापा ए,

देखो ए पुढ्य नारी रामदेवजो ने गावे ए ।

जाको सदा दरसण देसो राम ।

जाको सदा धन मे होसो राम । ³

राम प्रकार महिलाआ क कठा स स्फुरित ध्वनि रूप गीना स प्रकट ह कि नाक-बना जन मानस म भगवान राम कृष्ण के समकक्ष आसन पर प्रस्थापित हो गय हैं ।

पावूजी राठीड—भरव और रामदेवा क पश्चात् राजस्थान के लाक-बनाआ म पावूजी का स्थान है । पावूजी यहाँ के एक प्रसिद्ध वीर हुए हैं जिाकी जन्मभूमि

1 अथ गीत दक्षिण—राजस्थानी लाक-गीत (खण्ड 2) पृ० 87-89

2 राजा अजमल रामदेव क पिता थे—कहा जाता है कि शयनाग की शया पर शयन करते हुए द्वारकानायक म वरदान प्राप्त करन पर भगवान् कृष्ण न ही म० 1461 म भाटा मुनी 1 को रामदेव क रूप म अवतार लिया ।

3 दक्षिण पुरा गीत—कहा (खण्ड 2) पृ० 87

बोलूमगड थी। पावूजी ने प्रतिभाबद्ध होकर भावरा स उटकर दबल चारणा की गाया की रक्षा निमित्त भ्रमन प्राण्य बलिदान किय। और भी कई बठार प्रतिभाभा वा पालन करते हुए गउमा तथा आथिता की रक्षा की। अत वह भ्रमनी बीरता और सात्विक भाचरण क लिय राजस्थान म देवता की भाति पूजे जान लगे।

भरव बाबा तथा रामदेवा की भाति पावूजी क मंदिर भी कई स्थाना पर यापित है जहाँ पावूजी की हाय म भाला लिय घाड पर सवार मूर्ति प्रतिष्ठित है। इनकी चरित्रावली एक चान्दर पर चित्रित है जिम पड' या 'पड बानते हैं पावूजी क मक्त जा भाप कहलान हैं इस पड का लिय हुए रावण हत्य वाद्य यत्र के साथ पावूजी की बीरता के गीत गात हुए और वही-वही अभिनय भी करते घूमा करते हैं। इस प्रकार क चरित्रा पर रचित गीता को पवाड कहन हैं। पावूजी क पवाड समस्त राजस्थान म प्रचलित हैं—भाये लाग पावूजी क प्रति भक्ति भाव स प्रेरित हाकर नत्य भी करत हैं। पावूजी के पवाडा क कई खण्ड बीकानर स प्रकाशित राजस्थान भागती। और पिलानी की मफ भारती शोध-पत्रिका म प्रकाशित हा चुक हैं। भील लाग अपनी भापा म भी पावूजी क बीर हृत्या पर कई गीत गाते हैं। इनके नाम पर कई भाव जनिक मल भी लगत हैं और गीत गाय जात हैं। पावूजी की जन्मभूमि बालूमगड म उनका प्रधान मला लगता है जहाँ राजस्थान भर क लाग भ्रात हैं।

जाँभाजी—जाँभाजी पँवार वनीय राजपूत थे—उनका जन्म मारवाड क पीपामर गाव म सन् 1508 ई० म हुआ था। यह ब्रह्मचारी महात्मा और सिद्ध पुरुष थे—इनकी करामाता स प्रभावित होकर लाग इह मिद्ध मानकर पूजन लगे। जाँभाजी का लोग न विष्णु का अवतार माना है। एक बार नागौर म दुग्ध पडन पर 800 जाटा क एक दल न गाँव द्वाडकर भागन का निश्चय किया—तब जाँभाजी न पहुच कर उह राव लिया और उन 800 ध्यक्तिया का बवल एक मन भ्रम म 3 वप तक लगातार भोजन लिया। इस प्रकार की कई घटनाया स प्रभावित होकर लाग न विशनाई धम स्वीकार किया। बीकानेर क तालवा गाव क घारे पर रह कर जाँभाजी भ्रमन शब्दा श्रीर उपदेश द्वारा भ्रमन धम का प्रचार करन लगे जिसम प्रभावित हाकर धनेक लोग उनक अनुपायी बन गय। इनक नियमा की सख्या उनीस हैं अथा 1 बीस और नौ सम्प्रदाय का नाम पडन का कारण नियमा की सख्या ही है यद्यपि कुछ लोग इसका कारण बतात हैं इह विष्णु अवतार मानता।

जाँभाजी पर भी लोक जीवन म कई गीत प्रचलित है जा विदेष भ्रवसरा पर गाय जाते हैं—माघ पूर्णिमा को बीकानेर की नाला मण्डी म जाँभाजी का मला भी लगता है जिसम आस-पास क स्थाना स भी प्रचुर सख्या म लोग आकर सम्मिलित हाने हैं।

1 रिपाट—जनगणना, बीकानेर राय।

तेजाजी—तेजाजी जाट जाति क नर रत्न थे। बनगान हरयाणा प्रान्त का करनाल नगर इनकी जन्मभूमि है और व पनेर गाँव में व्याहृत थे। जब तेजाजी समुराल में यत्ना लाच्छा गुजरी की गायें मींगे ल गय—पता पढ़न पर तेजाजी पीछे-पीछे दौ गय। सुरसुरे गाव में एक सप मिला जिसन इह रोक़ा परन्तु तेजाजी वापिस धान की प्रतिना क साथ गाया के पीछे चल गय और मीणा स युद्ध करक गाया का लुडा लाय—वापिस अपनी प्रतिना पालन हनु सप क पास पढ़व जिसके काटने में इनका देहावसान हा गया। इस प्रकार अपनी गउम्रा क प्रति भक्ति के फलस्वरूप प्रदर्शित वीरता और बलिदान के कारण तेजाजी देवता क रूप में पूज जान लगे। सधप्रथम तेजाजी की पूजा उनक बहनोई और समुराल वाला के राज्य में आरम्भ हुई तत्पश्चात् समस्त राजस्थान में इनका नाम लोक-देवता के रूप में प्रचलित हा गया और पूज जान लगे। इनके सम्बन्ध में कई गीत मिलते हैं। एक गीत का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है —

गाय्यो गाय्यो जेठ आषाढ़, लगतीई बडो सावण भादवो ।

धरती रो मांडण मेहो, आभरी मांडण चमक बीजली ।

छतरी रो मांडण धाज, कूव रो मांडण भरवो केवहो ।

गौरी रो मांडण धरण्यो सायवो ।

सूतो सुल भर नौद कँवर तेजाजी, धारा साधोडा दीस काकड बाजरो ।

भूठी भूठ मत बोलो ए भरणी माता म्हारा साधोडा हौंड रग रे पातरणे ।¹

तेजाजी की स्मृति में भान्सा गुक्ला एकदशी का परवतसर के आस पाम के विभिन्न स्थानों में मेल लगते हैं जा पूर्णिमा तक रहत है—इस अवसर पर विनापकर जनसमूह तेजाजी क प्रति भक्ति भाव से प्रगित हो उह दान देन आत है। महता राजाराम न अपन ग्रंथ जुभांग तेजा में भली प्रकार इनकी प्रसिद्धि का वर्णन किया है। राजस्थानी साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् और समीक्षक श्री नरसिंहदास स्वामी द्वारा सङ्कलित लोक-गाथा में तेजाजी पर तान गीत उपलब्ध है। एक और भिन्न प्रकार का गीत तेजाजी पर हाटानी प्रदेश में गाया जाता है। मन के स्थानों पर तेजाजी की मूर्ति घाट पर प्रतिष्ठित वीरता की चोन्क होती है। किशनगढ़ बूंदी अजमेर आदि स्थानों में भी तेजाजी क कई मन्दिर है जहाँ भान्सा में एकांशी स पूर्णिमा तक मेल लगते हैं।

गोगाजी—गोगाजी का जीवन वृत्त जनश्रुतियाँ पर आधारित है। राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहास वक्ता पं० अजयमल शर्मा न शाध त्रिवा में प्रकाशित अपने लेख गोगा चौहान पर एक दृष्टि में गोगाजी के जीवन पर प्रकाश डाला था। आप लिखते हैं कि गोगाजी न सिन्हा की सेनापति क साथ भयंकर युद्ध किया और भारी बलिदान क बाण वारणति का प्राप्त हुए। यह दश क शासक थ। गोगाजी का सम्बन्ध साध

1 यह पूरा गीत एक अन्य गीत दलिय—राजस्थानी लोक-गीत (मण्ड 2) पृ० 88

स है अतः जनता भक्ति पूर्वक उन्हें पूजती है। राजस्थान में गोगामडी नामक स्थान गोगाजी की पूजा का केंद्र है जहाँ भाद्रपद कृष्णा नवमी को गोगाजी पीर का भारी मना लगना है और दूर-दूर से यात्री आते हैं। राजस्थान में अनेक स्थानों पर भी इस दिन मत्त नगते हैं—भले क स्थानों पर गोगाजी की मूर्ति नाग कार्तिन्दर के रूप में प्रतिष्ठित है। हिंदू और मुसलमान दोनों ही गोगाजी का मानते हैं और पूजा करते हैं। गोगाजी और राजाजी के मत्त में कमरिया बँवर और भभूता सिद्ध के गीत भी गाय जाते हैं।

गोगाजी के जीवन चरित्र सम्बन्धी अनेक गीत जन साधारण में प्रचलित हैं—इन गीतों में उन घटनाओं की प्रधानता रहती है जिनमें गोगाजी ने कोई निराप काय किया है अथवा कोई अग्नि मानव कृत्य कर करके दिग्गया है। गोगा नवमी के अवसर पर राजस्थान का समस्त वातावरण इन गीतों से पूजा उठता है। गीत का एक नमूना है—

“गोगो मूल्यो बड तल, मूल्यो रे मुख मर नौद ।
 - वारी म्हारा गोगा मय रहियो ।
 माय जगाव गोगोजी की उठ उठ ओ म्हारा गोगा साल ।
 मोदा पडया बिलोबणा रीती रे पारी जाय छदियार ।
 मूल्यो गोगो ओदकयो टूटया रे चारु” साल । वारी म्हारा०
 ल्याओ ल्याओ पावू बापडो, ल्याओ ल्याओ रे म्हारा पाच हत्यार ।
 हर जन मार्यो बड तल, सरजन रे सरवरिया री पाल ।
 मार्यो रे मासी रा साल ॥”

बेसरिया बँवर—बेसरिया बँवर का गोगाजी का आत्मीय पुत्र माना जाता है। यद्यपि इसका कोई प्रामाणिक आधार नहीं है। कमरिया बँवर की स्तुति में गाय जान वान गीतों में इन्हें पद्मा नागण का जाया ‘पूतन्हे का वीरा और त्रिभूरी का दाता कह कर बरना की जाती है। गोगाजी ने दण्ड छाड कर मंडी का अपना निवास स्थान बना लिया था—उसका नाम भी कमरिया बँवर सम्बन्धी गीतों में आता है। गोगा नवमी के पहले दिन बाली घण्टी का ता इनकी भी नाग रूप में पूजा होती है। इनका एक गीत है—

‘बाजरडी रो बूँट बँवरजी, ज मे म्हारी याना नागण पणु कर्दया ।
 बच्चिया स्वापी ओ चार कँवरजी चारों मे सकल सुणोज बावो बेसरो ।
 कोरे कुण्डे मट्टवा ए कँवरजी छपन छूरी स गाडो मोडियो ।
 ओरज पीव ओ दूध कँवर सा, आप बेसरियो कवर बाघो धी पीव ।
 पिडरन राखो पताल कवरजी, छाड मोडा रो रिच्छा ए बरो ।

भोनिया—भोनिया लोग गाँवा में स्थानात्त स्वामी दूषा करन थ जा मत्तान के ममान प्रजा का पालन करत थ और प्रजा भी उन्हें पितृवत मानती थी। जिस

प्रकार अत्यन्त लोकप्रिय राजा मृत्यु के पश्चात् भी चिरकाल तक प्रजा के मना म राज्य करना ह और उसकी स्मृति म स्मारक बनवा कर भावा पीन्या उह देव तुन्य मायता प्रदान करती हैं इसी प्रकार किसी सवप्रिय भामिया की मृत्यु हान पर लोक जीवन म उसकी देवता रूप म पूजा हाने लगनी है। अथ दवी त्वेनाम्ना की भाति जम आर विवाह आदि के मागलिक अवसरा पर भामिया क नाम से जागरण हाता है जिसम भामिया सम्बन्धी गीता के अतिरिक्त धार्मिक आस्था के पौगणिक भजन हरजम सवद और सलाके आदि गाय जाते हैं। जागरण की समाप्ति पर भामिया क प्रसाद चनाया जाना है। जागरण म सम्मिलित हान वाले सभी जन प्रसात् चना कर अपनी श्रद्धा अर्पण करना महान् पुण्य कृत्य मानते ह। भामिया पर कई गीत प्रचलित ह जिनम भोमिया के स्वामित्व म किय शुभ कृत्या के चलन क माय जनमानस के भक्ति भाव का परिचय मिलता है एक गीत का नमूना ह —

कठोडे बाजा बाजिया हो मोयल राणा कठोडे घोडा रे निशान
साचा भोमिया हो।

बीरारे बाजा बाजिया हो मोयल राणा, सरगा मे घोडा रे निशान।
मोयल राणा साँव रे जारी करो रिद्धपाल घोडा बीराजे नवलला हरो।
मोयल राणा मोतीडा सुघड लगाम बागे बीराजे उजला हो।
मोयल राणा बडा बडा मोती छ कान हाय हीराजड मुँदडो श्री।
मोयल राणा मेहदी सुँ राचा छ हाय सुयण सोहे साँकडो हो।
मोयल राणा मेहदी सुँ राचा छ पाँव चडे न चढवे चूरमो हो।
मोयल राणा चोटी वालो नारेल सच्च भोमिया हो,
मोयल राणा साँव रे जारी करो रिद्धपाल।

यह है जन-जीवन म भक्ति भाव का प्रवाह। स्वाभाविक रूप से कृत्य पालन कता स्वामी के प्रति भी इतनी श्रद्धा और आस्था जन मानस म पाई जाती है जा उह देव-म्यान पर प्रस्थापित करके पूजने लगन है—दही के माघम स उनकी पूजा बने देवता रूप भगवान का पहचती है। गीता म भगवान कृष्ण न कहा ह कि जा भक्त जिस जिस देवता के स्वल्प का भाक्त-पूर्वक श्रद्धा भाव से पूजना है उस भक्त की उस ही देवता के प्रति मैं श्रद्धा म्यर करता ह और वह व्यक्ति उम श्रद्धा स युक्त ह्या मर द्वारा ही विधान क्रिये हुए उन इच्छित भागा का प्राप्न हाता है।¹

- 1 या या या या तनु भक्त श्रद्धयाचितुमिच्छति।
तस्य तस्याचला श्रद्धा तामेव विदधान्यहम्।
स तत्र श्रद्धया युक्त मन्याराधनमीहन्।
सभत च तत कायामयव विहितार्हि तान्॥

इस प्रकार ज्ञान विज्ञान की विधियाँ स विहीन सरल मानस वाला यह जन ममूह साधारण शक्ति सम्पन्न साधक-वृत्तात्मा में ही अपनी श्रद्धा निहित करके भगवत् कृपा का अधिकारी बन जाता है जो प्रायुक्तिक बुद्धि प्रधान शिक्षित वर्ग से बड़ी अद्विज जीवन के यथायुक्त सुख और शान्ति का भागी है।

भभूता सिद्ध -- भभूता सिद्ध पर गाय जान वाल गीत से यह एव बकरी चरान वाला खाना था-- प्रपना रेवड चरान गया हुआ था बहा सप के काटन में मृत्यु हा गई और सहज विश्वासी जनता उस सिद्ध मानकर पूजन लगी। रात्रि जागरण और तजाजी गोगाजी शान्ति के मेला के अवसर पर भभूता सिद्ध के गीत गाये जाते हैं।

“हाय गगरन गडियो भभूता सिद्ध रेवडियो चरावण जाय।
रेवड छोडियो ताल मे, भभूता सिद्ध धोरां लियो विसराम।

सूत ने पणो पी गयो लागो लागी कालूडे¹ रो फट।
उठो रे साथोडा कर लो घानणो भभूते ने डसग्यो कालो नाग।

बाबो जो उडीरु कोटर्पा, भभूता सिद्ध माऊजी रसोयां माय।
सजा बाई उडीरु सासरे, भभूता सिद्ध गोरो घए महला रे माय।

माय सपूतो बरजियो भभूता सिद्ध वार बुधवार मत जाय।”

गीत की प्रतिम पंक्ति में भारतीय सस्टुति में शकुन मायता की भी सुप्रसिद्ध प्रतिम पंक्ति हुई है।

पीर और पंच पीर -- राजस्थान में पीर और पंच पीर की पूजा हिन्दू मुसलमान सब करते हैं। इस प्रकार के अनक देवी-देवता यहाँ भावना में बना लिये गये हैं।

जीए माता और सकराय माता -- इन देवियाँ का दुर्गा का रूप मान कर ढाका जाता है। गण्पावासी में इन दाना के मन्दिर हैं जिनमें स मकराय माता की स्थानीय मायता है परन्तु जीए माता अखिल राजस्थान में प्रसिद्ध है। राजस्थान के बाहर से भी यात्री इन्हें पूजन का घात हैं। जीए माता का गीत राजस्थान के लोक गीत साहित्य में विशिष्ट स्थान रखता है। साहित्यिक दृष्टि में भी इस गीत का महत्त्वपूर्ण स्थान है। गीत में वर्णित जीए माता की कथा भाई-बहिन के सात्त्विक प्रेम का मार्मिक चित्रण है। अनक विद्वाना ने जीए माता के गीत को राजस्थान का सब श्रेष्ठ लोक गीत माना है। गीत का माराण इस प्रकार है --

जीए और हप भाई बहिन व। धाधू नामक स्थान में चौहान राजपूत कुल में इनका जन्म हुआ था। इनकी छोटी अक्सर माता पिता छूट कर स्वर्गवासी बन गये। हप का विवाह हान पर एक दिन पानी भरन जान हुए नन्द भोजार्ई में बुद्ध

1 काला नाग

बहा सुनी हो जान मे जीण को मर्मन्तिक दुःख दृष्ट्या और वह घर छाडकर चली गई । हृष्य मनान पढ़ुचा परतु बहुत मनान पर भी वह नहा लौटी—ना हृष्य भी उसक साथ हा लिया और पहाडा पर जाकर तपस्या करने लगा । जीण शक्ति का अवतार बन गई और हृष्य भी सिद्ध रूप म पूजा जान लगा । भाई-बहिन की उस गाथा का गीत जीण माता नाम से लाक प्रचलित हा गया जो जीण और हृष्य के बीच सवात्कारमक रूप म है और अत्यन्त कारुणिक स्वरा म गाया जाता है ।¹ उनके अत्यधिक करण रस पूण अश्रु दिये जाते हैं —

“हरसा भाई म्हारा रे, क्यान खिणा दे सरवर ताल,
जामण रा रे जाया, धायी हू धारी रे मोवन बावडी ।
हस्ता वीर म्हारा रे, एक ओवर मे रे दोनू लोटिया,
एक मायई रो चू गयो दूध, म्हारी जामण रा रे जाया ।
एक पालणिये दोनू भूलिया, हरसा वीर०
एक घांगण मे दोनू रे खेलिया, एक बाटकिये पियी रे दूध,
म्हारी मा रा रे जाया, एक धाबकली रे साग जोमिया ।
हरसा वीर म्हारा रे बनड भाई रो गाडो नेह,
जामण रा र जाया, पर घर री प्रायो रे तोडियो ।”

× × × ×

“जीण म्हारी बाई ए, भोत सुहेली ए घर रो छोडियो
घणी ए सुहेलो ताजीवो मोह, म्हारी मा री ए जायो,
हरसा रा बायक ना फिर, जीण म्हारी बाई ए ।
चालू लो या रे खोजा रे सार, जामण री ए जायो
धूली तो तापू ए बन खण्ड डू गरा ।”

गंखावाटा म सीकर स चार वास पर अरावली पहाडा की थेली के नीच जीण माता का मंदिर है । मन्दिर के पुजारी पाराशर गोत्रीय ब्राह्मण अर मांमरिया खाप के बौहान राजपूत हैं । यह मंदिर शेखावाटी के अत्यन्त प्राचीन मन्दिरा म स है । दूर दूर स लोग दशन करने आते हैं । मन्दिर क बाहर सँपरे मस्त होकर बीन बजात हैं और ग्रामीण माताए मधुर ध्वनि म गीत गाती है ।

माता र धान मे, चिरविट नाडो बीडलो ।
सुपरा के बीडल म्हारी जीण माता बस रही ।
माता के धान मे चावल रो बीडलो,
सेर घुडक, नार री असवारी ।
म्हारी जीण माता बस रही ।

1 मान बहुत बडा है—उसका कुछ अश्रु उपलब्ध हो सका जा राजस्थानी गीत' खण्ड 2 म लिया हुआ है ।

जो कोई जीए माताजी न प्याव, सग मुल पाव ।
मनसा होव पुरो, म्हारी जीए माता रो आसीस भूँ ।”

शीतला माता—भारत व अथ प्रांता की भाति राजस्थान म भी चक्क व राग धी देवी का प्रकोप माना जाता है और माताप्रा म यह विश्वास है कि देवी की प्रायना और भायता स उम शान्त किया जा सकता है । इन देवी को शीतला माता व रूप म मानत हैं आनि मानव न अपनी पुत्र भावना प्रकट करके जित माना व रूप म प्रदण किया । चत्र बनी अष्टमी को शीतलाष्टमी नाम पकर मानाए अपने बालका की दोम बुशन व लिय इन दिन शीतला पूजन करके मनाती है । देवी को शान्त करन के लिय व अग्नि का चैनन नहीं करती मत इन दिन एक दिन पूव का बनाया हुआ ठण्डा भाजन किया जाता है और ठण्डा सामान स ही माताजी को पुजाया चदान है । राजस्थान भर म अनेक जगह शीतला माता के मन्दिर बन हुए हैं । य मन्दिर प्राय बहुत ऊँच हान हैं जया कि निम्नलिखित गीत की पत्तिया स प्रकट है —

“माता र मँमद घडावोजी, माईजी रतडी रतन जडाव ।
पेडियाँ तो म्हाँ सू चढ़ी न जावजी ।
धाँको पेडियाँ तो डढ़ सौ माईजी ए ।
सुल सुल डूव सरीर ।
पेडियाँ तो म्हाँ सू चढ़ी न जावजी भुक् भुक् डुल सरीर ।
पेडियाँ तो म्हाँ सू चढ़ी न जाव ।”

शीतला माता व गीता का और छार नहीं है—किसी गीत म मैया के स्वप्न का बगन है कही बालक की रक्षा व लिय स्तुति की है और कही बच्चे का चक्क निकरने पर मा मनौती करती है कि शान्त स चक्क ढाला त जाव तो वह शीतला माई का थान बनवायगी । एम गीत म माता की अन्नका बलया लेनी हुई राजस्थानी महिला चक्क व आरम्भ म ढलन तक का चित्र प्रस्तुत करती है —

“जद म्हारी माता टूटण लागी मक्की को सो बीज । बला सू ०
बला सू सेइत माता ए ।
जद म्हारी माता भरण लागी मक्की को सो बीज । बला सू ०
जद म्हारी माता मान लियो ए सोयो सारी रात । बला सू ०
मरिये कु डाले धीक सोजी नानडिये रो भाय ॥

स्व पुराणोक्त शीतला देवी का स्तोत्र प्रसिद्ध है जिसम कहा गया है कि वह शीतला माता हैं मुंहारी बन्ना करती हैं—प्रमत्त हो जाया—न एम रोग की औपघ न जत्र मत्र है—हे माता शीतल तुम्ही एक रणा करन वाली हा और काई दनता दृष्टि नहीं आता —

1 इन देविया व मन्दिर को थान बोलत हैं ।

“बड़े ७ ह गीतला देवी, सब रोग भयावह । नमत्रो
मोषध तस्य, पाप रोगस्य विद्यते ।
त्वमेका गीतले धार्त्री, न अन्यां पश्यामि देवते ।”

इस प्रकार के अनक चित्र मंत्रिया की अनय आस्था व शीतला माता व गीता म मिनत हैं ।

अथ कृष्णा अष्टमी का सभी स्थानों पर शीतला व मन्त्रि म मन गगत हैं जहाँ मुण्ड के मुण्ड मंत्रिया के भाव भक्ति पूरा गीत गाना हुई जाती है और माता का ढाकनी हैं ।

करणी माता—राजस्थान म करणी माता की भी बहुत भावना है—करणी माता का दुगा का अवतार माना जाता है । धन सन्तान और मव प्रकार की सिद्धिया व निय करणी माता को पूजन हैं । बीजानर म देशनाक म करणी माइ का बहुत वधा मन्त्रि है । अत्र और आमोज गुवना नवमी का वहाँ मानाजी (करणी माइ) का वन्त भाई मला भरता है जिसम सम्पूर्ण राजस्थान के लोग आकर समिनत होत है । करणी माइ व कारण दशनाक का मिद्ध पीठ हान का महस्व प्राप्त है । करणी माता के अनक गीत है जा मेले व अवसर पर गाय जात है और समय-समय पर विनय अवसरा पर हान वाने रात्रि जागरणा म भी । गीत का एक अंश यहाँ दिया जाता है —

“हे दगाए री राय ओ काचे पाके तातए आई,
माता कु आ ए जुडायो हे माय गढपतियाजी रो लखर छापो है ।
सुणो री राय, सामूजी ता पूछे करण दे यो माय ने काचूले,
तोराव ने सेखे जो रो आई ।

माता हैजी हे नराए हे माय डूब तोडी है जाहज तराई है दगाए री राय ।”

बीकानर के राज परिवार म करणी माई को कुलदेवा मानकर पूजा जाता है और रात्रि जागरण हात है ।

नागण्णी माता—राठीड वश की कुल देवी नागण्णी माता है—पहन इह राजेश्वरी अथवा राठेश्वरी कहा जाता था । सबप्रथम राव धूहडजी न परगत पचभद्र म नामान ग्राम म नागण्णी माता का मन्त्रि बनवाया तब म देवी प्रसिद्ध हो गई । जोषपुर के दुग म भी जनाना डयोणी व निकट एक मन्त्रि है । प्रत्यन राठाड गाव म एक थान देवा व नाम पर बना हुआ है । यह थान प्राय नीम वृक्ष का छाया म हाता है । भानान जानि व लाग अपन बच्चा का मूँटण सस्कार नागण्णी जी के मन्त्रि म करवात है । बीकानर म भी नागण्णी देवी का विशाल मन्त्रि है जहा अत्र व आमाज म नवरात्र पक्ष म दशका की विनोप भीड रहती है । नित्य प्रति भी प्रात साय सकडा की सप्ता मे लाग देवी का ढोत्र देने जाते हैं । अनका लाग तो नित्य दशन का सकल्प लिय हुण विना दशन भाजन नही करत । नई रोशनी के शिषिन समाज म भी नागण्णी देवी की बहुत भावना है ।

रामदेव और भंरो बाबा की भानि नागण्णेशी तथा करणी माता को भी राजस्थान में सब प्रकार की मनोवामनाएँ पूरी करने वाली माना जाता है।

इन प्रमुख देवियाँ के प्रतिरक्त राजस्थान के भलग-भलग क्षेत्र में स्थानीय महत्व की कई देवियाँ हैं। भठारी जाति के सागा की कुलदेवी का नाम भ्रामापुर है। श्रीमाली ब्राह्मणों की कुलदेवी का नाम महालक्ष्मी है। भ्रामापुरी का मन्दिर नाडोल में है वहाँ वर्ष में दो बार मेला लगता है।¹

सतिये, बायाँ और भोमिये—प्राचीन काल में स्त्रियाँ की पति के साथ सती होने की प्रथा थी वह धीरे धीरे बन्द हो गई परन्तु कई स्त्रियाँ अपने सच्च प्रम और पति भक्ति के फलस्वरूप भ्राम प्ररणा में सती हो जाती थी। इस प्रकार सती होने वाली स्त्रियाँ समाज में सतियाँ नाम से पूजी जान लगी जिनकी प्रशंसा में भनेवा गीता की रचना हो गई और कही-कही भले भी लगते हैं।

इसी प्रकार जिन भविवाहित कन्याओं में न बुन की लाज या दश की रक्षा के लिये प्राण निछावर कर लिये हैं—व बायाँ नाम से लोक में पूजी जान लगी उनके बलिदान सम्बन्धी लोक-गीत भी गाय जाते हैं।

जो पुरुष भविवाहित रहकर मृत्यु का प्राप्त हो जाता है उसका ब्रह्मचर्य की हिमा प्रस्थापित करने हेतु उसे भोमिया कहकर पूजन लगते हैं। अधिशिक्षित जनता में विश्वास होता है कि कोई मनुष्य मर कर प्रत या देवता बन जाता है। देवता बन हुए भविवाहित पुरुष भामिय कहलाते हैं इनकी स्तुति में भी भनेवा गीतों की रचना हुई है।

सतियों और बायों के गीत —

भठारी ए सत्याँ माई जी ठुक्रम करो तो पायलां मगा ए ए ।
केवक काई ए कह धारा पायलां ।

भूँ तो जाऊ भालीजा की सार केसरिया की सार ।
देवर (सेवक) भठारा ए पायलां मगावत दील लाग छ ए ।

भूँ तो जावा भालीजा की सार हठीला हठ छोड दे ।
भठारी ए सत्याँ माई जी ठुक्रम करो तो पाटोली मगा डू ए ।¹

प्रागे सारे भ्राभूषणा के नाम ल ले कर गीत बढता है ।
बायाँ कुण जी चिराया धारो देवरो,
बायाँ कुण जी दिराई गज नीव ए ।
महाराजा चिरायो भठारो देवरो, बायाँ मेहिर करो ए चिरया करो ।
बायाँ जातीडा रो भ्रामा मनसा पुरी ए धिर भाणिये हो ए सांधी ।
सायबलिया निपन भवनतो माँ पर मेहर करो ।

¹ राजस्थान की जातियाँ—पृ० 9 व 135, 136

राजस्थानी लोक-संस्कृति धार्मिक ग्राम्या और विश्वासा से ग्रान प्रोत है। जीवन के हर क्षेत्र में देवी-देवताओं की मान्यता पाई जाती है। धन-सन्मान एक सब प्रकार की लौकिक सिद्धियाँ के लिये मनीषिया करके देवी-देवताओं की जात देना जागरण करना ब्रतापवास व तीर्थ यात्रा करना आदि सभी कृत्य जनमानस की धार्मिक आस्था से सम्बन्धित हैं—इस ग्राम्या का मूल रूप में क्रियावित् करन के लिये देवी-देवताओं का आश्रय लेते हैं बड़े बड़े देवा को प्रसन्न करन का साहस साधारण मन स्थिति का यह जन-समूह कर नहीं पाता न तो महान् देवा तक पहुचन की विधि विधाना का उह नान है न उतना साहस—सद्य फल प्राप्ति के लिये य लाग द्दाटी श्रेणी के सबको (लोक देवताओं) को ही प्रसन्न करते रहते हैं—दह बड़े देवा के सबका के रूप में मान कर इनके माध्यम से व देवताओं का प्रसन्न करन की प्रवृत्ति बन गई। लोक-जीवन में बड़ी बातों की ओर ध्यान कम जाता है साधारण बातों तक ही लोक दृष्टि सीमित रहती है। तभी इतिहास प्रसिद्ध राणा प्रताप और पृथ्वीराज जैसे वीर पुरुषों की ओर ध्यान न देकर पावू राठौड़ का प्रतिभा पालन गागाजों की गारक्षा और भग बाबा तथा रामदेवजी के परापकार के कृत्य लोक-मानस को इतना प्रभावित कर सक कि उहे देव श्रेणी में स्थान प्राप्त हो गया।

इन लोक देवी-देवताओं की मान्यता के प्रतीक मला और मन्त्रि आदि का सजीव बरण विदशी यात्री टाट ने अपनी पुस्तक 'एनल्स एण्ड एंटीक्विटीज आफ राजस्थान में भी किया है। इन सभी देवी-देवताओं की स्मृति में निमित्त मंदिरा देवतिया अथवा ताल तलयों पर बनाए हुए पूजा स्थानों पर वष में निश्चित तिथियाँ पर मेले लगते हैं जिनमें स्त्री पुरुषों के मुण्ड के मुण्ड रंग बिरंगी पोषाक पहन उल्लास पूर्वक सम्मिलित होकर इन देवा के प्रति अपने हृदय का भक्ति भाव व्यक्त करत हुए मनीषिया मनात है। राजस्थानी महिनाओं द्वारा विविध देवी देवताओं सम्बन्धित मला पर गाये जान वाले गीतों से लोक-जीवन के उरसाह आल्हाद और स्वाभाविक उन्ताम की अनेक रूपा में अभिव्यक्ति हुई है।

राजस्थान के संस्कार सम्बन्धी गीत

भारतवासियों का जीवन मग्न स संगीतमय रहा है। प्रत्येक उत्सव पर्व त्योहार आदि के अवसर पर समयोचित गीत गा-गाकर भावाभिव्यक्ति द्वारा मनाविताना करना हमारी चिनचर्चा का एक अंग है। प्रायः भारत के सभी प्रांतों में स्त्रियों अपने कोमल कंठों से गीत गा-गाकर मन का उच्छ्राय प्रकट करती हुई पुत्र जन्मात्मक एवं विवाहादि मांगलिक अवसरों पर उपस्थित मण्डली का मनोरंजन करती आइ हैं— हमारे यहाँ यह प्रथा अत्यन्त प्राचीन है। बल्कि युग में भी इन पवों के अवसरों पर मनोहर गायकों गाने का निर्देश बल्कि प्रथा में पाया जाता है। मन्थिरीगी महिला में विवाह के मांगलिक अवसर पर गाने की विधि भी उल्लिखित है।

गर्भावस्था से ही यहाँ शिशु लोक साहित्य से प्रेरणा लेना आरम्भ कर देता है और जन्म के साथ वह चारों ओर मांगलिक गीत सुनता है। कुछ बड़ा हान पर तोरिया द्वारा माता की भाव लहरी बालक के कानों तक पहुँचती है। इस समय यद्यपि वह इन लारियों के भाव नहीं समझता परन्तु उसके अवचेतन मानस (subconscious mind) पर उनका प्रभाव अवश्य पड़ता है और वह निरन्तर इनसे प्रेरणा पाता रहता है और जब बालक शिशु का समझने योग्य हो जाता है तो अपने आस-पास की चारों ओर मांगलिक अभिव्यक्तियों को बड़े ध्यान से सुनता है।

लोक जीवन आशा प्रार उत्साह से पूर्ण रहता है। अतएव भारतीय लोक गीतों में सृष्टि का चित्रण अधिक मिलता है। मन त्याहारा पवों तथा जन्म विवाहादि उत्सवों के गीत सर्वाधिक हर्षोल्लास से पूर्ण होते हैं। यद्यपि लोक गीतों के विषयों में कोई सीमा नहीं जीवन का कोई क्षेत्र, कोई अंग ऐसा नहीं जब लोक-साहित्य में हृदय विषाद सुख दुःख की अभिव्यक्ति गा गाने में होती हो। किसी परिस्थिति में हृदय में उत्पन्न हान वाले भावों में आत्म विचार होकर लोक मानस गीतों की रचना करने लता है। संसार की कोई वस्तु जीवन की कोई घटना प्रथम मन का कोई भाव नहीं जिस पर गीत न बने हो। लोक गीतों का अन्तर्गत बलि स्वाभाविक जीवन में घटने वाली किसी भी घटना से प्रभावित होकर निरुद्देश्य बलिना राग अलापन लगता है— फिर भी हृदय के अवसरों पर गाय जान वाले गीतों में अथाग्मस्कार सम्बन्धी गीतों में त्याहारा सम्बन्धी गीतों में सर्वाधिक लोक मानस का उच्छ्राय, उल्लास और उमंग का

उच्छलन हुआ है। राजस्थान में इन अवसरों पर नारी के कंठ से प्रवाहित होने वाली भाव लहरिया अपना विणिष्ट स्थान रखती है। भावाभिव्यक्ति के अतिरिक्त के कारण किसी छाने से ममस्पर्शी बिन्दु को लेकर थोड़ी-सी विषय सामग्री का भी य निरक्षर माताएँ अपने कंठ से प्रस्फुटित राग और लय की खिचावट से खूब बढ़ा चढ़ा कर गाती हुई समस्त वातावरण का गुंजायमान कर देती हैं। लोक साहित्य के तात्त्विक चिन्तक और विद्वान पं० मोतीलाल शास्त्री ने राजस्थान के लोक गीतों के इस गुण को विस्तारानु बंधिनी महता कहकर इन गीतों का महा संगीत की संज्ञा दी है।¹

राजस्थान के सस्कार सम्बन्धी गीत प्रमुखतः सात रूपों में पाये जाते हैं

- 1 सीमन्तोन्नयन सस्कार सम्बन्धी अर्थात् दोहरे साध अथवा साध पुराई के गीत। इन गीतों का फुलेरा भी कहते हैं।
- 2 जात कम अथवा प्रसव सम्बन्धी—इन्हें यहाँ हालरे व सोव नाम से अभिहित किया जाता है। नामकरण सस्कार पर भी यही गीत गाय जाते हैं।
- 3 चूड़ाकरण अथवा जड़ला उतरवाने के गीत।
- 4 बरण बेघन सस्कार के गीत।
- 5 उप-नयन अर्थात् यज्ञोपवीत सस्कार के गीत।
- 6 विवाह सम्बन्धी गीत।
- 7 अन्त्येष्टि सस्कार गीत।

1 सीमन्तोन्नयन सस्कार के गीत—यह सस्कार बालक के जन्म से भी पूर्व गर्भ के सप्तम अथवा अष्टम मास में शास्त्र विधि अनुसार इन्द्र विद्युत का शान्त करने हेतु मनाया जाता है।² इस सस्कार का मनाने का प्रचलित नाम है 'बौक पूजा जिस राजस्थान की लोक भाषा में साध पुराना अथवा अग्रिनी कहते हैं।

भारतीय परिवार में सन्तान का जन्म अत्यन्त आनन्द का विषय होता है—अतएव गर्भाधान के आरम्भ से ही घर में आनन्द मनाने के रूप निकाल नियत जाते हैं। 'सीमन्तोन्नयन सस्कार के अवसर पर गर्भवती स्त्री की साध पुरान के गीत गाय जाते हैं, इन गीतों में गर्भवती की ओर से विभिन्न व्यक्तियों अथवा साध वस्तुओं के लिये इच्छा का वर्णन करते हुए सास-ससुर जेठ जिठानी अथवा पति द्वारा इच्छा पूरी करने का उल्लेख रहता है।

इस प्रकार इन गीतों में गर्भवती स्त्री के लाट चाव की व्यंजना पाई जाती है।

1 आर्य विज्ञान, पृ 221

2 इन्द्र का शत्रु असुर हाता है—उस बेघन के लिये सीमन्त में शूना (काटा) प्रयोग करने का विधान है—इसलिये इस सस्कार का नाम सीमन्तोन्नयन पड़ा।

दोहरे के कुछ गीतों में गर्भावस्था की पूरी श्रवण का बखाना रहता है कि प्रथम मास में अमृक वस्तु का मन करता है दूसरे महीने में अमृक का, दूसरी प्रकार का गीत एक-एक वस्तु को लेकर अलग अलग रचे हुए हैं—जैसे भूली गाजर का बाजरी, बादाम, दास आदि पर। गभवती की साथ पूरी करन का उपाया माना सारे परिवार का साथ लगे जाते हैं—सब वस्तुओं के नामों के साथ घर का बरतना नाम ले-लेकर गीतों की रचना होती है उदाहरणार्थ —

ऊँचा समुराजी अरज कर बहू एक साथ फरमावो जी ।
ऊँचा सामुजो अरज कर बहू एक साथ फरमावो जी,

भामू नहीं भाव मोहे नीम्बू नहीं भाव, भूहाने पचेरा रा बेर भोगावो जी ।
सेर ना खाऊँ दो सेरा न खाऊँ भूहाने भूहोरा की श्रावणा तुलावो जी ।

एक सुमावो वेट पडवो वो बेर ही बेर पुकार जी ॥¹
प्रथम प्रकार के साथ गीत का नमूना है —

जच्चा ने पलो मास लागियो स जी बातों बहोत जीव जाय ।
दूजो मास लागियो जी धूकतडा जीव जाय जी ॥

अलबेली भूहारी जच्चा सुवरण के प्याले केसर घोलस्यां जी
केसर प्यावो रग ।
छटावो दोय दोय पडवा छावो जी ठिमक चलो, घूँघट खोलो,
जराक हस बतलावो ए अलबेली जच्चा सुवरण के प्याले ए, केसर
घोलस्यां ।

जो श्रांगरो मासज लागियोस जी सीर खाँड जीव जाय ॥
चौया मासज लागियो जी कोई चीला पूडा जीव जाय जी ॥

जो पाँचवो मासज लागियोस जी घेवर पर मन जाय भूहारा माहू जी
अलबेली भूहारी जच्चा०
घेवर पर मन जाय ।

छठो मास जो लागियो कोई अल भेवा मन जाय जी ॥ अलबेली०
जो सतवो मासज लागियोस जी सतवो पूजण जाय, भूहारा माहू जी
सतवो पूजण जाय ।

आठवो मासज लागियोस कोई अठमासो पूजण जाय जी ॥ अलबेली०
जो पूरा मासज लागियास जी होलर शब्द सुणावो जी ॥
जो केसर प्यावो रग छटावो दोय दोय पडवा घो जी हसकर बोलो,

जरा घूँघट खोलो ए अलबेली भूहारी जच्चा सुवरण के प्याले केसर
ठिमक चलो ।
घोलस्यां ॥

¹ पूरा गीत—देखिय राजस्थानी लोक-गीत, खण्ड 2, पृष्ठ 19

इसी प्रकार के अनक गीत हैं जिनमें साम्प्रतिक भावनाओं का प्रतिरिक्त सम्मनित परिवार का पारस्परिक प्रेम और समस्त परिवार की गभवती स्त्री का प्रति सबदना की सुन्दर व्यञ्जना हुई है।

2 प्रसव सम्बन्धी गीत — शिशु जन्म के समय गभवती स्त्री के नियमित चलन का अचमर महान् सक्क का हाता है—तत्सम्बन्धी गीतों में जच्चा का कारण स्थिति का ममस्पर्शी चित्रण रहता है। इन गीतों का जाया साहू' अथवा माहिना कहते हैं —

“टस-मस डूख छू पेट जी ओ राजना कमर मे चीसा चाल ।

अलबेली कमर मे चीस चाल, दाईं माई न बेग बुलाय जी ओ राज ।’

× × × ×

‘सुसरा सा न बेग बुलाय, हताया सूँ, पूँ म्हारे चाल कमर मे पीड
अब नहिं जीऊँगी ।

म्हारा सासूजी न बेग बुलाय, रसोया सूँ, पूँ म्हारे चाल कमर मे पीड
अब नहिं जीऊँगी ॥

इसी प्रकार जेठ जिठानी, देवर-भयारानी आदि समस्त पारिवारिक जनता को याद करती हुई प्रसूता की मन स्थिति का कारण चित्र इस गीत में मिलता है।

पुन जन्म पर भारतीय परिवारों में विशेष हर्षोल्लास मनाया जाता है—शिशु जन्म पर गाय जान वान गीत विविध प्रसंगानुसार अनेक प्रकार के हात-ह-खाल वजान के गीत नाल कटाई का गीत, प्रसूता को जा अनेक प्रकार के मवा मसाल पाग पजीरी बना-बना कर दिये जाते हैं उन पर अलग अलग मसाला मवा पर गीत रचे गये हैं—सूठ अजवादन गूँद, पीपली पजारी आर चरण का पानी¹ आदि पर अनेक गीत हैं फिर चीण्टिया² पीला³ कुभरणा पालना घूघरी⁴ और जलवा आदि प्रथाओं का नाम पर गीत बन गये हैं। छटी बाहर के दिन सूय पूजा होती है—उम पर गीत है—नामकरण सस्कार को नमूठन कहते हैं इस दिन जच्चा का स्नान कराने का गीत है।

- 1 पुन जन्म पर सब प्रथम जच्चा की सास उसका लिये साथ अजवादन व पान आदि डाल कर पानी पका कर देती है उस चरखा चटाना बालत है।
- 2 चीण्टिया—जच्चा के ध्यान का ओढना विशेष।
- 3 पीलो अथवा पालिया—नामकरण के दिन गाटे से सुसज्जन पीले रंग का ओढना जच्चा के पीयर से आना है।
- 4 घूघरी—नामकरण के दिन गेहूँ की घूघरा घर घर बाँटी जाती है।
- 5 जलवा—बुआ पूजना।
- 6 द्विविध सब प्रकार के गान—राजस्थानी लान गात खण 2

पुत्र जन्म के भ्रवसर पर सारा प्रयात्रा के परिवार व सत्स्या का नग न्त्रिय जान है—प्राय सभा गीता म इन नगा का वएण रहता है —

हुए भयोध्या मे राम रानी कौशल्या से ।
दयौरागी भ्राव दिवला जलाव दिवला जलाई नेग मांग कौशल्या से ।
जिठानी भ्राव पलग बिद्याव पलग बिद्याई नेग मांग कौशल्या से ।

सास भी भ्राव चरुभा चढ़ाव चरुभा चढ़ाई नेग मांग कौशल्या से ।
नएदल भ्राव सतिये धराव सतिये धराई नेग मांग कौशल्या से ।
देवर भ्राव बाहर निकाले बाहर निकलाई नेग मांग रानी कौशल्या से ।
पंडित भ्राव नाम धराव नाम धराई नेग मांग रानी कौशल्या से ।

हालरा पुत्र जन्म व प्रतिनिधि गीत हैं इन का एक नमूना न्त्रिया जाता है —
रग महल बिच जच्चा होलर जायो जी ।
रग महल बिच जच्चा होलर जायो जी, सोने का थाल बजायो जी ।
धारी सामूजी बजायो, अलबेली जच्चा मारुजी बुलाव धारा हरल कराव ए ॥

प्राडा तो देदा धारे परदा लगाव धारे होलर न हुलराय
अलबेली जच्चा ए मारुजी बुलाव जी राज ।

माये परवा ने धान मैमद त्याव ए माथ परवा न धान रखडो घडाव ए
भटणा रो मौज यारो मन भरियो लगाव, धारो मन भरियो लगाव ।
अलबेली जच्चा ए०

जापे व गीता का कोई ओर छोर नहीं—ऊपर वर्णित गीता व अतिरिक्त भी
धनका नामा के गीत हों हैं—काठलो टोपी सतिय रखन का दूध पीने का विहाई
घोर लारी घान्ति । विहाई शीपक गीत प्रबुर सग्या म प्रचलित है—एव नमूना है —

जलमियो ए जच्चा लाइए पूत वग बघायो तेरे सुतरा को जी ।
सामू जी ओ म्हार ओ म्हारे बरड भ्राव, मिदर दिवलो म्हार जोइयो ।
मिदर दिवलो म्हारे सामूजी जोव बाई न भट दे बुलाइयो ।
दाई तो माई म्हारे पोल पहेटी होलर सबद सुनाइयो ।

सोहन कुण्ड म गगा जल पानी होलर ऊबट ठुवाइयो ।
म्हारे हिये भीतर हरल उपज्यो जब सामूजी बुलाइयो ॥१॥

बाईजो वो म्हारो सुसरो जी बुलाय घ्रांगण म्हारे जात करम कर जी ।
जात करम म्हारे सुसरो जी करसो पडिया बिपर बुलाय जी ।
इन न गऊ दान देस्यां ओर निमल घोटिया एक रपयो बांके हाथ ।
देस्यां धी साडू लाई का । म्हारे हिये भीतर हरल ऊपज्यो ।
जद म्हें सुसरो जी बुलाइया । म्हारे कुल को माण्डण पूत ॥२॥

बाईजी धो धारो धोरोजी बुलाय धण ज्यु धण विलस सायव धाप कोजी ।
 धन विलसो जी साजी हरजी मलजी रा पूत इव धारो पूरो छ मनरली जी
 धार धनमन जी सायव मोत रा होव सू धारो रात दुहेलडो जी ।
 पुण्य करी जी सायवा जलमेगा पूत धन धर ध्राव धार कुल मऊ जी ।
 सादयो धे जच्चा कुलको जी हार सरस सुख सादयो धारो कूँख मे जी॥३॥

3 जङ्गले उतरवाने के गीत—नमूना है —

तोहे घंदा बहू या साल या मेरा सांवरिया,
 दूर खेलए मत जइये मेरे ललना तेरे सर पे जइले बात मेरे सांवरिया ।
 घंदा खेलए को मागे मेरे ललना, घंदा बसे आवाग, मेरे सावरिया ।
 बादी जो की गोदी की मे खेल मेरा ललना, भाई की गोद मे खेल मेरा
 ललना दौड घाघीजी की गोदी मे, मेरे सांवरिया ॥ तोहे०

जङ्गल के भवसर पर जिस देवता क नाम पर जङ्गल बाने हुए हा¹ विनाय कर उस
 के एव अथ देवी देवताया तथा लोक नायक) क गीत गाये जाते हैं और उनके अतिरिक्त
 अम के भवसर के गीत भी गाये जाते हैं ।

4 कण छेदन सस्कार—भारत के कुछ प्रान्ता म बडे आडम्बर से मनाया जाता
 है परन्तु राजस्थान मे इसका विक्षेप महत्त्व नही है । किसी भी शुभ तिथि को बालक
 के कान छिन्वा दिय जान हैं छेदन वाल वाल को नेग देकर प्रसात् बाँटते हैं और
 स्त्रियाँ गीत गाकर आनन्द मनाती है । इस भवसर क कुछ गीत विनाय हैं—जिनम
 बाली बनवान हँस हस कर पहनाने आदि का उल्लेख रहता है—इनके अतिरिक्त
 विहाइया बघावे आदि जमात्सय के गीत अथवा बन गा लिये जाते हैं ।

एक गीत है —

“मधुरा नगरी जाना बाबा पीला सा सोना लाना,
 पीला-सा सोना, उजले से मोती, ये लालाजी के सोहले
 इक सोने की बाली बनवाना, साला के कान छिदाइये ।”

5 यज्ञोपवीत सस्कार के गीत—प्राचीन काल म इस सस्कार का जीवन म
 बड़ा महत्त्व माना जाता था । विद्यार्थी गुरु क पास आश्रम म रह कर विद्याध्ययन तथा
 वेत् पाठ करते थ । गुरु क पास भेजने स पूव अपने अपन वण के विधान अनुमार
 आठवें, दसवें अथवा बारहव वष म बालक का यज्ञोपवीत सम्कार होता था । इसका
 तात्पर्य यह था कि यज्ञोपवीत (जनेऊ) क सूत्र से प्रतिज्ञा बद्ध होकर बालक निश्चय
 धित्त से स्वाध्याय करने म समय होना था ।

1 स्त्रियाँ बालक के लिये मंगल कामना हतु कुछ अथघि बान जङ्गला उतरवाने के लिये
 बालाजी भरू जी रामदेवा जी माताजी अथवा जूभारजी के नाम स जङ्गला बोन
 दती हैं और समय आन पर उमी देवता के मन्दिर म जाकर जङ्गला उतरवाती हैं ।

आधुनिक जीवन में इन सस्कारों की मायता न रहने का परिणाम साक्षात् दृष्टि में रहा है—विद्यार्थी वर्ग की उच्छ्वलता, उद्वृण्डता और अनुशासित जीवन का अभाव। सुसंस्कृत जीवन में निरनुशासता का विकास नहीं हो पाता, तभी मनुष्य समाज का नुसार जीवन की साधनाएँ सम्पन्न कर के सम्पूर्ण भावी जीवन के लिये सुदृढ नींव तैयार करने में समर्थ होता है। सस्कारों की मायता न रहने के साथ-साथ भारतीय समाज में प्राथम व्यवस्था भी लुप्त हो गई। अतएव जीवन के प्रथम 25 वर्षों में भी विद्याभ्ययन में चित्त की एकाग्रता के स्थान पर सिनमा, सिगरेट, सुरा-पान आदि विषयभोगों की ओर लालापित हुई युवा पीढ़ी जीवन नष्ट करने को अभिमुख हो जाती है।

राजस्थान में यथापेचीत सम्बन्धी गीत जनेऊ, 'जनाई' और 'पाटक की डोरी' आदि नामों से गाये जाते हैं जिनमें प्रमुख विषय हैं—पचडोलिया, भिक्षा और दीक्षा के गीत। किसी गीत में बालक पढ़ने जान का आग्रह करता है, माँ बहनो के सूत कात कर जनेऊ तैयार करने का उल्लेख है तो वहीं बालक के विद्या पढ़न हेतु काशी जाते उसे माँ बहना द्वारा मोहवश रोकन का आग्रह है। इनके अतिरिक्त विवाह के अवसर पर गाय जान वाले वनड आदि गीत भी गाये जाते हैं।

'पच डोलिया' के पाँच गीत दही देवताओं के हैं जो विवाह के अवसर पर भी गाय जाते हैं।¹ य हैं —

- 1 महासती माताजी का गीत (बुलदही से सम्बन्धित)।
- 2 मावडिया प्रथवा मातृकाओं का गीत।
- 3 भरुजी का गीत।
- 4 पितरा का गीत।
- 5 अवसर के लिये मंगल कामना पूर्ण गीत।

मंगलमंत्रियों के गीतों में उनके शृंगार का चित्रण है—इन सतियों के चरित्र से पतिव्रत का आदर्श उपस्थित होता है।

उत्तर प्रदेश के भोजपुरी गीतों में यथापेचीत सम्बन्धी गीतों में अत्यधिक बहिष्कृत है। वहाँ यह सस्कार पूर्ण विधि विधान से होता है और उसमें विहित कृत्यों के प्रत्येक भाव की अभिव्यक्ति अलग अलग गीतों में हुई है, जैसे पिता द्वारा तैयारी में पलाश दण्ड लाना ब्रह्मचारी की भिक्षा याचना पुत्र के जनेऊ हेतु माता की आडम्बर पूर्ण तैयारी आदि। राजस्थानी लोक-गीतों में यद्यपि इस सस्कार का इतना विनाश रूप दृष्टि नहीं आता—फिर भी भिक्षा-दीक्षा व सूत कात कर जनेऊ तैयार करने आदि के कुछ गीतों में सुन्दर सांस्कृतिक अभिव्यक्ति हुई है। कुछ नमूने हैं—

1 देखिये पुनरुक्तों के सामाजिक गीत

(1)

“गले जनेऊ मूँज की डोरी, भेलो दादा सा भिभा हमारी ।

भिक्षा भिखारी ने सोव रे लाला धूँ म्हारे घर को दिचलो रे लाला ॥

इसी प्रकार परिवार के मन्स्यो के नाम ले ल कर गात आगे बढ़ता है ।

(2)

“हाया छडी हीरा जडी जी मूँदडी,

भँवरयो जाय बठयो दादा सा री गोव मे जी ।

दादोजी म्हा न सोना री जनेऊ री हौंस घणी जी

लका गढ़ रो सोनो मंगास्या,

म्हाका कँवरान जनेव दिलास्या जी । हाथा०

(3)

“हौंस खेल लाडू जीम रे दादिया रा प्यारा,

थान जनेऊ लिबस्या जी ।

यनापवीत के प्रश्चात् विद्यारम्भ का मुहूर्त होता है इस अवसर पर पाटी पुजवाकर मंगल गान करते हैं—सामान्यतः विवाह पर गाय जाने वाले बन गात है—कोई-कोई गीत विद्यारम्भ के भाव की व्यञ्जना वाले हैं जैसे —

“मेरो पढने को जावेगो लाल, पडित बन आग्रो जो ।

पाँच बरस को हो गयो लाल कृपा करो किरपाल

मेरो पडित बुलवाग्रो, पाटी पुजाग्रो

कुछ बक्षिणा देऊँ हाल । मेरे०

6 विवाह सम्बन्धी गीत—विवाह सम्बन्धी गीत तीन प्रकार के होते हैं—विवाह की प्रथाएँ 7 दिन पूर्व आरम्भ हो जाती हैं उस समय गणेशजी की स्थापना के पश्चात् तब हल्दी, उबटन आदि चटना भात पानना आर रातिजगा आदि आदि अनेको भागलिक कृत्य पाणिप्रहरण सस्कार तक नित्य प्रति हागे रहते हैं— इन सब प्रथाओं सम्बन्धी गीत क्या व वर पक्ष के सामान्य होते हैं । नैप गीत विषय भद स दोना पक्षो के अलग अलग होते हैं ।

विवाह के मुख्य सस्कार की ममस्त विधि क्या पक्ष के स्थान पर सम्पन्न हाती है, अग क्या पक्ष के गीता म अपेक्षाकृत बविष्य अधिक है ।

भारतीय परिवार म विवाह जीवन म सर्वाधिक हर्षोल्लास का अवसर माना जाता है । विभिन्न प्रकार के मनोरंजन म घर के सभी स्त्री पुरुषा के मन का उद्धार प्रकट हाता है । स्त्रिया के मन की उमंगें विनैप कर गा-गाकर व्यक्त होती हैं । ढोलक मजारे और भाभना की सगत म अनक प्रकार के गीत गा-गा कर व घर को रगशाला

बना देनी हैं। राजस्थान में विवाहात्मक की घूम का निराना ही रंग है। पृष्ठ 10
 तिन पूव में विनायक की स्थापना करके रंग बिरंगे गाने बनार के वस्त्र और भारी भारी
 सोन चाँदी के भाभूपणा। स सुगन्धित महिलाएँ दिन रात उमंग पूवक गीत गा-गा कर
 सारे बानावरण को रगीना कर देती हैं।

(क) सामान्य गीत—गर्व प्रथम विवाह में विनायक (गणेशजी) की स्थापना
 हानी है प्रत विनायक, विनायक और गणेशजी और धमक दीया आदि गीत गाय
 जाते हैं। रातिजगा में भी ये गीत हाने हैं। अन्य सामान्य रसमा लगन टीका तेज
 और मगार्द के गीत हैं—बनोना बनडा-बनही तन पीठी, पीठलडी उबटन हल्की
 महुनी नौना-नौन, भान मायरा बीटा, चूनडी भान यानना और रोडी पूजने के
 गान। कुछ ऐतिहासिक गीत बाधवा और घोडणी एव सटमल माधुर आदि भी राति
 जगे में गाय जाते हैं। रातिजगे में अन्य दवी-दवतामा के अनिर्दिष्ट मरामाया के गीत
 तिरा के गीत भालर धारनो साभा एव तुनसी और दातुन गान गाय जाते हैं।

बन्तुन विवाह के गाना के अनन्त प्रकार हैं और धमक्य गय्या। जमात्सव
 पर गाय जान वाली माहरें, हावरे विहार्द, बघाव तथा जच्चाया स भी वही अधिव
 राजस्थान में विवाह सम्बन्धी गीता के प्रकार और गय्या है। इन गीता में राजस्थान
 की निरक्षर नारी के हृदय का रगीना छबीलापन और उमंग काव्य प्रम प्रवट हाता
 है। इहा मंगलगानो में भारतीय सन्धृति की छाया दशनीय है।

ऊपर वर्णित सभी गीता में बर-बया के लिय मंगल कामना के साथ-साथ सभी
 सम्बन्धिया के नाम ल-लकर लाड-चाव और भावी मुक्त समृद्धि की बाधा पाई जाती
 है। तथा गीता के विषय का उल्लेख रहता है।¹ कुछ प्रतिनिधि गीत हैं —

नौना नौन—“पान सुपारी और पान का बीड़ा, तुम बई देवता नौतो लेवो।
 मल बेर्गा आइयो।
 धार धर सेवक को ब्याव, तो खरचन बरचन आइयो।
 पान सुपारी और पान का बीड़ा तुम गणना जो नौतो लेवो।
 मल बेर्गा आइयो ॥”

धारती—मिदर मे देवी देवता जागिया, जागो जागो देवन के देव कि भालर धाजो

महत्तन मे पुरोहित जागियो जागो-जागो पुरोहित का पूत कि भालर०
 राजा राम की।

1 इन सब प्रकार के गीता के नमूने दक्षिण लेखिका के राजस्थानी लोक-गीत
 खण्ड 2 में

तेल— 'सुन सुन रे जोधा रा तेली,
घाणी पीली केसर न कस्तूरी माय डालो, जायफल ने जावत्री ।
ओ तेल नयल बनी' रे भग चढ़ती ।
दमडा वारां बामो सा भर देसी लेखो वा माताजी कर लेसी ।
कोउ थारा मामी सा कर लेसी, ओ तेल नयल बनी रे भग चढ़ती ।"

पीठी— सुहाग मांगण गई अपणे माताजी के पास,
माताजी देखो नी सुहाग, भोली बनडी ने सुहाग ।
पर में न जानू यह रग कसे हो के सागा ।
लाल पीली होकर सागा, हरियाली भेडी होके सागी । पर में न जानू०

लाल-पीले रग एक हल्का कुमकुम मेहनी आदि मागलिक द्रव्या का प्रयोग और चौक पूजा आदि भारतीय सस्कृति के अभिन्न अंग हैं—विवाहादि मागलिक अवसरों में इन सब के कारण विशेष रंगीलापन और काव्यमयता की सृष्टि होती है ।

बनीला— आज बनौलो करे यौत्यो ।
आज बनौलो मारु रा ओजी रे यौत्यो ।
मारु रा ओ जी न नौत्यो मादनिजा छ मार ।
जोम म्हारो बनडा, घी गुड लापसी ।
पीय म्हारो बनडो, भसडिया रो डूध ।
मांय पतासा घोल्या, बनो म्हारा राय चम्पे रो फूल ।
बनडी म्हारी के लूँ कामठी ।

मायरा— मायरा अर्थात् भात भरना भारतीय सस्कृति की महत्वपूर्ण प्रथा है । क्या अथवा पुत्र के विवाह पर बहिन अपने भाई को यौतने जाता है पान सुपारी और पान का बीड़ा लेकर भाई अपनी सामर्थ्य अनुसार बहिन के लिये चूँदड़ वर क्या के लिये वस्त्राभूषण तथा बहिन के परिवार के सदस्या के लिये भी जाड़े आदि लेकर आता है । इन भात के गीता में भाई-बहिन के पावन प्रेम के ममस्पर्शी चित्र मिलते हैं । जिन स्त्रिया के भाई नहीं होते ऐसे अवसरों पर उनके हृदय अति व्यथित होते हैं ।

भात यौतने के गीत के बोल हैं —

“पान सुपारी पान रो विडलो मे तन रे बीरा नूतरण आई ।
राजन साथीडा वारन माई नूतरण लागी”

पूजाध प्रयोग में आने वाले मागलिक पदार्थों को लेकर यौतन आन की भावना कितनी पवित्र है ।

1 बने के तेल चढ़ाते समय बनी के स्थान पर बन कह दिया जाता है ।

मायरा—“बीरोजी झाड़जो भावज साइजो, सरदार भांजा साय साइजो जी ।
रिमझिम करता झाड़जो, म्हारे रखडी रतन जडाइजो जी ।
बीरा चुडलो हस्तो साइजो, म्हारी तिलडी पाट पोवाइजो जी ।
बीरा रिमझिम करता झाई जो ।’
इसी प्रकार भाई भतीजा के नाम ले-रा कर चुडला, हसली टीका आदि अनेक
भावपूर्ण का उल्लेख करती हैं ।

भाई के मन की उमंग का दिग्दर्शन भी ‘बीरा’ गीत के बोला म हाता है ।
भात लकर भाई बलगाडी म जा रहा है बहिन के पास पहुचने की मन म उतावली
देखिय—

‘गाडी तो रह चाली जी रन मे बीरा हो रही गगना गोठ ।
चालो म्हारा बलदा उतावला रे म्हारी जामण जोब बाट ॥
माया ने भूँवर घडाय जो बीरा रखडी रतन जडाय ।
काना ने भाला घडाय जो रे बीरा भूटणा भोल दिराय ।
मुखडा ने वेसर घडायजो बीरा रे मोतीडा पर गवाय ।
हिवडा ने हास घडाय जोरे बीरा तमण्यो पाट पुराय ।
चालो म्हारा बल्या उतावला रे म्हारी जामण जाइ जोब बाट ।
बजबां बां का घबयो चुडलो रे म्हारा भतीजा था भुगल्या टोप ।

भाई बहिन क पुनीत प्रेम का आन्तरिक हिलार जो भात के गीता म उच्छ
लिन हैं और वहाँ मिलनी ? एक गीत म भात यौतन का निमंत्रण कीवे क साथ
भजता हुई बहिन की आत्मा म छनछलाना हुआ प्रेम नारी परिवार क प्रेम का उच्चतम
आदर्श उपस्थित करता है —

“उड बापउडा म्हारा पीयर जा नूत पिपरे रा भातबी ज ।
मल यू तो रे म्हारी जलवलजामो बाप, राता देई म्हारी माय न ।
मल यू तो रे म्हारा काह कँवर सा बीर,
भया भतीजा भावजो न ।
भारत बीरा भावज न ओढ़ाय, म्हाने घणा मोसारी चूँनडी ज ।”

(ख) कन्या पक्ष के विवाह सम्बन्धी गीत — कन्या क विवाह म गाय जाने
वाले प्रमुख गीत सामान्य रूप स मुहाग प्रयवा बनडी नाम स अभिहित हान हैं
परन्तु राजस्थान म विभिन्न प्रथाआ स सम्बन्धित विविध गीतो क नाम निराल स
भावपूर्ण और सांस्कृतिक अभिव्यजना युक्त रक्ने गये हैं जैसे—तारण सामला कामण
जनी बु बरवलवा तालाटा हयलेवो चवरी फेरा सरिया रो घरम जान जिमावण

1 पूरा गीत देखिय—राजस्थानी लोक-गीत पृष्ठ 72

रा गीत मीठण पावणो तम्पोलन, काकणू डारडी माजन बधावा जुम्ना जुर्ण
।ह्याली कोपल आलू बिदायी मोजनिया, बाबावगी चाटी का गीत भलमल
और भमक दीया, जेवाई नएणोई, जीजाजी एव वायरो आदि ।

इन गीतों में यहाँ की संस्कृति और सामाजिक भावनाओं की सुंदर योजना हुई
है । किसी गीत में कन्या अपने बाबा बाबुन आदि से विनय करती है ऐसा घर
खाजना बसा नहीं कही सखिया को विवाहित देख कर अपना विवाह कराने का चाव
युक्त हुआ है । एक गीत में कहा है—

बाबा मत देइस माहवा घर कु वारी रहेस,
हाय कचोलड, सिर घडो सीचतीय भरेस ।”¹

भारतीय समाज में कन्या का बाप सदबं धर पक्ष से अपन को छोटा समझना
है यही भाव यत्र तत्र गीतों में व्यक्त हुए हैं —

“दोनों समधी बठया तखत विद्याय,
कोई कुण हारयो कुण जीत्यो जी ।

हारयो हारयो राज कुंवरी रो बाप, धण गोरी पाछ म्हे ।”

तोरण और सामेला गीत वारात की भगवानी और तारण के समय गाय
जात है । सामेला का अर्थ है सम्मेलन दोनों पक्षा का सम्मेलन कराने हेतु जनवास
में बुलाने जाना है—पुरोहित मंत्रोच्चारण के साथ सम्मेलन करता है—मंत्रिया गीत
गाती है —

हालो बघा हालो जी तोरण चाला तोरण छडी लगावो जी राज ।
हालो बघा हालो सहेला चाला सहेवे मे सब रग ल्यास्या जी राज ।
हालो बघा हालो नी माया² चाला माया में भगल मास्या जी राज ।

कन्या की माता या भाभी वर माला के समय द्वार पर धारता उतारती है उस
समय वर के गुणा का वर्णन करती हुई सहलिया बीद की धिक्की गीत गाती है ।
फिर 'कामण । कामण गीत में वर कन्या को भगवान् विष्णु व लक्ष्मी और कृष्ण
राधा का स्वरूप देकर वर्णन करते हैं । भाव यह रहता है कि अपन प्रेम के बल से
कन्या वर का वश में रहे । कुछ कामण गीतों में वारातिया का उपहास रूप हास्य
विनोद भी हा होता है ।

मण्डप में ले जाने से पूर्व वर कन्या के हाथ में हथी से जोतत है इसे हथलेवा³
कहते हैं—इस समय का गीत है—

1 ढाता मारू रा डूहा पृष्ठ 220

2 माया—विनायक स्थापना के स्थान को माया बोलते हैं—वहाँ जाने बगडी को
मत्था टकन के लिये ले जाते हैं ।

हाय जदो म्हारो सदा सहेनो राज कहेलो,
ज्यो हयलेवो जुड।

हाय नइ देऊं म्हारा सतगुरु जोसी राज,
बाबो सा ओ देख ज्यारों रो लाडसर धीयां लाज ॥

इस प्रकार भारतीय कथा की स्वाभाविक लज्जाशीलता का भय परिचय मिलता है। चँवरी मण्डप का नाम है, चँवरी फेरा' और 'सरिया रो करम गीता म मण्डप का व समस्त पाणिप्रहण प्रक्रिया का वगन हाता है। सलाक बनडे स विना करती हुई स्त्रिया कहलवाती हैं और हियाली का अर्थ पूछनी है—वगना खिलाने का गीत है—काँकड डारडी और जुप्पा जुई। जान जीमते समय गान व गीत है—कुँवर कलवा जलो सीठण पावणो तम्बोलन, तालोटा और साजन वधावा।¹ एन गीता म वारातिया से हास्य विनो की अभिव्यक्ति हुई है। महिलाएँ उलाहना की बौद्धार करने बल को कुँवर बनवा कराती हैं और वर के साथ भ्रान बाल वारातिया का अन्तक प्रकार व उपानम देती है जसे—

'कुँवर कलेवो लाडो जीम न जाए ए।
तेडो बाबाजी न जीमज बताव ए। कुँवर०'

× × × × ×
'के तो डरानी भाव जी सगा, हेमसिंह जी उमराव
भ्राज करो नो थारी धरण मोडो भवसाए ॥'

तम्बोलन गीत म 'यगपूण ढग स चित्त गुद्धि का उपदेश करत हुए भग्वान व अचतार तथा पौराणिक पुरपा का गुणगान है और भगवान् के श्रृंगार एव भोग प्रसाद प्राप्ति का आलंकारिक वरण है। शेष गीत ओलू कायल विदायी बोलावणी मोजलिया, चोनी का गीन भनमल और भनक दीया कथा की विना के समय गान व गीत हैं।

भारतवप म कथा व विवाह म विदा का दृश्य बडा मार्मिक हाता है। विश्ववन्द्य कवि कालिदास न शकुंतला की विदा व समय बीतराग त्यागी महर्षि कण्व को भी रला कर जा करण रस की निष्पत्ति की थी वस ही मार्मिक चित्र राजस्थान की कन्या व विदाई गीता आल्यू व कोयल प्रादि म मिलत है। कालिदास के अमि गान शाकुन्तल का रचना बल्लिष्य, सूक्ष्म भावविस्तारण एव परिमार्जित भाषा के विना ो इन लाक गीता म प्रकृत भावा व उद्दीनन द्वारा हृदय म करण रस की निभरिणी साहित्य हा जानी है।

एक गीत म विदा हाती हुई कथा को वन खण् की कोयल कह कर भय वल्पना और सौन्दर्यमयी भावना व्यक्त की है—

1 य सभी गीत राजस्थानी लोक गीत खण्ड 2 म लिय हुए हैं।

रा गीत मीठग पावणो तम्बोलन काकगू डारडी माजन बघावो जुआ जुई
ह्याली कोयल, ओलू बिदायी मीजलिया, बोलावणी चोटी का गीत, भलमल
और भमन दीया जेवाई नगणेई जीजाजी एव वायरो आदि ।

इन गीता म यहाँ की स्मृति और सामाजिक भावनाओं की सुन्दर यजना हुई
है । किसी गीत म क्या अपने बाबा, बाबुन आदि से वित्त करती है ऐमा वर
खोजना वसा नहा कही सखिया को विवाहित देख कर अपना विवाह करान का चाव
यक्त हुआ ह । एक गीत म कहा है—

बाबा मत देइस माहवा वर कुँवारी रहेस,
हाय कचोलड, तिर घडो सीचतीय मरेस ।¹

भारतीय समाज मे क्या का बाप सदक वर पक्ष से अपन को छोटा समझता
है यही भाव यत्र तत्र गानो म व्यक्त हुए हैं —

‘ दोनों समधी बठया तखत विद्याम,
कोई कुण हारयो कुण जीत्यो जी ।

हारयो हारयो राज कुँवारी रो बाप, घण गोरी पाछ म्हे ।²

तारण और सामला गीत बारात का अगवानी और तारण क समय गाय
जात हैं । समला का अर्थ है सम्मेलन दोना पक्षा का सम्मेलन करान हतु जनवास
म बुनान जात हैं—पुरोहित मंत्राचारण के साथ सम्मेलन क जाता है—मंत्रिया गीत
गाता हैं —

हालो बन्ना हालो जी तोरण चाला, तोरण छडो लगवो जी राज ।
हालो बन्ना हालो सहेला चाला सहेने मे सब रग ह्यास्या जी राज ।
हालो बन्ना हालो नी माया² चाला माया मे भगल हास्या जी राज ।

क्या की माता या भाभी वर माला के समय द्वार पर आरता उतारती है उस
समय वर के गुण का वणन करती हुई सहेलियाँ बीद की घिबकी गीत गाती है ।
फिर कामग ! कामग गीत म वर क्या को भगवान् विष्णु व लक्ष्मी आर कृष्ण
राधा का स्वरूप देकर वणन करते है । भाव यह रहता है कि अपन अम के बल मे
क्या वर का वश म रहे । कुछ कामग गीता म वारातिया का उपहास रूप हास्य
विनाद भी हा हुना है ।

मण्य म ल जान म पूव वर क्या के हाथ मट्टी स जाडत है दसे ह्यनवाँ
वहत है—इम समय का गीत है—

1 ढाला माण रा हूहा पृष्ठ 220

2 माया—विनायक स्थापना के स्थान का माया बोलते हैं—वहाँ बन्न-बनडी को
मत्या टवन के निय ले जात हैं ।

हाथ जदो म्हरारी सदा सहेनी, राज कहेली,
 म्हु हयलेवो जुड।

हाथ नद देऊ म्हरार सतगुरु जोमी राज,
 बाबो सा प्रो देव ज्यारारी रो साडसर धीर्या लाज ॥

इस प्रकार भारतीय कथा की स्वाभाविक लज्जाशीलता वा भव्य परिचय
 मिला है। चकरा मण्डप का नाम है चकरी 'करा,' और 'सरिया रा करम गीता
 म मण्डप का व समन पाणिग्रहण प्रक्रिया वा बगन हाता है। सतान बनडे म
 विना कानी हुई म्त्रिया कहलवानी हैं और 'हियाली' वा प्रप पूछता हैं—बगना
 विनने का गीत है—कविड, डारडी और जुभा जुड। जान जीमन ममप गान व गीत
 है—तु वर कनवा जतो सीठण पावणा, तन्वालन, तालोटा और साजन बधावा।
 इन बातों म बापतिया से हास्य विनो की अभिव्यक्ति हुई है। महिलाएँ उलाहना की
 और बरते बल को कु वर कनवा कराती हैं और वर व साय भान वाल बापतिया
 का प्रक प्रकार व उपासना देती है जैसे—

'कु वर कलेवो साडो जीम न जाए ए।
 तेरो बाबाजो न जीमज बताव ए। कु वर०'

X X X X
 'के तो डरानी धाव जो सगा, हेपसिह जो उमराव
 प्राज करो नी पारी धण भोटो भ्रवसाण।'

तमोवन गीत म 'यगपूण डग स चित्त शुद्धि वा उपदेश करत हुए भगवान्
 का प्रार तथा पौराणिक पुरुषा का गुणगान ह और भगवान् के शृंगार एव भाग
 म्प्राप्ति का प्रातकारिक वरण है। 'गप गान श्रीलू' कावल विनापी बोलावण्यी
 म्प्रीम बोटी का गीत मनमल और भयक दीया कथा की विना के समय गान
 गित है।

भारतवप म कथा व विवाह म विना वा दृश्य बडा सामिक हाता है।
 केवलन्द कवि कालिदास न शकुन्तला की विना व समय वीनराग ह्यागी महर्षि कण्व
 का भी गता वर जा कण्ण रम की निष्पत्ति की धा वम ही सामिक चित्र राजस्थान
 का कथा व विनाइ गीता प्रायू व कावल प्राप्ति म मिलन हैं। कालिदास व भ्रमि
 मान शकुन्तल का रचना वनिष्य, भूमम भावविचित्रपण एव परिमार्जिन भाषा व विना
 है। इन साक गीता म प्रवृत्त भावा व उद्दीपन द्वारा हृदय म कागग रम की निभरिणा
 प्रशान्ति हा जाना है।

एक गीत म विना हाती हुई कथा का वन सण की वीयन कह कर भव्य
 कलना और सोन्यमयी भावना व्यक्त की है—

1 य सभी गीत राजस्थानी साक-गान खण्ड 2 म लिय हुए हैं।

“धन खण्ड की ए कोयल बन खण्ड छोड़ कठ चली ।

धारी आले दिवाले गुडिया धरी, धारी साथ सहेल्यो अणमणी ॥

बन खण्ड०

धारी माऊजी धारे बिन अणमणी, धारी छोटी बनड रोव एकलडी

बन खण्ड०

धारा बीरोसा फिरे छ उदास बिलखन धारी भावजडी ॥ बन खण्ड०

इसी प्रकार के असम्य गीत हैं जिनमें मातृवास्तव्य तथा पारिवारिक स्नह की यजना द्वारा कर्णरम के साथ फूटते प्रतीत होते हैं, जिन्हें सुनने वाला का हृदय चीत्कार उठता है —

“आयो परदेसो सुबटो, सेग्यो टोली मे सूँ टाल,

कँवर भाई सिध चाली ए ।

म्हे थान पूछाँ म्हारी सूरज भाई भो,

इतरो बाबोजी रो लाड छोड'र भाई सिध चाली भो ।

आयो बागाँ रो सुबटो, सेग्यो टोली मे सूँ टाल,

कोयलडी जद बोली ए । आयो परदेसो०

विदा के समय बघावे भी गाय जाते हैं । उनमें भी क्या की विष्णु का मम स्पर्शी चित्रण रहता है साथ ही समुदाय पहुचने पर उसके समस्त परिवार के लिए मंगल कामना और सौभाग्य समृद्धि निमित्त आशीर्ष व्यक्त होने हैं ।¹

जवाई जीजोजी नणदोई आनि गीत मुकलावे पर गाये जाते हैं । इनमें प्रायः सली सलहज की ओर से हास्य विनोद रहता है । कुछ गीत जवाई के लाड प्यार में गाय जाते हैं उन्हें कूकडला सजा दी गई है ।

(ग) घर पक्ष के बिदाई सम्बन्धी गीत — घर पक्ष के गानों में इतना विविध नहीं पाया जाता । प्रारम्भिक प्रथाओं के सामान्य गीतों और मायरा के प्रति रिक्त बन्दे घोडी बछेरी सेहरा, टीका आरता, निकासी और बघावे गाये जाते हैं, एवं सुहागरात के गीतों में बीदली की छिक्की विशिष्ट है । बन्ने की पाशाक तयार करने के एक गीत में मूत कात-कात कर वस्त्र बनाने का उल्लेख है—

सोना केरा चरखला हो बना साब रसम गी गज डोर ।

मैला मे मठी कातसू र केसरिया कातूँला भीणो मूत

कात बणाऊ धारो धोतियो, बना सा हाया रो हरियो रुमाल ।

बनडा गीत के बाल हैं—

घूडला घू मर देस रा थे लाओ जी बना,

बना थान धणी जी लमा ।

1 नविये राजस्थान के लोक गीत पूर्वार्द्ध गीत संख्या 95 अन्य सब प्रकार के बिदाई गीतों के लिए राजस्थाना लोक गीत खण्ड-2 ।

दरबारां सूँ बँगले पधारो जी बना ॥ बना धान०
 धारी धानणी मे चास पद्याणी जी बना,
 करता कजली देस रा धे साधोजी बना करलारी लूँ ब बणाधो जी बना ॥
 घुडला हामी दाल रा साधो जी बना । बना धान०
 सासुडा पूरब देस रा ले साधो जी बना ।
 जानोडा धारी जोड रा साधो जी बना,

बनडी धापरी जात री साधो जी बना, बन ने घणी जी लमा ।
 मेहरा— पूँय साईं भातण स्याम सेवरा ।
 बिच मोती बिच भोगरी बागां सू मोठा धाम जनीरो,
 भोरज मोठी हाडडली ।

बारात चढ़ते समय के कुछ गीत जान भी कहलाते हैं इनमें बनडे के स्वरूप व सजावट का बखान रहता है । एव गीत में बनडे के मन की अभिव्यक्ति है—
 'बेसरियो चुल-चुलु घेर जाने म्हारी जानडली बाधो सा पधार ।'
 वर पत्र की ओर से क्या क लिय वरी ल जाने व गीत में हमारे देश की सांस्कृतिक भावनाओं की सुन्दर व्यजना है —

'मैंदी मोली नख जावतरी, तो बेसर पुषा बधायो ए,
 जान्या में वसदेव जी बडेरा, तो नदलाल जी 'बरी मेलाव ए ।'
 वषू के धाने पर भय स्वागत में गाप जान वाल बधावे क गीतो के नपूने हैं—
 "भाज दिन सोन का हुभा महाराज, भ्राज दिन सोने का उगा महाराज,
 सोने का सब दिन सोने की रात सोने के कलसे भरदये महाराज ।
 पहला बधाया सुसर घर धाया दूजा बधाया जेठ घर धाया,
 सामू ने लिया प्रांचल और महाराज ॥' भाज०

× × × × ×
 फूलां नदयो धाबडो रामा, मासण तू तिध जाय ।
 नदजी घर बधावन जी, बापली बाबरवाल ।
 बधाधो दीनालापरो हरिराम बाँधली बादनवार ॥"

(भावज द्वारा काजल डालना नग माँगना प्रारंभ और मुहागरात के गीत दखिय राजस्थानी लोक-गीत संग्रह-2)

7 अन्वेषित संस्कार के गीत—भारत के अग्र प्रान्ता की भाँति राजस्थान में भी मृत्यु के अवसर पर गा गाकर राने की प्रथा है । गाकर रीना हास्यास्पद-सा प्रतीत होता है परन्तु इन प्रथाओं के गभ में भाक कर दान से काव्य का सौम्य और भावना का समुद्र सहस्रता मिलेगा । स्थिया का हृदय इनका कामन और अनुभूति इनकी तीव्र हाती है कि मुप-नु ख आशा निराशा—प्रत्येक स्थिति में उनका मानस में कविता की उत्पत्ति और गीत की स्फुरण प्रवायास हात लगती है—मृत्यु की हृदय विचारण घटना पर भी उनकी भावना फूट कर कण्ठ से निस्सरित होन लगती है ।

डा० सत्तेन्द्र ने 'ब्रज लोक साहित्य एक अध्ययन' में ब्रज में प्रचलित मृत्यु के गीता में रदन की संगीतात्मकता का उल्लेख किया है और प० रामनरेश त्रिपाठी ने कविता कोमुनी में गुजरात, महाराष्ट्र और मद्रास के कल्याण स्तन रूप में गीता का वर्णन किया है। विदेशी विद्वानों ने भी मानिग की व्याख्या करते हुए बताया है कि रो राकर दु ख प्रगट करन की प्रथा अखिल विश्व में प्रचलित है।¹

राजस्थानी लोक-गीता में रतन राणो गीत विदेशी एलेजी के समान है। गीत की प्रथम लाइन है —

“भूहारा रतन राणा एकरतो अमराणो घोडो फेर ।

अमराणो मे बोल सुआ मोर ।”²

ऐसे विशिष्ट गीता के अतिरिक्त राजस्थान में पूरा अवस्था को प्राप्त बड़ेरा की मृत्यु पर शान्त रसके भजन आदि गाय जाते हैं। इनमें बुजुर्गों के प्रति श्रद्धा भक्ति के भाव व्यक्त होते हैं और भगवान् से कामना की जाती है कि स्वर्गत आत्मा सन्तुष्टि को प्राप्त हो। जोधपुर में इन गीता को 'पार सजा दी गई है। शरीर से प्राण निकलने पर हरजस गाते हैं जिसमें हर का हिंडोला मुख्य है —

“कठ सू आई बडेरो पालकी, कठ सू आयो विमाल ।

हर को हिंडोलो जी बेटा का नामो सग चालो ॥”

पूरे गीत में मृतक के स्नान शृंगार और पालकी में बिठा कर बेटा पाता और और सगे-सम्बन्धियों द्वारा सजा कर श्मशान ले जान और स्वर्गारोहण का सुन्दर चित्रण है। मृत्यु के तीसरे दिन अस्थि बोनने गंगा जी लेजाकर प्रवाहित करने आदि के गीत पयवारी तथा हर मुरली कहलाते हैं। पयवारी मागदवी का कहते हैं— इनमें अस्थि ले जान वाले की रक्षाय प्रार्थना की जाती है कि उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो।

पयवारी माता पय की ए रानी ।

भूखा न भोजन माता तिसिए ए पारणी ।’

लौटने पर गंगाजी की महिमा के भजन आदि गाय जाते हैं।

सस्वार सम्बन्धी गीता में सर्वाधिक भावा का भण्डार है। क्षण-क्षण के विविध भाव गीता में ऐसे धनात्मक ढंग में बंध कर घुल मिल गये हैं कि गागर में सागर की उक्ति इनमें घटित होती है।

1 मरिया लीच द्वारा रचित स्टण्डर्ड इतिहास की ऑफ फाकलार पृष्ठ 755

2 दलिये पूरा गीत—मारवाडी ग्राम गीत पृष्ठ 139-140

राजस्थान के लोक नाट्य

भारतीय नाट्य साहित्य के प्रणेता भरत मुनि न नाटक की उत्पत्ति के सम्बन्ध में नाट्य शास्त्र में जा विचार व्यक्त किया है उनमें स्पष्ट है कि नाटक की उत्पत्ति जन-भाषारण में हुई थी। उन्होंने नाटक का उद्देश्य बताते हुए लिखा है कि वह मर्षोपदेश और लोक हित के लिये ही है। मानव चरित्र का अभिनय जब साक्षात् रूप में रंग मंच पर होता है तो साधारण समझ वाला अभिनेता मनुष्य भी समझ कर मनोरंजन के साथ इससे शिक्षा ग्रहण कर सकता है। लोक जीवन में पारंपरिक और ऐतिहासिक लोक-कथाओं पर आधारित अनेक नाट्य प्रचलित हैं जिनमें से बहुत से प्रेम कथाओं के रूप में रामायणकारी ढंग से प्रस्तुत हुए हैं और अनेक निवेदन तथा भक्ति की प्रधानता लिये हुए हैं, और कुछ में प्रेमी वीरों के रूप में नायक-नायिका का चरित्र चित्रित है।

गांधीचर पुराण भगत राजा भरथरी और नरसी भगत धामि के नाटक भक्ति प्रधान हैं और सठ मुनीम दूंगे बीर, स्वामी चनी तथा जाट को स्थापन धामि में सामाजिक कथानक हैं। राजा हरिश्चर राजा नल-मयवन्ती, रवमणो भगत और पावती भगत पौराणिक कथाओं के एवं पृथ्वीराज चौहान हादी राती राजा भोज और अमरसिंह धामि ऐतिहासिक कथाओं पर रचे हुए लोक-नाट्य हैं।

राजस्थानी लोक-नाटकों की स्थापना बहुत है। यह शब्द सेन से मिलता है। इन मेंना का अभिनय सात-जीवन में श्रुति मेंना में होता है—न रंग मंच की आवश्यकता है न परदा धामि की। गाँव का कोई चौड़ा-सा मैदान देखकर तबत दान कर पत्र बिछा लिया जाता है वहाँ उनका रंग मंच है जिसके चारों ओर दानक मण्डी बँठ जाती है। अभिनय के साथ बजने वाले नगाद की ध्वनि सुनकर धाम-धाम के लोग भी इकट्ठे हो जाते हैं।

य स्थापन धारम्भ में धनल तब सेप होत हैं। पूरी-पूरी रत्न बोल जाती है न नाच और गाना बल्ल हाता है न नगारे की धामात्र। सात-नाट्यों की विषयता अभिनय में ममाद रहती है। धार्मिक एवं भाषा की धरणा सात-नाट्यों में सात-मानस की तरफ। और मन्त्री का धातक नाचना कूटना धार उद्यतता धधित रहता

है। अभिनय के साथ प्रयुक्त होने वाले वाद्य यंत्र हैं—नगारा नगारी ढोलक और सारंगी। आजकल हारमोनियम का प्रयोग भी हान लगा है। इन लाक-कलाकारों को संगीतात्मक अभिनय के लिये अपेक्षित स्वर-ताल और राग रागनिया का गान भी रहता है परंतु सारंगी और नगाड़े की ध्वनि की प्रधानता रहती है। इनके गाने और वाद्य यंत्र बजान का ढंग आधुनिक शास्त्रीय संगीत के कलाकारों से निराला होता है। ये इतने ऊँच स्वर से गाते और डके की चोट पर नगारा बजाते हैं कि कोसा दूरी तक शब्द सुनाई देता है और दूर-दूर के रास्ता चलते पथिक ख्याल से आकर्षित होकर देखने आ जाते हैं। ख्यालों के अभिनय में प्रायः माड सारठ कालिगडा आसावरी विहंगम और काफी राग रागनिया का प्रयोग होता है।¹

राजस्थान के इन ख्यालों के कथानक भी प्रायः पौराणिक गाथाओं एतिहासिक आख्याना पर आधारित होते हैं और कुछ ख्याल भक्ति-शरक शान्त रस से पूरे होने हैं अथवा प्रेम कथाओं से सम्बंधित आख्यान होते हैं। कुछ ख्यालों में अप्सरामो और परिया का आधिर्भाव होता है ता कुछ में जादू टोन का समावेश है।

यद्यपि इन लोक-नाट्यों में साहित्यिक गुणा की खोज करना वाछनीय नहीं—इनकी विशेषता तो गाने में और अभिनय में ही है फिर भी कई स्थल कभी कभी साहित्यिक दृष्टि से भी सुन्दर मिलते हैं जिनमें लोक भाषा का माधुर्य समाया हुआ है। राजस्थान का अत्यन्त लोकप्रिय ख्याल है ढाला मारू उसमें इस प्रकार के स्थल अनेकों हैं—जस मरवण के प्रति ढाले की उक्ति है —

‘नए निहार जादूगारी, तू है जादूगारी।

मानमती की चेली बए त सीखी विद्या सारी।

सत साँची जद जाणा तू कु भो उगमादे प्यारी।’

कितनी आनकारमयी साहित्यिक भाषा में प्रभावशाली उक्ति है। ढोला मरवण के अतिरिक्त नानू के और भी कई ख्याल हैं जो राजस्थान में जगह जगह सेते जाते हैं। कुछ हैं—विराट पव पूरण भगत हीर राँभा जगदव केकाली और चकवा बए। इन ख्यालों में नानू राणा ने जगह जगह अपने गुरु के प्रति आस्था प्रकट की है जस —

“भुक्त हूँ मित्या गुरु हरिदत्तजी गुरु देवा पंडित ज्ञानी।

दास जान क ज्ञान विया जद आई पिगल बानी।

घनश्यामदास श्योबक्षस राम के चरण मे सुरती ठानी।

गोमद राम की कृहा कहु, सोमा सारे जग जानी।’

राजस्थान के चिडावा की भूमि में जन्मा श्री नानू राणा यहाँ के ख्याल रचयिताओं में सर्वाधिक प्रसिद्ध है। ख्यालों की दृष्टि से श्यावावाटी की भूमि विशेष

महत्व रखती है। यहाँ पेघवर रयाल के रचयिता भी हैं जो खिलाड़ी भी र है और शोकिया भी। प्रसिद्धि प्राप्त रयाल रचयिता—रामनिमल प्रमसुख भोजक वजीर तनी और प्रहलानीराम पुराहित यही के थ। नात्रराम राणा की अपनी पार्टी थी जा जगह जगह प्रदर्शन करती फिरती थी। नात्रू जाति का मिरासी था—नगारा बजान क कारण य लाग राणा कहलाए। इह हिंदू शान्ना मस्कृति और राजस्थान की प्रचलित राक वार्ताप्रा का अर्द्धा पान था उही का प्रयोग कर इहाने ग्याल रच थ।

वजीरा के ख्याला म प्रमुख हैं—माघवानल कामकदला पन्ना वीरमद मालद हाडी रानी, मुलतान निहालद नरसीजी हरिश्चंद्र, ब्रजमुकुट और पदमावती। ख्याला क सभी रचयिताओं न अपने ख्याला म गुरु के प्रति कृतज्ञता प्रकट की है। गलावाटी म प्रमुख रूप स दो दल है—एक नान की परम्परा स दूतिया का और दूसरा जारवल नवलगढ के पास भरू राणा का। इन दाना दला न पूव परम्परा पर ही ख्याल रचना की है। कुचामण्डी ख्याल की शली लच्छीराम की चलाई हुई है पर व नृत्य, संगीत पाशाक मच सजावट और अभिनय सभी दृष्टियों स प्राधुनिक प्रवृत्ति क है। पहल कुचामण्डी नाटककार राजस्थान क समयग सभी भागा म धूमते थ परन्तु प्राधुनिकता के प्रभाव से इनका अभिनय जनता का कम पमल्ल धान लगा इमनिय धूमना बिल्कुल कम हो गया।

ख्याल खेलने का प्रम इन लाक-कलाकारा का अपना निराला होता है। ख्याल प्रारम्भ करने स पूव सब पात्र रग मच पर एत्रित हाकर गणेश वन्दना एव समान स्वर म स्तुति पाठ क साथ सरम्बली-दुर्गा की पूजा करते हैं। पूजा स्तुति क वाक का प्रारम्भिक नायकम भी सब ख्याला का नियत होता है—सबप्रथम अभिनता महतर के रूप म आकर गायन क साथ सफाई करता है दूसरा भिज्ती बनकर छिडकाव का अभिनय करता है। फिर एक हलकारा घाता है तदनन्तर ख्याल का प्रधान नायक प्रवण करक अपना परिचय देता है और नाटक प्रारम्भ हा जाता है। अभिनयकर्ता स्त्री पुण्य दाता गन हैं। ख्याल म गद्य वार्तालाप नहीं होता सब पात्रो क वार्तालाप गय हान है।

राजस्थान म वीर पूजा की भावना क छातक यहाँ के नर सिंहा की यश गाथा गाने वाले ख्याल भी प्रचुर मख्या म पाय जते हैं। इस प्रकार के घाडी वीर क चरित्र पर बने हुए ख्याला म हुलला धागे दयाराम घाडवी बलजी भूरजा धनि क ख्याल प्रसिद्ध हैं। साक जीवन म प्रथी वीरा का भी कम सम्मान नहू है। प्रम कथाप्रा म नायक-नायिका का प्रम रोमाचकारी ढग स प्रस्तुत किया गया है। बहुत स ख्याला का कथानक यहाँ की लोक प्रचलित कथाप्रा पर आधारित हाना है जिनम कई पात्र ऐतिहासिक भी होत हैं। गिसानू बजाने पनण सहजागे सोनगर वजीरजागे नला मजत्रू, दोना मरवण, हीर राभा पन्ना वीरमन् मुन्नाम मिकुमाद भात्र भानमनी और सींका धावक धानि ख्याला की प्रम कथाएँ हैं जा विशालक के धरुण हैं।

इन लाकू-नाटयों के प्रदर्शन का मुख्य अवसर होली है परंतु अथ उत्सवों के अवसर पर भी ये आयोजित कर लिये जाते हैं। बीकानेर और जोधपुर में हनुमानजी के मंदिरों में द्विद्वार मेरीका तथा अथ ह्याल रात भर अभिनय के साथ गाये जाते हैं। विवाहादि उत्सवों पर भी ह्याल मण्डलिया को आमंत्रित कर लिया जाता है। व्यावसायिक नाट्य मण्डलिया जीविकोपार्जन अथवा मनोरंजन के लिये ह्याल खेलने हंतु इधर उधर गाँव-गाँव में प्रदर्शन करती फिरा करती हैं। प्राचीन काल में जब सिनेमा आदि का प्रचलन नहीं था तब यही नाट्य प्रदर्शन और नाचना कूना लोक जीवन में मनोरंजन का साधन बन हुए थे।

राजस्थान के दूर-दूर भागों में जहाँ मनोरंजन के आधुनिक साधन चित्रपट आदि नहीं पहुँचे हैं, रंग रास के यँ ढंग अब तक सांस्कृतिक और सामाजिक शिक्षा का साधन बन हुए हैं।

राजस्थान के ये नाट्य गीत राज्य के इतिहास के निर्माण में बड़े सहायक सिद्ध हुए हैं। 440 वर्षों से अधिक तक की सांस्कृतिक और सामाजिक परम्पराएँ ह्याला में स्थापित की हैं। यहाँ के प्रायः ह्याला की सूची बीकानेर जोधपुर विशनगड, जयपुर बम्बई और मथुरा में प्रकाशित हो चुकी है। श्री भगरबन्जी नाहटा ने नाक-बला निवधावली में प्रकाशित अपने एक महत्त्वपूर्ण लेख में इन ह्याला का विवरण दिया है। नाक का शीपक है— ह्याला की पूर्व परम्परा। श्री नाहटाजी ने अत्यधिक अथ पूर्वक राजस्थानी ह्याला की शोध और संकलन का कार्य किया है उनके निजी अथ नाक—अथ जन अथालय बीकानेर में २४ ह्याल संग्रहित हैं। राजस्थान के ह्याला की संख्या अपरिमित है। जसलमेर, बलकंठा और काशी आदि ह्यालों में भी यहाँ क बहुत से ह्याल पुटकर रूप में प्रकाशित हो चुके हैं। राजस्थान से प्रकाशित शोध सम्बन्धी पत्रिकाओं में भी समय-समय पर ह्याल प्रकाशित होते रहते हैं।

चित्रपट के अत्यधिक प्रचार से आधुनिक जीवन में लोक नाट्य का प्रचलन और अभिनय लोप होता जा रहा है वस्तुतः मनोरंजन के यही जीवित साधन लाकू हितकारी और सर्वोपदेशक हैं जिनमें जन मानस पर कोई दूषित प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं बल्कि लाकू-बला की ये उपलब्धि अथ जन मानस में सांस्कृतिक भावनाओं की मृष्टि करके जीवन का उत्साह एवं उल्लासमयता की ओर अभिमुख करती हैं।

रममें—राजस्थान के लोक नाटयों का एक छोटा रूप रममें है। प्राचीन काल में बीकानेर में जुधने वाले कवि समाज से ही ऐतिहासिक और धार्मिक चरित्रों पर काव्य रचना होने लगी और रंग मंच पर उनका अभिनय हान लगा जा रममें कहलाई। राजस्थानी भाषा में रमना शब्द का अथ भी खेलना है अथ रमना धातु में सना रूप में रममें बन गया—इसका अथ भी ह्याल की भाँति खेल ही है तथा इनकी प्रदर्शन पद्धति भी पीछे बखित ह्याला जसा है। रममेंता की रचना के विषय में वही पौराणिक ऐतिहासिक और अथ कथाओं पर आधारित हाने हैं। हाँ, शेखावाटी और कुचामणी के ह्यालों में रममेंता की रचना शला कुछ भिन्न होती है।

1 रम्मत रचना का मुख्य क्षेत्र बीकानेर है।

श्री मनीराम व्यास तुलसीराम, फायू महाराज और सुभा महाराज रम्मत का प्रमुख रचयिता हैं जिनकी लिखी हुई उल्लेखनीय रम्मत हैं—टिडाऊ मरीकी रम्मत भ्रमरसिंह की रम्मत और सगमेरी की रम्मत—ग्रन्थ छोटा म भी कुछ रम्मत लिखी गई पर समय के प्रवाह म नाम और रूप म कुछ भ्रं हाता गया जस पोकरण और फानी म रम्मत के स्थान पर तमाशा बालन लगे। जसलमर के तज कवि और पोकरण ने श्री रामानन्द इस प्रकार क कई तमाशा और रम्मत की रचना की। जमलमर म रम्मत प्रचलित हैं—हू गजी जवारजी पूरन भगत, मारध्वज हरिश्चन्द गापीच और भ्रमरसिंह राठीड।

बीकानेर म रम्मत के खिलाडी थे स्व० श्री रामगोपाल मोहता श्री सईमवक श्री गगानस सवक श्री मूरजकरण सवक और श्री जीतमल। रम्मत की सगत म ग्रन्थ नगाडा वादका म श्री गीडाजी का नाम उल्लेखनीय है।

रम्मत म ग्याल की अपेक्षा उल्लेखनीय भद इतना दृष्टि आता है कि रयाला म प्रारम्भ से अन्त तक कथा-सूत्र चलता है सूत्र की समाप्ति पर रयाल भी समाप्त हो जाता है, जबकि रम्मत म विषय भिन्न रहते हैं। ग्याला म कथानक की प्रधानता रहती है रम्मत म नहीं। बीकानेर और जसलमर म प्रबुर सख्या म ग्याल और रम्मत लिखी गई।

पवाडे—लोक नाटया का तीसरा रूप है पवाड। पवाड एक प्रकार म कथा गीत है जिह गा गा कर ग्याला की भांति प्राय अभिनय भी किया जाता ह। पवाडा की कथा-वस्तु सामान्यत एतिहासिक हाती है यदि एतिहासिक न हो तब भी कथानक का बिन्दु सूत्र अवश्य एतिहासिक हाता है—इनम किसी बीर का चरित्र रहता है।

भारत की विभिन्न भाषाभा म पवाडा क विभिन्न नाम है। ब्रजभाषा म पमार मासवा तथा राजस्थान म पवाडा उत्तर प्रदेश म पवाडा है। महाराष्ट्र म पवाडा अथवा पोवाडा कहते हैं और गुजरात म 'पवाडा शब्द का हा प्रयोग है। पजाब म पवाडा काव्य का 'वार कहा जाता है जिसकी व्युत्पत्ति सन्देह क कतिक श स मानी जाती है। बंगाली म इस काव्य को गाथा और काथा कहा जाता है। कन्नड भाषा म पवाड क लिय लावानी का प्रयाग मिलता है। तातय यह है कि ताक-नाटया का यह रूप मभी जगह प्रचलित है नाम का भेद है। डा० सत्येन्द्र न भान शोध ग्रन्थ ब्रजलोक साहित्य एक अध्ययन म लिखा है कि पवा* क य सब अथ प्रयाग क आधार पर निकाल हुए हैं। इन गाता म पहल पमार क्षत्रियो की बीर गाथाएँ गाई जानी हागी इमलिय पवार कहताएँ।

1 ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन—पृ० 368

महाराष्ट्री पत्रिका (अक्टूबर 56) में प्रकाशित श्रीमती उषादेवी मलहात्रा के लेख में राजस्थानी पवाड़े का वर्गीकरण निम्नलिखित रूप में किया है —

(1) वीर कथात्मक (2) रोमांच कथात्मक, (-) योग कथात्मक और (4) प्रेम कथात्मक ।

प्रथम श्रेणी में पावूजी और गागाजी के पवाड़े आते हैं द्वितीय में निहामंद सुनतान का और तृतीय श्रेणी में गापीचंद भरथरी आदि का । चतुर्थ श्रेणी में ढोला मारू का पवाड़ा आता है ।

पवाड़ की सजना का इतिहास इस प्रकार है कि किसी धार्मिक काम के अवसर पर घटित घटना के आधार पर किसी चरित्र को चिरस्मरणीय बनाने के लिये जन-समूह एकत्र हो जाता था । उसके जीवन के इन महत्त्वपूर्ण अवसरों पर नाचते गाने गए लाग देवता के समान अमर कृत्यों का काय रूप में गूँथना आरम्भ कर देते थे—धीरे धीरे एक ऐसे काय का निर्माण हो जाता था जिस पवाड़ा सजा मिनी । परन्तु उम आदि युग के मानव के पास लिखने की क्षमता नहीं थी । य वस्तुतः निरक्षर जनता की सम्पत्ति थी जिस अपनी स्मरण शक्ति पर विश्वास था अतः य पवाड़ मौखिक रूप में ही विद्यमान रहते थे । धीरे धीरे बणमाला की मृष्टि के साथ-साथ साहित्य की रचना होने पर पवाड़ा पर भी साहित्य का प्रभाव पड़ा और उनके निर्माण में भेद उत्पन्न होने लगा अर्थात् ख्यालों के रूप में रचे जाकर लोक-नाटयों की भाँति इनका अभिनय ज्ञान लगा ।

उपयुक्त तीन विधायाँ क अनिश्चित भरतपुर के रासघारी और चित्तौड़ की तुरी कलगी नृत्य कला भी लोक नाटय श्रेणी में आती हैं ।

भगवान् कृष्ण की लीलायाँ का प्रश्न करने वाले नृत्यकार रासघारी कहलाए किन्तु कालान्तर में य लाग अर्थ विषय भी अपनाते लगे । रासघारियाँ के सब ख्याल का ही रूप है परन्तु इनके नृत्य राजस्थान में प्रचलित अन्य ख्याला से कुछ उच्च कोटि के होते हैं । रासघारियाँ क नाटक अधिकतर धार्मिक होते हैं जस रास लीला राम लीला चन्द्रावल, काम गूजरी हरिश्चन्द्र नागजी और मारुध्वज आदि ।

भरतपुर अलवर वरोली और धौलपुर क्षेत्र में इन कथायाँ पर रसियाँ गा गी वर नृत्य का अभिनय किया जाता है जैसे — रानी तन जुलम कर डारी बन में भेजिये श्रीराम । रामघारियाँ का काम गूजरी अभिनय बड़ा चित्तकपक होता है ।

राजस्थान के प्रत्येक भाग में गूजर जाति कृष्ण का वंश धारण किया अपनी भाषा में राधा कृष्ण के इनके गान का ढंग भी गीत गा गा कर या कुछ पम पाकर ही गीत गा जाता है ।

चित्तौड़ का तुरी कलगी नृत्य—लगभग 400 वष पूर्व शाह झली और मुमुन गिरि दो मन हुए जिन्होंने तुरी कलगी मत चलाया। यह मत शिव और शक्ति का प्रतीक था। शिव पावता के दर्शन की प्राप्ति के लिये काव्य प्रतियोगिता प्रयत्न दंगल के रूप में शिव और पावती के भक्त अलग-अलग काव्य के द्वारा दार्शनिक समस्याएँ हल करने का प्रयास करते थे—इससे नृत्य नाटक की सजना हुई और उस तुरी कलगी नाम दलिया गया। यह मत उन लोगों राजस्थान और मध्य भारत की सीमा पर बहुत प्रचलित था उसी से अद्य कई नृत्य-नाटक की गायन शैली निकली।

प्रिय महाशय न जो पद्धति लोक-गीत रचना की बनाइ है तुरी कलगी गीत की रचना उसी प्रकार प्रायु कवि द्वारा रची हुई कविता की भाँति हाती है—अर्थात् रचा गीता के आधार पर सामूहिक गीत (कम्पूनल सोंग) रचना की प्रक्रिया मानी गई होगी। मण्दली में स एक व्यक्ति उचय में आकर एक लाइन खडा होकर वाक्यता है—उसी के अनुसर दूसरा और तीसरा बोलता जाता है। तुरी कलगी गीत में पुरप गीत की कडियाँ को बोलता है स्त्री उसे पूरा करती है। इस दंग के गीत स्त्री पुरपा द्वारा सम्मिलित रूप से गाय जाने वाले गीता की श्रेणी में आते हैं।

अथ लोक नाट्यों की प्रपक्षा इस म्यान के अभिनय में निम्नलिखित विषयों हैं —

(1) तुरी कलगी गीत के अभिनेताओं की प्रवृत्ति व्यावसायिक नहीं होती। गीत से मनोरंजन हेतु गात नाचते हैं काइ उपहार रूप प्रम से भेंट द दे तो स्वीकार करते हैं।

(2) इनके मंच की सजावट अथ म्याल अभिनेताओं की प्रपक्षा आरम्भर पूरा हाती है।

(3) कर्मा में सांगी हाती है परन्तु अभिनय और नृत्य में काव्यात्मक गीत की प्रधानता रहनी है।

लोक-नाट्य के य सभी रूप लोक-जीवन की सरलता स्वाभाविकता, आरम्भर विहीनता और मासुहिक भावनाओं की उच्चता के धारक हैं। सामाजिक युग में जहाँ जीवन-यापन के अनेक सुख साधन उपलब्ध होने से मनुष्य की सुख समृद्धियाँ बढ़ी हैं वहाँ चित्रपट आदि के धारणिक प्रचलन में मानव मस्तिष्क मनोरंजन के इन प्रशुन गायना में दूर हट कर अपने ईश्वर प्रपक्ष कलात्मक प्रतिभाओं को खाने के माध-माध जीवन में मासुहिक वृत्तियों का एन्द्रिक भोगों में परिणत करने लगा। जन जीवन में व्याप्त इन लाल-कलाओं का साज द्वारा पुनर्जीवित करना समाज और राष्ट्र के स्वस्थ निर्माण के निचे अनिहित है।

लोक साहित्य के कुछ अन्वेषक एवं समीक्षक

लाक शब्द अत्यन्त व्यापक अर्थ रखता है यह ब्रह्म की तरह अनन्त अन्तर और असीम है एवं जन का पर्याय है। जिस साहित्य में इस अभिजात्य सत्कार रहित आत्मि मानव की स्वतः प्ररित अभिव्यक्ति हो वह लाक साहित्य नाम से अभिहित होता है। साहित्य जीवन का प्रतिबिम्ब है। वास्तव में जीवन की विविध अवस्थाओं तथा अनुभवा का मनुष्य की भाषा में चित्रण साहित्य में होता है। लाक साहित्य इस काम के प्रतिपादन में सर्वश्रेष्ठ स्थान पर आसीन है। क्योंकि लाक साहित्य में मानव हृदय का यथार्थ चित्र हमारे समक्ष उपस्थित हो जाता है। जीवन के निश्चय और स्वाभाविक रूप का दर्शन हम लाक साहित्य में ही होता है। शिष्ट साहित्य में चित्रण प्रायः काल्पनिक एवं अतिरजित पाया जाता है। उन्मत्त विशाल मानव समाज के बहुत थोड़े से व्यक्तियों के जीवन की विशिष्टतापरक भाँकी मिन सक्ती है परन्तु लाक साहित्य अधिकाधिक जन समाज की भावनाओं का वास्तविक प्रतिनिधित्व करता है। अतः अश्वण्ड मानव समाज की एकता का परिचय जितना सुन्दर हम लाक साहित्य में मिलना है उतना अर्थ सम्भव नहीं। इसमें ऐसा प्रतीत होता है कि विश्व भर में सबत्र मानव का एक जसा हृदय बाल रहा है। अतः यह साहित्य मानवीय स्नह की एकता का द्योतक है। जातीय जीवन में हमारे इस साहित्य का अत्यधिक मूल्य है। विश्व कवि रविद्रनाथ टगोर ने लिखा है कि जिस प्रकार शिशु प्रकृति की सृष्टि है किन्तु वयस्क मानव अधिकतर स्वयं अपनी रचना है। इसी प्रकार लाक साहित्य भी शिशु साहित्य है, मानव मन में उसका स्वतः जन्म हुआ है। लाक साहित्य में भी लाक-गीत जन मानस में प्रवाहित भाव लहरी की सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वाधिक प्रभावशाली अभिव्यक्ति है। राजस्थान में एक कहावत 'गीतडा अरके भीतडा' अर्थात् चिरकान तक रचने वाले गीत हैं अथवा भीत है। पुराने मकानों की भाँति हमारे ये गीत पुस्तक दर-पुस्तक चले आते हैं।

आदिम मानव के हृदय की भावनाओं का भण्डार अपनी सजीवना शक्ति के बल पर जीवित एक हृदय से दूसरे हृदय में प्रवाहित सातस्विनी रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी चला आ रहा है।

राजस्थान के लोक-गीता में अथ लोक साहित्य की भाँति भावा की अभिव्यक्ति अपना विषय स्थान रखती है। यहाँ के विभिन्न गीता में मानव व प्रत्येक हृदयगत भाव का सूक्ष्म चित्रण हुआ है। मिलन और विरह हास्य और रुदन रोप भय घृणा का धार वीरता वदना और वरग्य प्राणि सार भावा का विस्तारण हमारे ग्राम गीता में मम्यत् रूपण हुआ है।

जीवन के प्रत्येक पहलू पर गीत गा-गा कर मानव व भावा का उमूलन हाता है। लोक गीत भाव ही भाव है और कुछ नहीं। पारिवारिक और सामाजिक जीवन परिस्थितियाँ हृष शाक विषाण पीडा भय और कष्टा व भावा का प्रवट करन के लिय लोक-गीता का जन्म देती रही हैं। सम्भता व धावरण म मनुष्य सवाचवश अपन प्रवृत्त भावा का ज्या के त्या प्रवट करन म सजान लगा अत गिन चुन प्रतिभाजन व्यक्तिया का ही भावाभिव्यक्ति का अधिकार रह गया जो समाज म साहित्यकार कहलान का दावा रखन सगे। पर लोक गीता द्वारा अभिव्यक्ति पर मानव मात्र का अधिकार है। प्रादिम मनुष्य हृदय के गानो का नाम ही लोक गीत ह।

लोक-कला की प्रारम्भ घरती स जुडी है। लोक गीत हो, लोक नृत्य अथवा लोक कहानी हा अथवा लोक नाट्य परम्परागत मूर्ति कला हो अथवा चित्र कला इनकी रूपरेखा म घरती की गथ आयगी। यही कारण है कि लोक कला एकप्रान्तीय अथवा एकदेशीय न होकर सदा विश्व-पापी वस्तु के रूप म जीवित रही है। भाषा और शरीरगत भेद व कारण भले ही लोक कला व बाह्य रूप म भेद म उपस्थित हो जाय, परन्तु रस भाव प्रादि की दृष्टि स उसम समस्त मूर्ष्टि के साथ एकस्वरता रहती है। सामाजिक व भौगोलिक परिस्थितियो के कारण भेद होते हुए भी गीतों की अत रात्मा एक ही है। गाँव गाँव और घर घर म विचरण करने गीत सप्रह्वतभाषा का अनुभव है कि भारत व प्रत्येक प्रात म घर के भीतर गाय जान वाल गीता का सुनन स प्रतीत होता है माना एक ही आत्मा निम्न निम्न भाषाओं म बोल रही है। मानव हृदय सबत्र समान है। यति रचित जातीय एव सामाजिक भेद भाव लोक हृदय म भण उत्पन्न नहीं कर पाते। लोक गीत मानवीय भावनास्रा इच्छास्रा और प्राकाशास्रा के स्वाभाविक प्रकाशन माय हैं। इसी कारण ससार भर व लोक साहित्य म सबत्र एक ही अन्तरधारा बहती हुई दृष्टिगोचर होती है। डा० बन्हेया लाल मटल व श्याम कया कहानियाँ कया कहाषतें और कया लोक गीत सभी पर यह बात समान रूप म लागू हाती है। अनेक गात ससार के अलग अलग भागा व होते हुए भी शब्द मिलने हुए पाय जाते है। भारत व अयाय प्रान्ता—विनेपकर गुजरात और उत्तर प्रदेश के गीता व साथ राजस्थानी गीता म अत्यधिक साम्य है ही—इ गलण्ड तक व गीता म भावगत समानता पायी गयी है उदाहरण स्वरूप प्रयसी की समाचार भजत हुए वियोगी पनि एवम् पत्नी की आर स पनि व सवादात्मक गीता व अथ दिय जात हैं—

—दृशण्ड का गीत—प्रमी पति एक पत्नी से कहता ह—

“Will is me my gay gashawk that you can speak and see
For you can carry a love letter to my true lover from me

× × × ×

“How can I carry a letter to her or how should I her know
I bear a tongue that never talked with her and eyes that
never saw her shape

राजस्थानी गीत —

“उड़ ज्या रे काग गिगन का बासी, खबर तो साब म्हारे राजन की ।”
नाँव नहीं जाएँ मैं तो गाँव नहीं जानूँ सूरत न जाएँ धारे राजन की ।
नाँव बतास्याँ, गाँव बतास्याँ, सूरत बतास्याँ म्हारे राजन की ।
सीली-सीली नाक फिरगी को नोकर, चाल चले उमरावाँ की ॥’

× × × ×

‘उड़ ज्या रे काग गिगन का बासी खबर तो स्याब म्हारी गोरी की ।
नाँव नहीं जाएँ मैं तो गाँव नहीं जाएँ सूरत ना जाएँ धारो गोरी की ॥

इसी प्रकार अय देशा के लोक गीता की तुलना करने पर विन्ति हाता है कि फ्रांस, जर्मनी, स्पेन, रूस यूगोस्लाविया और बुल्गेरिया आदि सब स्थाना क गीता म भाव शैली और विषय सम्बन्धी साम्य पर्याप्त मात्रा म पाया जाता है । जातीय हृदय की उथल-पथल दुःख सुख सयोग वियोग आदि की भावनाएँ विभिन्न अवसर पर गाय जान वाले गीता म व्यक्त हुई है । देश का सच्चा इतिहास और उसका नतिक एव सामाजिक आदर्श इन गीता म सुरक्षित है ।

जीवन रस जिसस धलक रहा हा वही ता सच्चा साहित्य है फिर लोक साहित्य और विनयतया लोक-गीता म तो प्रत्येक हृदय का रस स प्लावित करने की क्षमता ह । जब लोक मानस आनन्द स गद्गद हो उठता हा या वरना का सात बहन लगता हा, लोक-गीत की महती परम्परा बलवती हा उठनी है । रस का यही अजस्र पवाह लोक-गीत का अन्श ह । स्वर पुहार है और शब्द जल है । डा० धीरेन्द्र वर्मा ने ग्रामाण तथा नागरिक परम्परा का सम्बन्ध दूध और उसका ऊपर मलाई की तरह जसा बताया है । किसी देश की सन्धृति तथा साहित्य तब तक पूरा नहा कहा जा सकता जब तक लोक साहित्य स परिचय प्राप्त नहीं किया जाय । आप लिखत हैं श्रीमती तर्क हम भारतीय नागरिक केवल मलाई का स्वाद लेते रहत है पूरा मृत्ति और स्वाद क लिय मलाई सहित कटारा भर दूध होना चाहिए ।¹

1 परिचय ब्रजलोक साहित्य (डा० धीरेन्द्र वर्मा)

लोक साहित्य के कुछ अव्ययक एक समीक्षक

विदेशों में लोक साहित्य का नृशास्त्र, समाज शास्त्र भाषा शास्त्र इतिहास मनाविज्ञान और पुरातत्व से घनिष्ठ सम्बन्ध माना जाता है। यूरोप के प्रत्येक छाटे-बड़े राष्ट्र की अपनी लोक साहित्य परिष्कार है। इनके अव्ययक और विद्वानों ने इस दिशा में महान् कार्य किया है।

भारतवर्ष में भी इनका विद्वाना एवं मस्याघा के माध्यम से साहित्य का अनुसंधान होना रहा है। जन जीवन में व्याप्त इस प्रकृत साहित्य की धतुन राशि की खोज कर-कर के देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में पीएच डी की डिग्री हेतु शोध ग्रन्थ लिख जा चुके हैं। प० राम नरेश त्रिपाठी ने दस वर्षों तक गाँवों में भ्रमण कर के व उत्तर प्रदेश के भौतीय लोक गाथा का सराहनीय संग्रह किया जो उनकी कविता कीर्तियों के चतुर्थ-पंचम भागों में प्रकाशित हुआ। फिर गीता के धनी देवेन्द्र सत्यार्थी ने 25 वर्षों के अव्यय परिष्कार से हिन्दी क्षेत्रीय लोक गीता का अपनी पुस्तिका (1) धरती गायी है (2) धीरे-बहो गगा (3) बेला पूने प्राची रात (4) और बाजत आवे डोल में प्रस्तुत करके भारत की इस अमूल्य धाती का महत्त्व प्रस्थापित किया।

इसी प्रकार लोक साहित्य के पारसी विद्वान श्री कृष्णादेव उपाध्याय, डॉ० सत्येंद्र तथा श्याम परमार आदि महानुभावों ने लोक साहित्य के विभिन्न पक्षा का लक्ष्य शाधपूर्ण विवेचना की है। डॉ० सत्येंद्र का पीएच डी हेतु प्रस्तुत शोधग्रन्थ ता ब्रज लोक साहित्य एक अध्ययन' है ही। नत्पश्चात् उनकी बहुमुल्यी सजना प्रवृत्ति में लोक साहित्य का ही मुख्य रूप से अध्ययन और रचना का विषय बनाकर विविध विषयक अमूल्य ग्रन्थ लोक साहित्य का भेंट निय है। अपनी समीक्षात्मक रचनाएँ हैं— लोक साहित्य विज्ञान, 'लोक-संस्कृति, लोक साहित्य का तात्विक अध्ययन, और लोक वार्ता की पगडण्डियाँ। लोक साहित्य के तात्विक अध्ययन की दिशा में अग्रसर इन अनुभव उपलब्धियों के आधार पर डॉ० सत्येंद्र लोक साहित्य के अन्वेषकों की उपायों से विभूषित हुए हैं।

इन समीक्षात्मक एवं तात्विक अध्ययन सम्बन्धी रचनाओं के अतिरिक्त आपक ब्रज की लोक संस्कृति तथा ब्रज की लोक कहानियाँ आदि ग्रन्थ भी प्रकाशित हो चुके हैं। निजी रचनाओं के साथ डॉ० सत्येंद्र के शिष्य मण्डल ने आप से प्रेरणा ल कर आपक भाग दशन में लोक साहित्य पर कई शाध ग्रन्थ तयार कर लिए हैं। डॉक्टर साहब की पुत्र वधू डॉ० शारदा सत्येंद्र ने आप के भाग दशन में राजस्थान के लोक दत्ता गोमाजी पर जाहूर पीर गुरु गुणा 'शोधक शाध ग्रन्थ तयार किया है।

डॉ० कृष्णादेव उपाध्याय ने भोजपुरी लोक गीत तथा डॉ० श्याम परमार का भारतीय लोक साहित्य' लोक साहित्य पर प्रामाणिक उपलब्धि है। इसी प्रकार मेघाणीजी ने गुजराती भाषा क्षेत्र के लोक साहित्य पर स्तुत्य अनुसंधानात्मक अध्ययन एवं गीता का मकलन प्रस्तुत किया है।

डा० श्याम परमार एवं डॉ० चिन्तामणि उपाध्याय के मानवी लोक-गीत भी इसी श्रेणी के हैं। पिछले लगभग दो दशकों में विद्वानों का ध्यान अपने देश की अपनी लोक साहित्य पर अध्ययन करने की ओर अधिक जा रहा है। इस अवधि में अनेक विद्वानों लोक साहित्य अनुसंधान में रत हुए हैं। श्रीमता मोना देवी मयलानी एवं सीला प्रभाकर की धूलधूसरित मणियाँ श्री कृष्णलाल वर्मा का सुन्दर खण्डक लोक गीत डॉ० सत्यव्रत सिंह की भोजपुरी लोक गायिका प्रा० श्रीचन्द्र जन का मध्य प्रदेश के लोक गीत, श्री राम इकबाल सिंह के महिला लोक गीत डा० चिन्तामणि उपाध्याय का लोकगीत एवं डॉ० कुन्ददीप का लोक-गीतों का विज्ञानात्मक अध्ययन आदि रचनाएँ इस तथ्य की द्योतक हैं कि भारतीय स्तर के लोक साहित्य पर महत्वपूर्ण शोध एवं समीक्षात्मक कार्य हो रहा है।

राजस्थान की कई राजकीय तथा अर्धराजकीय मस्याएँ इस प्रकार के शोध कार्य में रत हैं जिनमें निम्नलिखित नाम उल्लेखनीय हैं —

- 1 राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
- 2 साद्वान राजस्थानी रिसर्च इंस्टीट्यूट बीकानेर।
- 3 राजस्थान संगीत नाटक अकादमी जोधपुर।
- 4 भारतीय लोक-कला मण्डल उज्जैन।
- 5 राजस्थान विद्या पीठ उदयपुर।
- 6 राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर।
- 7 भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान बीकानेर।

उपरोक्त मस्थानों के प्रतिरिक्त राजस्थानी लोक साहित्य की विशेषकर लोक गीतों पर अत्यंत रूप से जिन विद्वानों ने खोज पूर्वक प्रचुर सामग्री संचित की है उनमें मेरे स्मृति पथ में आने वाले निम्नलिखित नाम उल्लेखनीय हैं।

जन साधु-साध्वियों सदा से लोक जीवन से गाढ़ सम्पर्क रखते आये हैं। शिष्ट साहित्य में प्रयुक्त विविध छंदों की भाँति जन साधु ललकों की रचानाओं में विविध ढाल (तज) रहता था और गीत का नाम और पंक्ति देखकर उनका निर्देश किया जाता था। इन उल्लेखों और उदाहरणों से गीतों की प्राचीनता और प्राचीन रूपों पर प्रकाश पड़ने के साथ-साथ सकल विस्मृत गीतों का भी पता चल जाता था।

राजस्थानी लोक साहित्य पर इन जन विद्वानों और कवियों का महान् उपकार है। राजस्थान के गुप्रसिद्ध धुर धर विद्वान श्रीअगरचन्द्र नाहटा ने उस प्रकार के प्राचीन गीतों की खोज का स्तुत्य कार्य किया है। उनके द्वारा एवं अन्य कई जन विद्वानों के द्वारा लगभग ढाई हजार दशियाँ और ढालों का मकलन किया गया है।¹

राजस्थान में जिन प्रकार भाषा सम्बन्धी कार्य टिप्पणी आदि महानुभावों ने किया है इसी प्रकार लोक साहित्य के विभिन्न पंथों पर पिछले कुछ वर्षों में सराहनीय

1 विस्तृत विवरण देखिये 'राजस्थानी लोक गीत' शोध ग्रन्थ पृष्ठ 41-45।

लोक साहित्य के कुछ अन्वेषक एवं समीक्षक

शाय काय हुमा। अनका विद्वाना न राजस्थानी लाक कथा कहावत और लाक गाता पर लोज करके संकलन प्रकाशित करवाय और अन्नकाशित सामग्री का तो और धार हो नही। मैं राजस्थानी लाक-गीता क अध्ययन की अवधि म त्वा कि मुप्रसिद्ध लाक साहित्य क क्षेत्र म विधि पूवक काय करन वाला क अतिरिक्त भी अनक लाक सस्कृति क प्रभी विद्वान मौनरूप म अपन अपन क्षेत्रा म लाक साहित्य की खाज एवं संकलन म रत हैं, जिनका उल्लेख मन अपन शोध ग्रंथ राजस्थानी लाक गीत "की भूमिका म किया है।

1 श्री नरोत्तम दास स्वामी स्वर्गीय डा० रामसिंह और स्वर्गीय सूप करण पागल क सामूहिक प्रयासा स सकलित राजस्थान क लाक-गात 2 भागा म प्रकाशित। क्यावृद्ध शिक्षा शास्त्री एवं विद्वान श्री स्वामीजी लोक गाता क संकलन भ्राति का और भी स्मृतन काय करते रह है जा आपक शान्ति आश्रम नामक प्रयालय बीकानर म उपलब्ध है। लेखिका का राजस्थानी गीता पर शाय काय भी आप के ही निर्देशन म हुमा।

2 बीकानर क ही स्वर्गीय मुरलीधर व्यास क थी बन्नी प्रसाद काकरिया न कहावता और मुहावरो का विनिष्ट सष्ट किया। श्री मानन लाज पुराहित और श्री दीनदयाल श्रोभा न जसलमर के लोक साहित्य पर विनोप रूप स काय किया। श्री पुराहित और व्यास जी की घूमर पुस्तक और श्रीश्रोभा की राजस्थान की गणगीर इनक लाक साहित्य प्रेम की दानक है।

3 डॉ० कहेया लाल सहल का Ph D क लिए रचिन ग्रंथ राजस्थाना कहावत एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। डॉ० सहल दस शिक्षा म और भी अध्ययनरत हैं—आपक लोक साहित्य पर शाय परक लख बहुधा पत्र-पत्रिकाया म प्रकाशित हाने रत्ने हैं।

4 जापपुर क श्री जगन्नीश मिह गहलान का मारवाणी लोक-गीत सग्रह और क्यावृद्ध था मनाहर शर्मा का लाक साहित्य की सांस्कृतिक परम्परा अभिनदनीय रचनाए हैं।

5 पिलानी के श्री गणरत स्वामी और पनराम दाम गोड का गीत संकलन बिरला कालज पिलानी क पुस्तकालय म सग्रहीत है।

6 भूतपूव ससद सन्ध्या विष्टी लखिका रानी लक्ष्मी कुमारी चूडावत क राजस्थानी लोक कथाया घो-बार्ता के कई संकलन प्रकाशित हा चुक है।

7 उन्धपुर क डॉ० जनार्दनराय नागर पुरयातम मनारिया भ्राति विद्वाना क अतिरिक्त डा० दबीपाल सामर न राजस्थानी और भारतीय लाक-गीता और लाक नत्या का अभिनयात्मक संगीत म बांध कर अनुपम उपलब्धिया की हैं—आपन सम्पूर्ण जीवन लाक कलाया की खात्र और विकास म लगाकर नित्य नई उद्भावनाए की हैं जिनक पत्र-पत्रिका भारतीय लाक साहित्य और लाक नाटय एवं नत्य कलाया का अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र म न्याति प्राप्त हा रही है। डॉ० महेंद्र भानावत भी डा० सामर की पररणा स भारतीय लाक कला मण्डल की उपलब्धिया म याग द रह है।

लोक कव्या का संग्रह एक अन्य कई रचनाएँ प्रकाश में आ चुकी हैं। यहाँ प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं 'रगायन' आदि में भी महत्वपूर्ण शोध परक लेख प्रकाशित होने रहते हैं।

8 बीकानेर की डा० सुशीला ने लोक महाभारत पर Ph D के लिये शोध प्रबंध लिखा है। भारतीय विद्या मंदिर गांधी प्रतिष्ठान, बीकानेर में लोक साहित्य का कुछ संग्रह हुआ है। श्री भूलचंद पारीक आदि अन्य कई व्यक्ति भी इस दिशा में कार्यरत हैं।

श्री कामल कोठारी ने लोक कथाओं सम्बन्धी प्रथमनीय कार्य किया है। उन्हीं की सहायता से फलस्वरूप संगीत नाटक अकादमी जोधपुर द्वारा कई लोक-गीत संग्रह प्रकाशित हुए और लोक साहित्य व संगीत रिकार्ड किया गया। हाडौनी लोक साहित्य पर डा० कन्हैयालाल शर्मा का शोधग्रन्थ एक अन्य रचनाएँ उल्लेखनीय उपलब्धि है।

कलकत्ता की राजस्थान रिसर्च सोसायटी और बंगाल हिन्दी मण्डल में भी राजस्थानी लोक साहित्य का मुद्रण संग्रह है।²

डा० देवीलाल सामर के लोक कला प्रेम के फलस्वरूप लोक-नृत्य, लोक-नाट्य आदि विधाओं से सम्बन्धित प्रचुर लोक साहित्य प्रकाशित हो चुका है जिसमें उल्लेखनीय हैं—राजस्थान के लोकानुरजन राजस्थान का लोक संगीत राजस्थान के लोक नृत्य राजस्थान की लोककथाएँ और भारतीय लोक नृत्य। राजस्थान में कई पत्र पत्रिकाएँ लोक साहित्य सम्बन्धी शोध पर प्रकाशित हो रही हैं जिनसे नित्य नई शोध का विवरण प्राप्त होता है। मुख्य हैं—शोध पत्रिका मरुभारती पिलानी राजस्थान भारती बीकानेर, परम्परा जोधपुर, रगायण उदयपुर।

ऊपर वर्णित लोक साहित्य प्रेमी विद्वानों द्वारा एकलित सामग्री से बीकानेर जसलमेर गैलावाटी पिलानी, जयपुर जोधपुर भवाण और हाडौनी आदि विभिन्न क्षेत्रीय राजस्थानी लोक-गीत उपलब्ध हो सके जिनके आधार पर लेखिका ने भी अखिल राजस्थान की इस लम्बे जीवन की निधि का सर्वेक्षण करके स्वस्वात्मिक भावात्मिक सांस्कृतिक एवं तात्विक अध्ययन अपने शाब्दिक शोध राजस्थानी लोक गीत में प्रस्तुत किया है जो राजस्थान साहित्य अकादमी ने दा खण्ड में प्रकाशित किया—प्रथम शोध निबंध मात्र है और द्वितीय खण्ड में निज के संकलित तथा निबंध में उद्धृत लोक गीत।

राजस्थानी लोक साहित्य का क्षेत्र इतना व्यापक एक विशाल है कि हमारे इन प्रयासों को एक वैज्ञानिक उपलब्धि नहीं माना जा सकता। राजस्थानी लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं सम्बन्धी खोज बहुत कुछ करनी अपेक्षित है। ●●

1 राजस्थानी लोक सम्बन्धी प्रकाशित ग्रंथों और निबंधों की सूची कुछ थप पूरे परम्परा पत्रिका के लोक साहित्य अंक में प्रकाशित हो चुकी है।

डॉ० स्वगलता के
महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

- 1 साहित्य दिग्दर्शन
 - 2 मधु सचय (मवलन)
 - 3 राजस्थानी लोक गीत भाग प्रथम (शाय प्रबन्ध)
 - 4 राजस्थानी लोक गीत भाग द्वितीय (लोक गीत मवलन)
 - 5 साहित्य सौरभ (मवलन)
 - 6 नव वधू
 - 7 ससृष्ट वमव (वोड की माध्यमिक परी 11 ट्टु मवलित)
 - 8 अमिनव ससृष्ट वयाकरण
 - 9 हिंदी रचना बोध और वयाकरण
(उच्चतर माध्यमिक कक्षाया के लिय स्वीकृत)
 - 10 अमिनव धम मजरी (अप्रकाशित)
 - 11 चितन चयनिका (अप्रकाशित)
 - 12 साहित्य के आयाम (अप्रकाशित)
 - 13 धम का स्वरुप और मायतार्ये
- अनुदित -

- 1 अध्यात्म सता - स्वामी शिवानन्द की All about
Hinduism का अनुवाट
- 2 पर उपदेश कुगल बहुतेरे - ससृष्ट कहानिया का अनुवाट
- 3 योगासन